विद्वत परिषद् द्वारा समीक्षित पत्रिका
ISSN : 2454-1133

अनुग्रह ज्योति 2024

ए.एन. कॉलेज, पटना

चतुर्थ चक्र, श्रेणी 'ए+' - राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् (नैक) द्वारा पुनर्मूल्यांकित
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) द्वारा 'विशिष्ट' महाविद्यालय के रूप में रेखांकित
पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना

बिहार विभूति
डॉ. अनुग्रह नारायण सिंह

तुम बिहार के गौरव गरिमा, तुम थे देव महान ।
हे बिहार के निर्माता, लो मेरा शत्–शत् प्रणाम ।।

कॉलेज गीत

करो अनुग्रह हे नारायण,
ज्ञान की ज्योति जले...!
भासित अन्तर्मन जन-जन का,
जगमग जग कर दे ...!
करो अनुग्रह ...!

आत्म विश्वास से भरा हृदय हो,
कर्म-धर्म हो, दया, विनय हो।
सत्य बने संबल जीवन का
ऐसा मन कर दे ...!
करो अनुग्रह ...!

ऊँच नीच का भेद नहीं हो
स्वस्थ तन, अनुशासित मन हो,
विजयी हो संघर्ष हमारा
बाधा सब हर ले
करो अनुग्रह ...!

प्रो. कलानाथ मिश्र

ISSN : 2454-1133

अनुग्रह ज्योति 2024

संरक्षक

प्रो. (डॉ.) प्रवीण कुमार

प्रधान संपादक

प्रो. कलानाथ मिश्र

संपादक

डॉ. रत्ना अमृत

विद्वत परिषद्

प्रो. (डॉ.) बबन कुमार सिंह
पूर्व अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग

प्रो. चंदन प्रसाद सिंह
पूर्व अध्यक्ष, दर्शन शास्त्र विभाग

डॉ. रंग बहादुर सिंह
रसायनशास्त्र विभाग (अवकाशप्राप्त)

प्रो. प्रतीभा सहाय
हिन्दी विभाग (अवकाशप्राप्त)

संपादक मंडल

डॉ. सीमा प्रसाद

डॉ. ज्योतिष कुमार

डॉ. विद्या भूषण

डॉ. संजय कुमार सिंह

डॉ. अभिषेक दत्त

डॉ. निशा कुमारी

अनुग्रह ज्योति

राजेंद्र विश्वनाथ आर्लेकर
Rajendra Vishwanath Arlekar

सत्यमेव जयते

राज्यपाल, बिहार
GOVERNOR OF BIHAR

राज भवन
पटना–800022
RAJ BHAWAN
PATNA - 800022

13 जून, 2024

संदेश

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि अनुग्रह नारायण महाविद्यालय, पटना 18 जून 2024 को अनुग्रह बाबू की 137वीं जयंती के अवसर पर अपना 68वाँ स्थापना दिवस मनाने जा रहा है तथा इस अवसर पर महाविद्यालय की वार्षिक पत्रिका 'अनुग्रह ज्योति' का प्रकाशन भी किया जा रहा है।

आशा है, समारोह एवं पत्रिका से लोग अनुग्रह बाबू के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अवगत होकर प्रेरणा ग्रहण करेंगे। साथ ही, विद्यार्थियों को महाविद्यालय की विभिन्न गतिविधियों में भाग लेने और नयी उपलब्धियाँ हासिल करने की प्रेरणा मिलेगी।

समारोह एवं पत्रिका प्रकाशन की सफलता हेतु हार्दिक मंगलकामनाएँ।

राजेन्द्र विश्वनाथ आर्लेकर

Phone : 0612-2786100-107, Fax : 0612-2786178
e-mail : governorbihar@nic.in

अनुग्रह ज्योति

मुख्य मंत्री
बिहार

बिहार सरकार

पटना
दिनांक : 11.06.2024

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि दिनांक **18 जून, 2024** को बिहार विभूति डॉ॰ अनुग्रह नारायण सिन्हा के **137वीं जयन्ती** के अवसर पर ए.एन.कॉलेज, पटना द्वारा अनुग्रह जयन्ती-सह-स्थापना दिवस समारोह का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर वार्षिक पत्रिका ''अनुग्रह ज्योति 2024'' का लोकार्पण भी प्रस्तावित है।

स्वतंत्रता सेनानी, कुशल प्रशासक, किसान समर्थन एवं श्रमिक हितैषी, बिहार के प्रथम उप मुख्य मंत्री सह वित्त मंत्री, बिहार विभूति अनुग्रह नारायण सिन्हा के नाम पर स्थापित महाविद्यालय का गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मुझे विश्वास है कि जयन्ती-सह-स्थापना दिवस समारोह के आयोजन एवं स्मारिका के प्रकाशन से स्व॰ अनुग्रह बाबू के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विभिन्न पहलुओं को नई पीढ़ी तक पहुँचाने में मदद मिलेगी।

मैं स्व. अनुग्रह बाबू को श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य की मंगलकामना करता हूँ तथा 137वीं अनुग्रह जयन्ती-सह-68वाँ स्थापना दिवस समारोह के सफल आयोजन तथा अनुग्रह ज्योति-2024 के प्रकाशन एवं उसकी उपयोगिता हेतु अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

(नीतीश कुमार)

अनुग्रह ज्योति

Nikhil Kumar, IPS (Retd.)
Former Governor, Negaland & Kerala

"S O P A N"
Boring Road, Patna - 800 001
Tel : 0612-2531171, 0612-253217
Mobile : 99101099268
E-mail : nikhilkumar1943@yahoo.com

संदेश

अनुग्रह बाबू की भूमिका हमारे स्वतंत्रता संग्राम में अद्वितीय थी। वे बापू के पक्के अनुयायी थे और जीवन पर्यन्त उनके आदर्शों पर चलते रहे। चम्पारण के नील सत्याग्रह, जिसमें देशरत्न राजेन्द्र बाबू के साथ पाँच दूसरे बिहारी थे, से उनका आन्दोलनकारी जीवन शुरू हुआ। बापू के नेतृत्व में उन्होंने उस संग्राम में स्वयं को समर्पित कर दिया और सच्ची निष्ठा के साथ संग्राम का अटूट हिस्सा बने रहे। भारत के स्वतंत्र होने के बाद बिहार सरकार में उन्होंने प्रमुख भूमिका निभाई। आम आदमी से उनका सम्बन्ध बिहार सरकार में एक सदस्य रहते हुए भी बना रहा और उनका दरवाजे सबके लिए खुला रहा। इन्हीं सब कारणों से उन्हें बिहार विभूति की उपाधि दी गई थी और आज भी उनको लोग बिहार विभूति की उपाधि से संबोधित करते हैं। ऐसा था उनका व्यक्तित्व। उनका जन्मदिन मनाने के लिए महाविद्यालय परिवार को मैं बधाई देता हूँ।

(निखिल कुमार)

अनुग्रह ज्योति

अशोक चौधरी
मंत्री
ग्रामीण कार्य विभाग
बिहार सरकार, पटना

बिहार सरकार

☎ : 0612-2547640 (का.)
: 0612-2217234 (आ.)
: 0612-2547629 (फैक्स)

आवास :
2, पोलो रोड, पटना

पत्रांक : 73/(आ.) दिनांक : 15/06/24

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता की बात है कि आधुनिक बिहार के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले बिहार विभूति अनुग्रह बाबू के 137वीं जयंती के अवसर पर महाविद्यालय में अनुग्रह जयंती सह 68वाँ स्थापना दिवस समारोह का वृहद आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर अनुग्रह ज्योति पत्रिका का प्रकाशन भी किया जा रहा है। इस महाविद्यालय के विविध रचनात्मक तथा सकारात्मक कार्यों एवं प्रेरक गतिविधियों से महाविद्यालय के शैक्षणिक परिवेश पर अनुकूल प्रभाव पड़ रहा है।

मेरा विश्वास है कि अनुग्रह ज्योति पत्रिका में कॉलेज अध्यापकों एवं छात्र-छात्राओं की रचनात्मक क्षमताओं के साथ महाविद्यालय की उपलब्धियों का समावेशन सभी के लिए प्रेरणादायी होगा।

इस महती आयोजन एवं **''अनुग्रह ज्योति''** पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु शुभकामना देता हूँ।

अशोक चौधरी

अनुग्रह ज्योति

PATLIPUTRA UNIVERSITY

PATNA-800 020

Prof. R.K. Singh
Vice-Chancellor

E-mail : patliputrauniversity2018@gmail.com
: vc@ppu.ac.in
Website : www.ppup.ac.in

शुभकामना संदेश

पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना के लिए यह अतीव प्रसन्नता का विषय है कि अंगीभूत महाविद्यालय अनुग्रह नारायण कॉलेज, पटना द्वारा भारत के महान स्वतंत्रता सेनानी तथा बिहार के पहले उप-मुख्यमंत्री-सह-वित्त मंत्री, बिहार विभूति अनुग्रह बाबू की 137वीं जयंती सह-स्थापना दिवस मनाने जा रहा है। साथ ही इस मौके पर महाविद्यालय अपने कॉलेज की वार्षिक पत्रिका 'अनुग्रह ज्योति' का प्रकाशन भी करने जा रहा है।

मैं महाविद्यालय के स्थापना दिवस पर प्रकाशित होने वाली वार्षिक पत्रिका **'अनुग्रह ज्योति'** के प्रकाशन के लिए प्रधानाचार्य, प्राध्यापकों, शिक्षकेत्तर कर्मचारियों एवं छात्र-छात्राओं को शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ एवं उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

(प्रो. आर.के. सिंह)
कुलपति

अनुग्रह ज्योति

Prof. S.P. Shahi
Vice-Chancellor

MAGADH UNIVERSITY
NH 83, Bodhgaya - 824234 (Bihar) India
Tel : + 91 0631 2222714/2220387 (R)
Fax : + 91 0631 2221717 (R) 2200572 (O)
Ph : + 91 0631 2200495 (O)
Website : www.magadhuniversity.ac.in

पत्रांक : .....

दिनांक : 14/06/24

शुभकामना संदेश

ए.एन.कॉलेज, पटना 18 जून, 2024 को अनुग्रह बाबू कि **137वीं जयंती** तथा **68वां महाविद्यालय स्थापना दिवस** मनाने जा रहा है। इस पुनीत अवसर पर महाविद्यालय द्वारा **'अनुग्रह ज्योति'** का प्रकाशन किया जा रहा है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों, आलेखों एवं शोध-पत्रों से शिक्षकों, छात्रों एवं जन-साधारण को लाभ मिलेगा। पत्रिका किसी भी संस्था का आईना होता है जिसमें हम भूतकाल का दर्शन करते हैं, वर्तमान गतिविधियों का अवलोकन करते हैं और एक उज्जवल भविष्य के लिये किये जाने वाले प्रयासों की रूपरेखा तैयार करते हैं। महाविद्यालय अकादमिक क्षेत्र में बिहार तथा देश में अव्वल स्थान बनाये रखें यही मेरी कामना है। नैक से महाविद्यालय को A+ ग्रेड प्राप्त हुआ। आशा है कि महाविद्यालय नैक द्वारा प्राप्त ग्रेड के अनुरूप परिसर में अकादमिक, शोध, सामाजिक दायित्व आदि क्षेत्रों में अपने उत्कृष्ट कार्यों से बिहार के शिक्षा जगत में अपनी अग्रणी भूमिका में हमेशा बना रहे।

अनुग्रह ज्योति के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

Sp Shahi.

प्रो. एस.पी.शाही
कुलपति
मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

अनुग्रह ज्योति

PATLIPUTRA UNIVERSITY

PATNA

Prof. (Dr.) Ganesh Mahto
Pro-Vice Chancellor

E-mail : ganeshmahto0201@gmail.com
Email : pvc@ppup.ac.in
Mob. : +91 7979844492

शुभकामना संदेश

मुझे यह अभिज्ञात कर अतीव प्रसन्नता हो रही है कि बिहार के प्राचीन इतिहास की गौरव-गाथाओं से स्फुरित एवं युवाओं को आधुनिक ज्ञान, भारतीय संस्कार एवं संस्कार के प्रति गहरी रूचि पैदा करने के उद्धेश्य से अनुग्रह नारायण सिंह महाविद्यालय द्वारा वार्षिक पत्रिका 'अनुग्रह ज्योति' का प्रकाशन किया जा रहा है। आशा है महाविद्यालय से जुड़े छात्र, शिक्षक एवं शिक्षकेत्तर कर्मचारियों के ज्ञानवर्द्धक, सरस एवं ओजपूर्ण लेखों से इस पत्रिका की प्रासंगिकता एवं गुणवत्ता में अभिवृद्धि होगी। साथ ही साथ पत्रिका महाविद्यालय परिसर के क्रियाकलापों का साक्षी बनेगा तथा यह निश्चित रूप से एक उत्साहवर्धक एवं प्रेरणादायक कदम साबित होगा।

मैं महाविद्यालय के प्रधानाचार्य, प्राध्यापकों, शिक्षकेतर कर्मचारियों एवं छात्र-छात्राओं को इस वार्षिक पत्रिका 'अनुग्रह ज्योति' के प्रकाशन पर बधाई देता हूँ और उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

(प्रो. गणेश महतो)
प्रति कुलपति

प्रधानाचार्य की कलम से

शिक्षा जीवन के लक्ष्य की पूर्ति के लिए एक आवश्यक औजार है। महान दार्शनिक एवं शिक्षाविद डॉ. राधाकृष्णन मानते थे कि शिक्षा मनुष्य को ज्ञान प्रदान करने के साथ-साथ उसके हृदय एवं आत्मा का विकास करती है।

ए. एन. कॉलेज के प्रधानाचार्य का पद ग्रहण करने के बाद सबसे बड़ी चुनौती जो मेरे सामने थी वह यह कि नैक (NAAC) के मूल्यांकन के लिए टीम आने वाली थी। हमें और भी अच्छे ग्रेड लाने की तैयारी करनी थी। मैं आते ही पूरे मनोयोग से इस काम में जुट गया। विभिन्न विभागों में जाकर विद्वान शिक्षकों से मिला और एकमत से महाविद्यालय के सभी शिक्षक तथा शिक्षकेत्तर कर्मचारियों ने एकजुट होकर नैक (NAAC) में सहयोग देने का वादा किया। रात दिन हम सभी काम में जुट गए। इस भागीरथ प्रयास का प्रतिफल यह हुआ आज ए.एन. कॉलेज **'ए+'** से मूल्यांकित हुआ। यह एक बड़ी उपलब्धि है। बिहार और झारखंड के सरकारी महाविद्यालयों में यह प्रथम महाविद्यालय बन गया जो **'ए+'** श्रेणी से मूल्यांकित हुआ है। इसके लिए मैं महाविद्यालय परिवार के सभी सदस्यों को हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

हम पूरी निष्ठा के साथ महाविद्यालय की प्रगति के लिए कटिबद्ध हैं। हमें इस बात की प्रसन्नता है कि पूरा महाविद्यालय परिवार एकजुट होकर कॉलेज के विकास में तत्पर रहते हैं। अध्ययन-अध्यापन के साथ-साथ आधारभूत संरचना की दृष्टि से भी महाविद्यालय निरंतर विकास कर रहा है। विगत दिनों बहुउद्देशीय भवन के उद्घाटन के अवसर पर महाविद्यालय परिसर से सटे जल-परिषद वाली जमीन महाविद्यालय को हस्तांतरित करने का एक बार पुनः माननीय मुख्यमंत्री से निवेदन किया गया। मुख्यमंत्री महोदय ने कृपा पूर्वक इस कार्य के निष्पादन हेतु त्वरित कार्रवाई का आदेश वरिष्ठ पदाधिकारियों को दिया। यह कार्य भी पूर्ण होने वाला है।

परीक्षा भवन के ऊपर दो तल और बनाने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ है। निर्माण कार्य शीघ्र आरंभ हो जाएगा। इस प्रकार परीक्षा संबंधी समस्याओं का बहुत हद तक हल निकल जायेगा। बहुउद्देशीय भवन के ऊपर भी एक और तल के निर्माण का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया और शीघ्र ही वह कार्य भी आरम्भ होने जा रहा है। शीर्ष महाविद्यालय होते हुए भी यहाँ एक सुव्यवस्थित आधुनिक एजुकेशनल डिजिटल स्टूडियो का अभाव था। इस अभाव को पूरा करने के लिए एक अत्याधुनिक डिजिटल स्टूडियो का निर्माण कराया गया है। जहाँ शिक्षक अध्यापन का रिकॉर्डिंग कर सकेंगे, जो समस्त विद्यार्थियों के लिए पोर्टल पर उपलब्ध कराया जा सकता है। अध्यापन के क्षेत्र में यह एक महती उपलब्धि है।

शिक्षा के क्षेत्र में ए.एन. कॉलेज का विशिष्ट स्थान है। महाविद्यालय की वार्षिक पत्रिका **अनुग्रह ज्योति 2024** (ISSN: 2454-1133) प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष और संतोष का अनुभव हो रहा है। यह महाविद्यालय पत्रिका गंभीर बौद्धिक विमर्श का स्थल है। यह पत्रिका महाविद्यालय के ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में उपलब्धियों का मार्ग प्रशस्त करती है। इस पत्रिका में विज्ञान, मनोविज्ञान, साहित्य, समाज शास्त्र, दर्शन, राजनीति विज्ञान आदि अनेक विषयों पर गंभीर आलेख प्रकाशित हैं।

अनुग्रह ज्योति

यह कॉलेज महान स्वतंत्रता सेनानी अनुग्रह बाबू के नाम पर अवस्थित है। एक तरह से यह उनका जीवंत स्मारक है। इस महाविद्यालय की स्थापना 1956 में महान स्वतंत्रता सेनानी, दूरदर्शी राजनेता जिन्हें 'बिहार विभूति' के नाम से अभिहित किया जाता है, डॉ. अनुग्रह नारायण सिन्हा के नाम पर की गई थी। अनुग्रह बाबू मानवतावादी, प्रगतिशील विचारक एवं महान शिक्षाविद थे। वे सादगी और त्याग की प्रतिमूर्ति थे। वे दृढ़ निश्चयी और महान ख्याति के विद्वान थे। उनके नाम से अभिहित यह महाविद्यालय उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निरंतर नए आयाम एवं ऊँचाइयों को छू रहा है एवं नए प्रतिमान स्थापित कर रहा है।

हमारे महाविद्यालय के छात्रों की एक विशेष उपलब्धि हुई है कि बीसीए के छात्रों ने **रक्षा एप्प** विकसित किया है। यह एप्प महिलाओं एवं वृद्धों की आपात स्थिति में सुरक्षा से सम्बंधित है। किसी भी विषम परिस्थिति में केवल मोबाइल को हिलाने से, अथवा कोई एक बटन दबाने से उनके अपनों के पास एवं पुलिस के पास सुरक्षार्थ संदेश पहुंच जाता है। यह एक बड़ी उपलब्धि है। मैं उन छात्रों को बधाई देता हूँ और उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना भी करता हूँ।

महाविद्यालय के परिसर में बिहार विभूति अनुग्रह बाबू की एक आदम कद प्रतिमा भी लगाने की योजना है। प्रतिमा बनाकर तैयार है। उसे अंतिम रूप दिया जा रहा है और शीघ्र ही महाविद्यालय परिसर में बिहार विभूति की प्रतिमा की प्रतिष्ठा हो जाएगी।

इन्हीं उद्देश्यों से प्रेरित होकर हम बिहार विभूति अनुग्रह बाबू के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक वृत्त-चित्र का निर्माण करवा रहे हैं। हमें आशा है कि हमारे युवा उससे प्रेरणा ग्रहण कर, त्याग-बलिदान, निष्ठा, प्रतिबद्धता और जीवन मूल्य सीख पाएंगे।

'अनुग्रह ज्योति' पत्रिका का लोकार्पण हर वर्ष 18 जून को बिहार विभूति की जयंती सह महाविद्यालय स्थापना दिवस समारोह के अवसर पर होता रहा है। मैंने पूर्व में भी कहा था, बिहार विभूति की जयंती इस महाविद्यालय के लिए कोई औपचारिक दायित्व का निर्वाह करना मात्र नहीं है बल्कि यह दिन हमारे लिए संकल्प का होता है, जो हमें दृढ़ता पूर्वक कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ने की शक्ति और प्रेरणा प्रदान करता है।

इस पत्रिका में कॉलेज के विद्वान प्राध्यापकों के सुचिंतित एवं शोध पूर्ण रचनाओं का प्रकाशन किया जाता है। इस पत्रिका को विद्वत परिषद् द्वारा समीक्षित पत्रिका के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है, ताकि इसके आलेखों की स्तरीयता, विश्वसनीयता और महत्व और बढ़ सके।

मैं आशा करता हूँ कि महाविद्यालय के सभी शिक्षक, कर्मचारी और छात्र/छात्राएं कॉलेज के परचम को और ऊंचा ले जाने की जिम्मेदारी अपने कंधों पर उठाएंगे। आइए हम सब मिलकर इस संस्था को एक नई ऊंचाई प्रदान करने का प्रयास करें। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि इस विकास यात्रा में आप सदैव मुझे अपने साथ पाएंगे।

इस अवसर पर मैं पत्रिका के सम्पादक मण्डल एंव सम्पूर्ण महाविद्यालय परिवार को शुभकामनाएं प्रदान करता हूँ।

प्रो. (डॉ.) प्रवीण कुमार
प्रधानाचार्य

अनुग्रह ज्योति

Editorial

Today on 18th July, 2024 as we commemorate the 68th Foundation Day of our esteemed institution, we are not merely marking the passage of time, rather, we are celebrating a journey of dedication, resilience and unwavering commitment to excellence.

This momentous occasion coincides with the 137th birthday of the great visionary leader, Bihar Vibhuti Sri Anugrah Narayan Sinha, who has been the guiding spirit of this exceptional institution - A. N. College, Patna. The institution draws inspiration from a famous quote of Anugrah Babu, "Stand by Merit'. We express our gratitude and rededicate ourselves to the ideals of the great man.

The journey from inception to this day has been one filled with challenges, triumphs and countless moments of growth. Each milestone achieved stands as a testament to the collective efforts of our faculty, staff and students who have dedicated themselves to the pursuit of knowledge and academic excellence.

Our college was thrice accredited with 'A' Grade by NAAC in the years 2005, 2011 and 2017. A significant highlight of our journey is the recent attainment of 'A+' Grade by the National Assessment and Accreditation Council (NAAC) in 2023. This prestigious recognition reaffirms our commitment to maintaining the highest standards of quality education and academic rigour. It reflects the dedication of our institution to continuously strive for excellence in all phases of academic and extracurricular endeavours.

As we celebrate this milestone, let us not reflect only on our past accomplishments but also look forward to the future with optimism and determination. Let us reaffirm our commitment to fostering a culture of innovation, inclusivity and excellence that will continue to propel our institution towards even greater achievements.

We are thankful to all the teachers and research scholars who have contributed in bringing out this edition of the magazine. "Anugrah Jyoti" is a platform to exhibit their literacy skills and innovative ideas. It is a forum to convey to the readership the long strides that the college has taken in the recent past from humble beginnings. We are thankful to our Principal for entrusting us with the responsibility of editing this issue of "Anugrah Jyoti".

Happy 68th Foundation Day to all the members of A. N. College Family ! Together, let us continue to strive for excellence.

"Education is the passport to the future,
for tomorrow belongs to those who prepare for it today."

Dr. Ratna Amrit
Editor

Prof. Kalanath Mishra
Sr. Editor

अनुग्रह ज्योति

राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का स्वायत्त संस्थान

NATIONAL ASSESSMENT AND ACCREDITATION COUNCIL

An Autonomous Institution of the University Grants Commission

Certificate of Accreditation

The Executive Committee of the
National Assessment and Accreditation Council
is pleased to declare
Anugrah Narayan College, Patna
Srikrishnapuri, Dist. Patna, a Constituent College of Patliputra University, Bihar as
Accredited
with CGPA of 3.36 on four point scale
at A+ grade
valid up to August 01, 2028

Date : August 02, 2023

Director

EC(SC)/161/ 4th Cycle/BRCOGN12445

अनुक्रमणिका

शांति स्थापना और विवाद शमन : एक साहित्यिक दृष्टि	: प्रो. कलानाथ मिश्र	01
गणतंत्र की जननी : वैशाली (बिहार)	: प्रो. अरूण कुमार सिंह	13
Role of Mathematics in Artificial Intelligence	: Prof Shambhu Kr. Mishra	20
Chemistry in the Service of Mankind	: Dr. Anil Kr. Singh	22
Know Your Carbon Credits	: Prof. Tripti Gangwar	30
Mindfulness the way of conflict resolution	: Prof. Shailesh Kumar Singh	32
The essensce of leardership western Vis-a-Vis Indian Perspective.	: Dr. Tanya Mukherjee	37
Radiocarbon Dating	: Dr. Anju K. Gupta	41
Remarkable Achievements Awards Women Win	: Dr. Seema Prasad	44
Advancing Women's Rights through Gender Sensitization Analyzing Practices and Impact	: Dr. Henna Tabassum	47
Heritage Tree : Reconciling with Our Past and Present	: Dr. Shabana Karim	51
Capitalist Production in Digital Era	: Dr. Binod Kr. Jha	54
स्वामी विवेकानन्द का हिन्दू धर्म में योगदान	: डॉ. संजय कुमार	60
Reclamation of acidic wasteland by fly ash application -An eco friendly approach of waste disposal through legume cultivation	: Pushpa Singh	66
Psychological Factors in Climate Change Perception and Action	: Sujeet Kumar Dubey	70
Empowering Youth through National Service Scheme Highlights from NSS Special Camp 2023 of A. N. College, Patna	: Dr. Ratna Amrit Dr. Abhishek Dutta	87
Water Studies in A.N.College, Patna : Pioneering New Vistas of Interdisciplinary Research	: Prof. Nupur Bose	96
Human Values and Ethics in Higher Education	: Sushil Kr. Singh	99
Beware our mother earth is getting dehydrated	: Dr. S.P. Singh	106
Environment and Human Life	: Dr. Vinod Mandal	110

अनुग्रह ज्योति

◉ युग प्रवर्तक महात्मा कबीर	: डॉ. संजय कुमार सिंह	112
◉ सन्त कवि लक्ष्मीनाथक लोक-वेद	: डॉ. वन्दना कुमारी	115
◉ प्रगतिवाद	: डॉ. विद्या भूषण	121
◉ Role of Social Media in Electoral Politics of India	: Dr. Prabha Kumar	131
◉ स्त्री-विमर्श और इक्कीसवीं सदी का साहित्येतिहास-लेखन	: डॉ. भारती कुमारी	139
◉ Consequences of Chemical Pesticides on Human Health and Environment	: Dr. Nisha Kumari	143
◉ शांति और प्रकाश का पर्व बुद्ध पूर्णिमा	: डॉ. कुमार वरूण	146
◉ शिक्षक और प्रेरक सफदर इमाम कादरी	: डॉ. मणि भूषण कुमार	150
◉ जयप्रकाश नारायण व संपूर्ण क्रांति	: डॉ. संजीत लाल	157
◉ Hydrogen as a promising fuel for future Generation	: Dr. Ratnesh Kumar	163
◉ Russia Ukraine conflict and its impact on asia pacific	: Dr. Kausar Tasneem	166
◉ Mapping the disparities in spatial distribution of higher education institutions in Bihar	: Dr. Gaurav Sikka & Dr. Prerna Bharti	173
◉ Nurturing mental health in marriage & strategies for strengthening relationship	: Dr. Pragya Kumari	181
◉ जन कवि नागार्जुन	: डॉ. नवीन कुमार	185
◉ विकास की अवधारणा और आदिवासियों की अद्यतन स्थिति : एक तुलनात्मक अध्ययन	: डॉ. शत्रुध्न कुमार	188
◉ हीट वेव : मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव	: डॉ. कविता राज	196
◉ Gamification : An effective tool for learning	: Dr. Sweta	202
◉ Coalition Politics and its Implications for women's empowerment in India and Bihar	: Dr. Richa Gautam	207
◉ Harmonizing the Hustle : Creative solutions for work-life balance among marriage working women	: Dr. Vijyeta Kumari	211
◉ हरिशंकर परसाई का स्तम्भ लेखन अर्थात लोक शिक्षण	: डॉ. अनामिका शिल्पी	217
◉ Advantages of Online and Offline education systems	: Maya Jha	221

शांति स्थापना और विवाद शमन
एक साहित्यिक दृष्टि

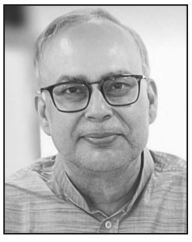

प्रो. कलानाथ मिश्र
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

अभी हाल ही में (15 मई 2024) स्लोवाकिया के प्रधानमंत्री रौबर्ट फीको की हत्या करने के उद्देश्य से 71 वर्षीय कवि जुराज सिंटुला ने गोली मार दी। वे एक कवि हैं। उनकी दो काव्य कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। फिर भी उसे बंदूक उठाने की आवश्यकता क्यों पड़ गई?

आज मानवता बारूद की ढ़ेर पर खड़ी है। विभिन्न आतंकवादी गतिविधियों और बमों के धमाकों के बीच पनपती पीढ़ी अशांत और तनावग्रस्त वातावरण में साँस लेने को विवश हैं ।

विश्व युद्ध की आशंका से पूरा विश्व आक्रांत है। रॉकेट और बमों के धमाके की भयानक आवाज और चिंगारियाँ पूरे विश्व को प्रभावित कर रही हैं। परमाणु बम की आशंका से मानवता भयाक्रांत है। रूस, यूक्रेन युद्ध, इजरायल, फिलिस्तीन युद्ध ने विश्व के देशों को ध्रुवीकरण की ओर मोड़ दिया है। हमास जैसे अनेक आतंकी संगठन पाँव पसार चुके हैं। विध्वंशक हथियारों से लैस हैं। उनका शासन मानवता को आक्रांत करके ही चलता है। अतः अंधाधुंध अत्याचार को अपना अधिपत्य स्थापित करने का आधार बना रखा है। मानवता अशांत है, भयाक्रांत है। नई पीढ़ी की संवेदनाएँ नष्ट हो रही हैं। इसका परिणाम क्या होगा? नौजवानों के लहु का मोल का हिसाब कौन देगा।

'कुरूक्षेत्र' की शुरुआत युधिष्ठिर की ओर इंगित करते हुए यूँ होती है। ज्ञात हो कि युद्ध से पूर्व अर्जुन में वीतराग हुआ था और युद्ध के उपरांत युद्धिष्ठिर में।

वह कौन रोता है वहाँ-
इतिहास के अध्याय पर,
जिसमें लिखा है, नौजवानों के लहु का मोल है
प्रत्यय किसी बूढे, कुटिल नीतिज्ञ के व्याहार काय
जिसका हृदय उतना मलिन जितना कि शीर्ष वलक्ष है'
जो आप तो लड़ता नहीं,
कटवा किशोरों को मगर,
आश्वस्त होकर सोचता,
शोणित बहा, लेकिन, गयी बच लाज सारे देश की?

अभी हाल ही में (15 मई 2024) स्लोवाकिया के प्रधानमंत्री रौबर्ट फीको की हत्या करने के उद्देश्य से 71 वर्षीय कवि जुराज सिंटुला ने गोली मार दी। वे एक कवि हैं। उनकी दो काव्य कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। फिर भी उसे बंदूक उठाने की आवश्यकता क्यों पड़ गई? प्रश्न उठता है कि क्या कलम की ताकत कमजोर पड़ गई है? क्या

परस्पर सकारात्मक विचारों को जन्म देकर विवादों पर अंकुश लगा सकने की शक्ति क्षीण हो गयी है। साहित्य वैचारिक विभन्न देशों में युद्ध की विभीषिका को कम कर विवादों को सुलझा सकती है। यह एक बहुत बड़ा सवाल है। नेपोलियन ने कहा था लेकिन रूसों ने तो तलवार नहीं उठाया था। उसने भी तो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की ही बात की थी। यदि रूसो नहीं होता तो फ्रांस की क्रांति नहीं होती। तो क्या आज रचनाकार के कलम की वह शक्ति और उनका धैर्य जवाब दे रहा है? अकबर इलाहावादी का एक शेर है,

खींचो न कमानों को न तलवार निकालो

जब तोप मुकाबिल हो तो अखबार निकालो

अनेक सवाल मन में उठते हैं। क्या समस्याओं के समाधान का बंदूक और हिंसा ही एकमात्र विकल्प रह गया है? दिनकर की वह कविता सहज ही याद आती हैं दो में से तुम्हें क्या चाहिए कलम या की तलवार-

दो में से क्या तुम्हे चाहिए कलम या कि तलवार

मन में ऊँचे भाव कि तन में शक्ति विजय अपार

अंध कक्ष में बैठ रचोगे ऊँचे मीठे गान

या तलवार पकड़ जीतोगे बाहर का मैदान

कलम देश की बड़ी शक्ति है भाव जगाने वाली,

दिल की नहीं दिमागों में भी आग लगाने वाली

अमृतराय द्वारा लिखित 'प्रेमचंद : कलम का सिपाही' जीवनी विधा की परिपक्वता की पहचान है। प्रेमचंद जैसे रचनाकार का सर्जनात्मक व्यक्तित्व जीवन और साहित्य की खाई को पाटने वाला अथक प्रयास है।

यहाँ कलमकार को सिपाही कहकर संबोधित किया गया है। लेकिन इस सिपाही के हाथ में बंदूक नहीं होता, बम नहीं होता है। इस सिपाही के पास शब्द होता है और कलम होता है, जो मनुष्य को जीवन जगत से परिचय कराने में समर्थ होता है। साहित्य जीवन के मूल्यों को जनमन में साझा करता है।

रोज समाचार पत्रें और टेलीविजन चैनल पर हत्या, बलात्कार एवं जघन्य अपराधों को देखकर मनुष्य उदासीन होता जा रहा है। उनके भीतर संवेदना की सरिता सूखती जा रही है। बमों के धमाकों से चिथड़े हुए शवों को देख अब हमारा दिल नही पसीजता, अपराध, बलात्कार की शिकार हुइ मासूमों के हृदय विदारक चीखों और उनकी बुझी आँखों को देख हमें मनुष्यता पर ग्लानि नहीं होती? आखिर क्यों यह स्थिति उत्पन्न हुई? क्यों मनुष्य ही मनुष्य के खून का प्यासा हो गया है? संवेदना की सुधा क्यों विलुप्त होती जा रही है?

क्या साहित्य में वह सामर्थ्य है कि वह संवेदना जग सके? भारतीय विचारकों ने एकमत से साहित्य को जीवन की सदवृत्तियों का विकास कर सुंदरतम जीवन की रचना में सहायक माना है। जीवन सत्य को अभिव्यक्त करने वाला साहित्य शाश्वत और सार्वभौम होता है। वहीं अरस्तु का भी मत है कि काव्य व्यापक मानवीय भावना को उदबुद्ध कर जीवन मूल्य को विकसित करने में सहायक होता है। भारतीय आचार्य ने भी निर्विवाद रूप से यह माना है कि काव्य मानव की भाव दशा और चित्त का परिष्कार करता है। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप जीवन दृष्टि में जो बदलाव आया और विज्ञान के विकास के साथ बौद्धिकता के प्रति जो आग्रह बढ़ा उसमें यह आशंका व्यक्त की जाने लगी की भावना प्रधान काव्य का भविष्य में कोई उपयोगिता नहीं रह जाएगी। पीकॉक ने तो यहाँ तक मान लिया था कि विज्ञान के इस युग में काव्य केवल बर्बरता का अवशेष है। इसकी प्रतिक्रिया में शेली ने काव्य के

संरक्षण में 'ए डिफेंस आफ पोएट्री' लिखकर इस विचार का खंडन किया। मैथ्यू अर्नाल्ड ने कहा काव्य दर्शन का ही नहीं विज्ञान का भी स्थान लेगा क्योंकि उसका प्रयोजन केवल आनंद देना ही नहीं है, वह जीवन की आलोचना है। साहित्य और विज्ञान एक दूसरे के पूरक हैं। साहित्य जीवन सत्य और युग सत्य का सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति करता है। इस दृष्टि से वह समन्वयवादी विचारों को जन्म देने में सहायक हो सकता है। वह प्रयास साहित्य को करना है।

मैं अपनी ही कविता की कुछ पंक्ति यहाँ उद्धृत करना चाहूँगा -

घृणा द्वेष के दलदल में
मानवता है मृत्यु सैया पर
संवेदना की सुधा मनुज में
कुछ मैं भरता हूँ
तुम भी कुछ भरते रहे ।

सृष्टि के प्रथम काव्य की उत्पत्ति की भी तो यही कथा है। प्रेम क्रीड़ा रत क्रौंच पक्षी के जोड़े में से एक को निषाद द्वारा मार गिराए जाने पर वाल्मीकि इतने आहात हुए, उनके भीतर इतनी संवेदना जागृत हुई कि उनके मुख से स्वतः लयात्मक श्लोक फूट पड़ा था -

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वंगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकंवधीः काममोहित।

आज वह संवेदना कहाँ खो गई है? भर्तृहरि के नीतिशतक का यह वाक्य साहित्य की महता दर्शाता है ।

साहित्य-संगीत कलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः।

क्या सच में हम पशुता की ओर बढ़ रहे हैं? तभी तो दिनकर कहते हैं -

झड़ गई पूंछ पशुता की
रोमांचक झरना बाकी है
बाहर-बाहर तन संवर चुका,
मन अभी संवरना बाकी है।

संवेदना के ह्रास से मनुष्य विचारों से संकुचित होता है। असंतोष विवाद को जन्म देता है। इन सबके जड़ में है विवाद है, असंतोष है। असंतोष कब होता है जब हमारी ईक्षाएँ अनंत हो। हमारी भूख मिटे ही नहीं। इसी लिए तो कबीर ने कहा -

साईं इतना दीजिए, जामे कुटुंब समाए, मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाए।

आज छोटी से छोटी बातों पर विवाद जन्म लेता है। लोग आक्रोशित हो जाते हैं, मरने मरने को तैयार हो जाते हैं। भाई-भाई में विवाद, जाति-जाति में विवाद, स्त्री -पुरूष में विवाद, क्षेत्र-क्षेत्र में विवाद, प्रांत- प्रांत में विवाद और राष्ट्र-राष्ट्र में विवाद। विवाद युद्ध को जन्म देता है। विचार पीछे रह जाता है।

क्या है इस आतंक की समस्या का स्थाई समाधान है? क्या हत्या से समाधान हो सकता है? हत्या, आतंक प्रतिशोध की भावना को जन्म देता है। आतंक से आतंक ही जन्म लेता है। वह किसी समस्या का समाधान नहीं हो सकता। तो फिर रास्ता क्या है? इन्हीं विचारों के बीच हम साहित्य की ओर देखते हैं। क्या साहित्य और कला

समाधान है? किन्तु उसके पहले हम जानते हैं कि विवाद के कितने अस्तर हैं? कौन-कौन से कारण हैं? उसका विश्लेषण करने के उपरांत साहित्यिक में झांकते हैं।ृभौगोलिक दृष्टि से विवादों के कई स्तर बनते गए हैं।

- **क्षेत्रीय विवाद**
- **प्रांतीय विवाद**
- **राष्ट्रीय स्तर के विवाद**
- **अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर विवाद।**

विवादों की श्रृंखला पर श्रृंखला बनती जा रही है । हम यहॉ विवदों के स्तर को नीचे दिए गए चित्र में देखने की चंष्टा करेंगे।

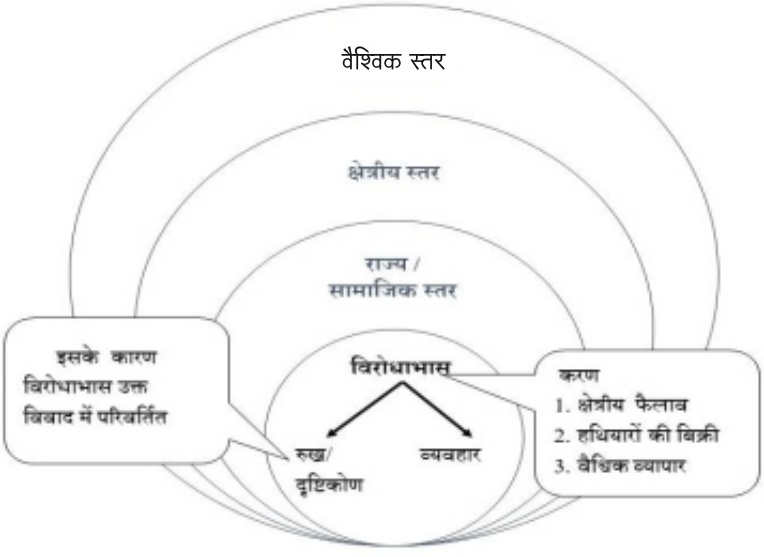

आधुनिक सुख-सुविधाओं के दौड़ में मनुष्य आत्मकेन्द्रित होता जा रहा है। बढ़ती आबादी के साथ स्पर्धा और संघर्षो में फॅसे आदमी के सामने केवल अपना दृष्टिकोण होता है। वह किसी वस्तु को औरों के नजरिए से देखना नहीं चाहता है। हर व्यक्ति हर काम अपने शर्त पर ही करना चाहता है। ऐसे में विवादों का बढ़ना स्वाभाविक है ।

हमारी संस्कृति में इसी लिए '**संतोषम परमं सुखं**' कहा गया था। किंतु संतोष के सुख का स्वाद लोग भूल गए हैं।

इतिहास गवाह है कि साहित्य में इतनी शक्ति है कि वह बड़ी से बड़ी क्रांति को जन्म दे सकता है। और विवादों को सुलझा सकता है। हमें इस बात को गम्भीरता पूर्वक समझने की आवष्यकता है कि जब भी कोई आतंकी गठबन्धन हमला करते है अथवा वारदातों को अंजाम देते हैं तो वहॉ वे अपना एक पर्चा छोड़ते है जो उनके विचारधाराओं को दर्शाता है। वह पर्चा प्रकारान्तर से उनके कार्यकर्ताओं की शक्ति बन जाती है। उसी तरह साहित्य अपनी सकारात्मक शक्ति का उपयोग कर बड़े से बड़े विवादों को भी सुलझा सकती है, एवं उसके लिए आम जन में भाव जगा सकती है। समाज में जो बड़े से बड़े परिवर्तन हुऐ उसके पिछे शब्दों और वाक्यों की शक्ति है। चाहे वह समाचार, संचार माध्यम का क्षेत्र हो अथवा साहित्य की महत्वूपर्ण रचनाऐ हों। हॉ समाचारों का प्रभाव तीव्र किन्तु

अल्पकालीन होता है किन्तु साहित्य का प्रभाव धीरे किन्तु दीर्घ कालीन होता है। विवाद समझौते में साहित्य व प्रभाव तथा उसके स्वरूप को समझने के लिए विवादों के कारणों, उसके प्रकार एवं सुलझाने के तरीको को जानना आवश्यक है और उन पस्थितियों को भी गंभीरतापूर्वक समझने की आवश्यकता है जिनमें यह विवाद उत्पन्न होते है।

महाभारत में युद्ध टालने के लिए कृष्ण जब शांतिदूत बनकर हस्तिनापुर जाते हैं और धृतराष्ट्र के सामने शांति प्रस्ताव रखते हुए कहते हैं कि तुम यदि पांडवों को आधा राज्य नहीं दे सकते, तो केवल 5 ग्राम ही दे दो।

राष्ट्र कवि दिनकर ने रश्मिरथी में इस प्रसंग का बहुत ही सुंदर विवेचन और वर्णन किया है-

मैत्री की राह दिखाने को
सब को सुमार्ग पर लाने को
दुर्योधन को समझाने को
भीषण विध्वंस बचाने को
भगवान हस्तिनापुर आए
पांडव का संदेशा लाये
दो न्याय अगर तो आधा दो
पर इसमें भी यदि बाधा हो
तो दे दो केवल पाँच ग्राम
रखो अपनी धरती तमाम
हम वहीं खुशी से खायेंगे
परिजन पे असी ना उठाएंगे
दुर्योधन वह भी दे ना सका
आशीष समाज की न ले सका
उलटे हरि को बाँधने चला
जो था असाध्य साधने चला
जब नाश मनुज पर छाता है
पहले विवेक मर जाता है।

विवेक के मरने से विवाद जन्म लेता है। विवादों का जन्म व्यक्ति के मस्तिष्क में होता है। इसके अनेक परिधि है। दो व्यक्तियों में, पति-पत्नी में, भाई-भाई में, दो समुदायों के बीच, दो क्षेत्रों में अथवा दो राष्ट्रों में विवादों के जन्म लेने की अनेक परिस्थितियॉ हो सकती है। यथा

- **असुरक्षा की भावना विवादों को जन्म देते हैं।**
- **अव्यवस्था की स्थिति में विवाद उत्पन्न होते हैं।**
- **अन्याय विवादों को जन्म देते है।**

असुरक्षा : असुरक्षा की स्थिति मनुष्य को भीतर से सशंकित रखता है। वह अपनी सुरक्षा के लिए अपने ईर्द - गिर्द एक काल्पिनिक दिवार बनाकर रखता है। यदि कोई विचार अथवा धारणा उसके इस काल्पनिक दिवारों का अतिक्रमण करना चाहती है तो वह व्यक्ति अतिशय उग्र हो उठता है ।

अव्यवस्था : अव्यवस्था की स्थिति में मनुष्य अनेक कारणों से तनाव ग्रस्त रहता है। रोजमर्रे के जीवन और

संघर्षों के बीच आधार भूत आवश्यकताओं, सामाजिक सरोकारों के कारण उसका संघर्ष और जटिल हो जाता है। जिसके कारण अनेक विवादों का जन्म होता है ।

अन्यायः अन्याय वह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि मनुष्य आपस में सद्भाव और समानता तथा आत्म सम्मान के साथ समाज में रहना चाहता है किन्तु जब समाज द्वारा स्थापित न्याय प्रक्रिया पर उसे विश्वास नहीं होता तो वह न्याय ढूंढने का अपना पृथक रास्ता अपना लेता है। यहँ दिनकर की यह उक्ति प्रस्तुत करना समीचीन होगा।

''शांति नहीं तबतक जबतक सुख भाग न नर का सम हो
नहीं किसी को बहुत अधिक हो नहीं किसी को कम हो।''

कुरुक्षेत्र युद्ध का परिणाम हमेशा अवसाद भरा होता है। कोई जीते कोई हारे अंततः मानवता हारती है। मनुष्य अवसाद से भर जाता है। कुरुक्षेत्र की पंक्तियां इसी परिणाम की ओर संकेत करता है।

भीष्म ने कहा था,
गुरु द्रोण ने कहा था,
इसी अन्तरूपुर में
आकर कृष्ण ने कहा था -
श्मर्यादा मत तोड़ो
तोड़ी हुई मर्यादा
कुचले हुए अजगर-सी
गुंजलिका में कौरव-वंश को लपेट कर
सूखी लकड़ी-सा तोड़ डालेगी।'

इस प्रकार ऐसे अनेक दृष्टांत दिया जा सकता है। मै यहाँ विवादों के मानसिक कारणें को जानना चाहेंगे-

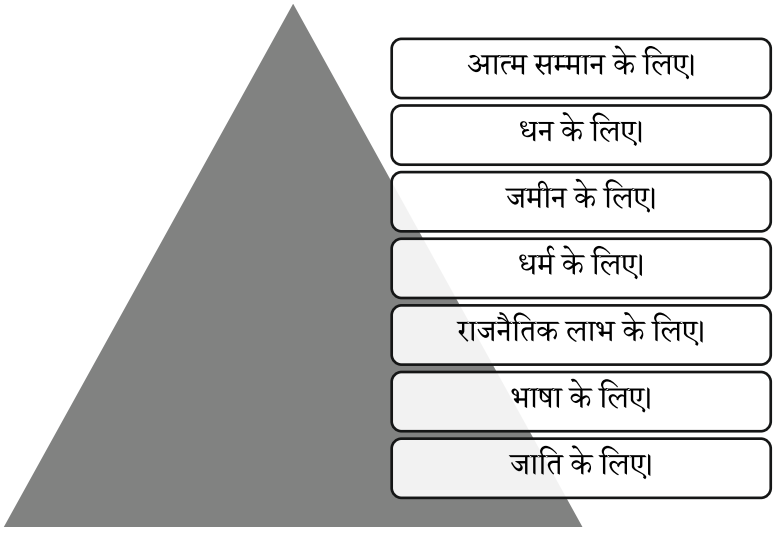

इस पर भी विचार करना चाहेंगे कि विवादों के निबटारे में साहित्य का उपयोग कैसे किया जा सकता है। इस प्रकार विवाद के अनेक मानसिक कारणों का जन्म होता है ।

भावत्मक स्तर पर विवादों के कई प्रकार हो सकते हैं ।

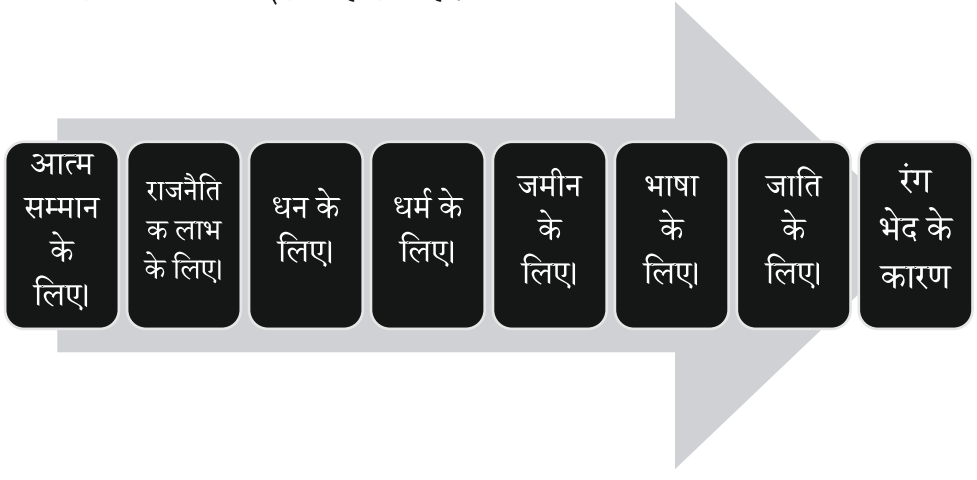

हमने पूर्व में कहा कि विवादों का जन्म मनुष्य के मस्तिष्क में होता है। वह क्रमशः जटिल और जटिलतर होता जाता है। यदि विवादों को जटिल होने के पूर्व ही सुलझा दिया जाये तो विवाद खतरनाक हो ही नहीं सकते। हसरत चिराग हसन का एक शेर है -

गैरों से कहा तुमने, गैरों से सुना तुमने

काश कुछ हमसे कहा होता, कुछ हमसे तो सुना होता।

परिवार से लेकर राजनयिक (डिप्लोमेटिक) स्तर तक संवाद हीनता बड़ी समस्याओं को जन्म देता है। अतः संवाद कायम रखना बड़ी जिम्मेदारी होती है। इससे बहुत हद तक समस्याओं का समाधान संभव है।

विवाद को अनुकूल जमीन न मिले तो भी विवाद नहीं पनपेंगें। तात्पर्य यह है कि विवादों का मनुष्य के संवेदना के साथ सीधा सम्पर्क है। संवेदनशील मनुष्य विवादों से अत्याधिक प्रभावित भी होता है। और उसी तरह संवेदना जताने पर वह शांत भी हो उठता है ।

निदा फाजली का एक शेर है'

दुश्मनी लाख सही खत्म न कीजे रिश्ता

दिल मिले या न मिले हाथ मिलाते रहिए ।

राजनयिक स्तर पर यह बहुत काम करता है। मनुष्य के भीतर छिपी इन भावनाओं को देखें तो हमें कई ऐसे कारण नजर आयेगें जो हमे यह बतलाता है कि मानसिक हालातों के कारण अक्सर छोटे-छोटे विवाद जन्म लेते है जो कालान्तर में विकराल रूप ग्रहण कर लेते है। हम कुछ ऐसे मानसिक भावों का विषलेषन करना उचित समझते है।

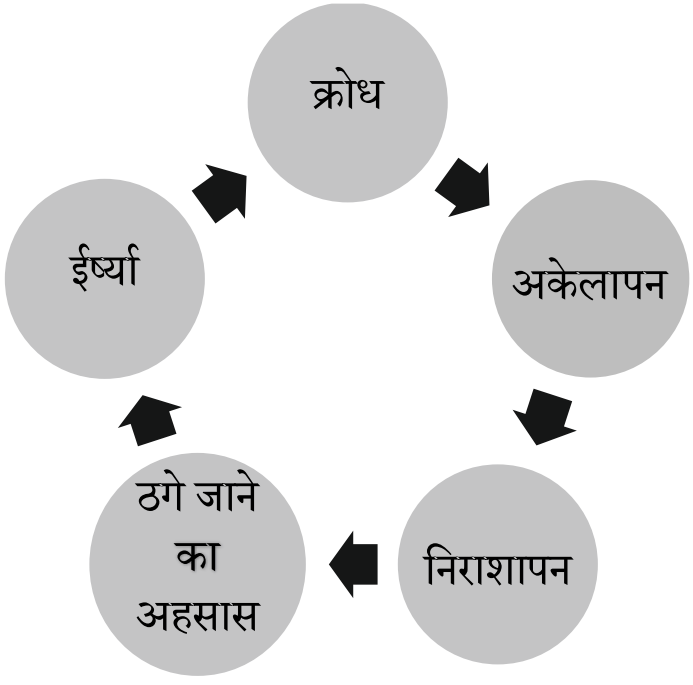

क्रोध : व्यक्ति क्रोध में है और उस समय यदि कोई आपसे समान्य सा प्रष्न अथवा समस्या भी रखता है तो आप आवेष में आ जाते है जो दूसरो को नागवार लगता है। इस प्रकार विवादों का प्रारम्भ हो सकता है।

ईर्ष्या : कई बार ऐसा होता है कि हम विवादों को अकारण ही जन्म देते है। आ बैल मुझे मार वाला सिद्धांत। एक दृष्टांत इस प्रकार दिया जा सकता है कि एक परिवार शांन्तिपूर्ण ढंग से रह रहा है और पडोस के घर में नया टेलीविजन आ गया। पहले घर में नहीं था अब यहीं ईर्ष्या का जन्म होता है। जो बाते उन दोनों परिवारों के बीच पहले सहजता से ली जाती थी आज उन विषयों पर विवाद शुरू हो गया। वस्तुतः हम अपने दुखों से अधिक दूसरे के सुखों से परेशान रहते है।

अकेलापन : आज के भागदौड़ और प्रोफेशनल जीवन में हम भीड़ में भी अकेले नजर आते है। अपने काम काजी जिन्दगी में अनके वाध्यताओं के कारण हम अकेले परिवार से प्रथक रहने को मजबूर है ऐसे में हमारी घुलने मिलने की क्षमता धीरे- धीरे अन्जाने ही विलीन हो जाती है हमारी सामंजस्य क्षमता कम हो जाता है। व्यक्ति छोटी-छोटी बातों पर भी असामान्य रूप से प्रतिकृत होने लगता है और परिणाम विवाद।

ठगे जाने का अहसास : व्यक्ति (स्त्री अथवा पुरूष) के जीवन में ऐसे कई अवसर आते हैं जब उसे अहसास होता है कि किसी विषेश व्यक्ति के साथ जो उसका परस्पर भरोसा का भाव था उसमें किसी एक के किसी कार्य से टूट जाता है। ऐसे में ठगे जाने और छले जाने का भाव उसके मन में घर कर जाता है उसके विश्वास पर आघात लगता है और उस व्यक्ति का व्यवहार तटस्थ न रहकर पूर्वग्रह से पूर्ण हो जाता है और विवाद उत्तपन्न होता है। नीरज की एक पंक्ति है -

अनुग्रह ज्योति

देखते ही देखते कितने बदल जाते हैं लोग
हर कदम पर एक नए साँचे में ढ़ल जाते हैं लोग
किजिए किसके लिए गुमष्ताए जन्नत की तलाष
मिट्टी के ही खिलौने से बहल जाते हैं लोग।

निराशापन : विभिन्न कारणों से निराश व्यक्ति भी विवादों में उलझ जाते है। उन्हें लगता है कि किसी और का काम इसलिए हो गया क्योंकि वह उस अधिकारी से परिचित था मेरा इसलिए नहीं हुआ क्योंकि मेरे पिछे कोई नहीं था। अथवा किसी असफलता की स्थिति में ऐसे अनेक अहसास है जो विवादों को जन्म देते है। ये सभी कारण मनोवैज्ञानिक है। इसी प्रकार अन्य अनेक ऐसे कारण है जो विवाद को जन्म देते है ।

यहाँ यह उधृत करना समीचीन होगा कि अंतर्राष्ट्रीय विवाद मात्र 20% ही होता है। सर्वाधिक विवाद, राष्ट्रों के भीतर ही होते है। निर्विवाद रूप से विवाद के साथ विकास का सपना नहीं देखा जा सकता है। जहाँ विवाद होगा वहाँ विकास नहीं हो सकता और जब तक विकास नहीं होता तरह-तरह के विवाद जन्म लेते रहेगें। धर्मयुग के संपादक के रूप में ख्यातिलब्ध धर्मवीर भारती ने युद्ध के मोर्चे पर जाकर, सैनिकों, मुक्तिवाहिनी के जवानों, सेना के आला अफसरों आदि के साथ संग्राम के अंतिम 10 से 15 दिन जिस तरह गुजारे, उसी का शब्द चित्र है 'युद्ध यात्रा'। इस लेख में वे कहते हैं -

"भारतीय होने के नाते आज सारे संसार के समक्ष मैं सर ऊंचा करके पूछ सकता हूं कि है कोई ऐसा देश, जिसके जवानों ने बिना अपना कोई स्वार्थ आरोपित किये अपने बन्धु देश की मुक्ति के लिए उसकी धरती को अपना रक्तदान किया हो?"

विकास का बीज शांति के जमीन पर ही अंकुरित हो सकते है। वर्तमान समय के लिए यह एक ज्वंलत प्रश्न है कि विवादों को शान्त और संतुलित कैसे रखा जा सकता है। उसे नियंत्रण में कैसे रखा जाये? ताकि उसके गंभीर परिणामों से बचा जा सके। विश्व भर के बुद्धिजीवी आज इन प्रश्नो के उत्तर ढूंढने में लगे हैं।

साहित्यकार भी अपनी दृष्टि से इन विषयों पर विचार कर रहे हैं। विशेष रूप से समाजशास्त्री, राजनीति शास्त्री, मानव शास्त्री, मनोवैज्ञानिक आदि विवाद निबटारा के विभिन्न सिद्धांतों और उसके समाधान के विभिन्न उपाय ढूँढ़ने में लगे हैं। निश्चय ही साहित्यकार भी अपनी दृष्टि से इन समस्याओं को देखते रहे। वस्तुतः इस कार्य में साहित्य, संस्कृति, कला एवं संगीत आदि के महत्वपूर्ण योगदान हो सकते हैं और इसे अधिक उपयोगी बनाने की आवश्कता है । और इस संबंध में अनेक विचार सामने आते है । हम विभिन्न विचारों पर एक दृष्टि डालें-

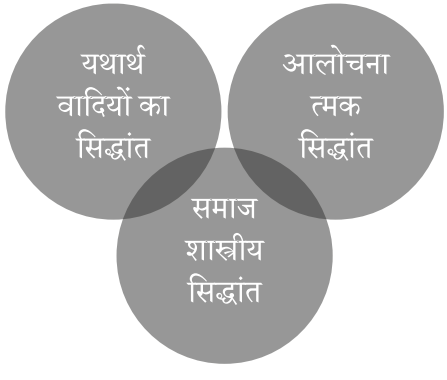

अनुग्रह ज्योति

कुछ यथार्थ वादियों की दृष्टि है कि कुछ विवाद ऐसे होते है जिनका निबटारा नहीं हो सकता है अतः व्यवस्थित रूप से उसे शान्त रखा जा सकता है। और अधिक उग्र होने से रोका जा सकता है ।

आलोचनात्मक सिद्धांत के अनुसार विवाद सुलझाने का मुद्दा यक्तिगत विचारों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। इनका मानना है कि सब कुछ सापेक्ष है। अतः तुलनात्मक दृष्टि से किसी विशेष परिस्थिति से अनुरूप् इसका समाधान हो सकता है ।

यदि हम इसे एक समाज शास्त्रीय के नजरिए से देखें तो उनका मानना है कि विवाद तो सुलझने के लिए ही होते है सभी प्रकार के विवाद सुलझ सकते है। यह आशावादी दृष्टि है ।

समय के साथ विश्व भर में विवाद समझौते का शान्ति पूर्व तरीके भी आजमाए गए है और गोली, बंदूक तथा संगीनों के सहारे भी विवादों को सुलझाने की कोशिश की गई है। किन्तु गंभीरता से देखने पर यह प्रतीत होता है कि आक्रामक तरीके से सुलझाये गये विवाद समय की कसौटी पर सही नहीं उतरे है। बहुत से मामलों में विवाद कुछ क्षण के लिए थमा भी है तो वह कुछ ही दिन बाद और खतरनाक तरीकों से उभरे हैं ।

शान्ति के गाँधीवादी तरीके आक्रामक तरीकों से अधिक कारगर सिद्ध हुए है। चाहे वह भारत में हो अथवा विश्व के किसी भी देश में। वस्तुतः गॉधी ने सत्य और न्याय के तरीकों को महत्व दिया है ।

कुछ परिस्थितियों में विवाद बढ़कर कितने भयानक हो सकते है, इसका एक भयानक रूप हमे 9/11 (नवम्बर) को देखने को मिला। जब अमेरिका जैसे शक्तिशाली देश में उसी के विमान को बमों की तरह उपयोग करते हुए आंतकवादियों ने उसके प्रतिष्ठित वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर को मलवे के ढ़ेर में तब्दील कर दिया। पहले शिकायत फिर विवाद, फिर उग्रविरोध, परिणाम आतंकवादी गतिविधि। आज आतंकवादियों के निशाने पर भारत सहित पूरा विश्व है। हम सभी इस त्रासदी को झेलने के लिए मजबूर है। ऐसें में हमे साहित्य की भूमिका और अहम दिखती है कुछ विचारकों का यह मानना है कि जब व्यक्ति इस हद तक अपने आतंकी लक्ष्यों के प्रति सचेष्ट हो जाते है कि वे मानव बम के रूप में मरने को तैयार हो जाते है, ऐसे में हिंसा और गोलियों से आतंक को नहीं रोका जा सकता। शांति की राह ही एक मात्र रास्ता दिखता है।

गाँधी जी ने कहा था कि शांन्ति सच्चाई से आती है और सच्चाई न्याय से। गाँधी कहा करते थे आप जब भी कोई काम करें तो यह ध्यान में रहे कि उससे देश के सबसे गरीब को क्या लाभ हो सकता है । जब तब सबके लिए भोजन, वस्त्र, आवास की व्यवस्था नहीं होती लोगों के भीतर एक आक्रोश बना रहेगा ।

मानव वैज्ञानिकों का मत है कि मनुष्य स्वभावतः उग्र होता है। किन्तु वह एक समाजिक प्राणी है। उसे समाज की आवश्यकता है। और समाज उग्रता से नहीं स्थापित किया जा सकता है। अतः मनुष्य ने संस्कृति का आविष्कार किया है। ताकि वह सहयोग पूर्ण भावना से शान्ति पूर्वक रह सके। संस्कृति ही हमें अन्य जीवों से पृथक करती है। यह विवादों को नियंत्रित करती है ।

कहानियाँ और कविताएँ हमें हानि, असफलता और उत्तेजनाओं को सहन करने हेतु दृष्टांत प्रस्तुत करते है। साहित्य मनुष्य की भावनाओं, विचारों को प्रतिबिम्बित करने का सबसे सार्थक और प्रभावी माध्यम है। अंग्रेजी के प्रसिद्ध आलोचक ए.सी. बेडले के अनुसार कविता अनुभूतियों, ध्वनियों, चित्रों, विचारों, भावनाओं की श्रृखंला है जिससे होकर पाठक पढ़ने के क्रम में गुजरता है।

हिन्दी की प्रसिद्ध कवियित्री महादेवी ने कहा है कि

"साहित्य जीवन का अलंकार मात्र नहीं है वह स्वयं जीवन है, साहित्यकार सृजन के क्षणों में उस जीवन को जीता है और पाठक पढने के क्षणो में" ।

मेरी दृष्टि में विवादों को अत्याधिक तर्क से निबटाया नहीं जा सकता क्योंकि विवाद के समय जो मनोवृत्त होती है वह तर्को को समझने के लिए प्रस्तुत नहीं रहती। तर्क वितर्क के लिए अनुकूल मन स्थिति चाहिए जो लड़ाई के समय नहीं होता। ऐसे में कई बार विवाद के समय कोई भी पक्ष किसी प्रकार की मध्यस्थता स्वीकार नहीं करना चाहता ।

शक्तिशाली होने का दर्प और दम्भ विवेक हर लेता है। वह अपने फायदे और नुकसान की गणना भी सही तरीके से नहीं कर पाता। दूसरे को नीचा दिखाना ही उसका एकमात्र उद्देश्य बन जाता है। इसके लिए शक्तियों का दुरुपयोग करना आम सी बात हो गई है। कुंवर नारायण की एक कविता है फौजी तैयारी उसका यह अंश देखें-

कामयाबी का पक्का सबूत है
कि बंदूक हाथ में लेते ही
हमें चारों तरफ दुश्मनों के सिर
अपने आप नजर आने लगते।

यदि अंतर्राष्ट्रीय दबाव अथवा अन्य कारणों से युद्ध अथवा आंतकी संगठन के साथ मध्यस्थता की स्थिति बनती है तो ऐसी स्थिति में यह देखा जा सकता है कि दोनों पक्षों के लोग उसके प्रति उदासीन रहते है। ऐसी परिस्थिति में साहित्य का भली भाँति उपयोग किया जा सकता है। जो जनमानस के बीच एक संतुलित धैर्य की मनोवृति उत्तपन्न करने में सहायक सिद्ध हो सकता है। तथा विवादों को अहिंसात्मक तरीके से सुलझाने में कारगर हो सकता है। दोनों पक्षों के मन में संवेदना उत्पन्न कर सकता है ।

कुछ दीर्घ कालीन विवादों की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। कई बार विवाद के समय कोई भी पक्ष किसी प्रकार की मध्यस्थता स्वीकार नहीं करना चाहता। यदि अंतर्राष्ट्रीय दबाव अथवा अन्य कारणों से युद्ध अथवा आंतकी संगठन के साथ मध्यस्थता की स्थिति बनती है तो दोनों पक्षों के लोग उसके प्रति उदासीन रहते है। हमें ऐसे विवादों के लिए एक पूरी पीढ़ी तैयार करना होगा। समय लगेगा ही। यह एक दिन में नहीं हो सकता। किन्तु असंभव बिल्कुल नहीं है।

धर्मवीर भारती अंधा युग में साफ शब्दों में रहते हैं-
यह रक्तपात अब कब समाप्त होना है
यह अजब युद्ध है नहीं किसी की भी जय
दोनों पक्षों को खोना ही खोना है
अन्धों से शोभित था युग का सिंहासन
दोनों ही पक्षों में विवेक ही हारा।

कार्य कठिन है किन्तु शांति के दाम पर मंहगा नहीं कहा जा सकता। हमें इन विषयों पर गंम्भीरता से सोचने की

आवश्यकता है।

यहां यह भी स्पष्ट कर देना चाहूंगा कि-शांति का मतलब पलायन नहीं होता। शांति का मतलब कायरता भी नहीं मानना चाहिए, किंतु अपने शक्ति से मदान्द्ध होकर विश्व पर अपना वर्चस्व स्थापित करने का भाव, रक्त बहाकर मन को शांत करने की भवना के पीछे अपने छद्म अहंकार की तुष्टि ही होती है। इसे कभी स्वीकार नहीं जा सकता। आत्मरक्षार्थ शस्त्र उठाना ही पड़ता है, न्याय और सत्य के लिए दंड विधान भी है। किंतु जब निर्दोषों का खून बहाया जाता है तो मानवता हारती है।

विश्व में शांति स्थापना का महती दायित्व समृद्धि शैली, शक्ति संपन्न, विकसित देशों पर ही अधिक है। उन्हें अपनी महती जिम्मेदारियों के प्रति जागरूक होना होगा। कभी-कभी थोड़ा सा धैर्य धारण कर लेने से विवाद टल जाता है। मैं तो यही कहूंगा क्षमा शक्तिशालियों का ही श्रृंगार है।

क्षमा शोभती उस भुजंग को

जिसके पास गरल हो

उसको क्या जो दंतहीन

विषरहित, विनीत, सरल हो।

अंत में सकारात्मक भाव और आशा के साथ मैं भी जगनियंता से पूछते हुए अपनी बात कुरुक्षेत्र की इन्ही पंक्तियों से समाप्त करूँगा -

धर्म का दीपक, दया का दीप ,

कब जलेगा, कब जलेगा, विश्व में भगवान?

कब सुकोमल ज्योति से अभिसिक्त

हो , सरस होंगे जली - सूखी रसा के प्राण?

गणतंत्र की जननी वैशाली (बिहार)

प्रो॰ अरूण कुमार सिंह
अध्यक्ष
मनोविज्ञान विभाग
पाटलिपुत्रा विश्वविद्यालय

वैशाली का सर्वप्रथम उल्लेख 'वाल्मीकि रामायण' के 'बालकांड' में मिलता है, कई पुराण ग्रंथों में भी इसकी कथा कही गयी है। महाभारत युद्ध के बाद भारत में जिन गणराज्यों की स्थापना हुई उनमें वैशाली का 'वज्जी संघ' सर्वाधिक शक्तिशाली था। वैशाली को इक्ष्वाकुवंशीय राजा विशाल ने बसाया था, जो वज्जी संघ के गणतंत्रात्मक प्रणाली की राजधानी थी। जातक ग्रंथों में लिच्छविगण के सात हजार सात सौ सात राजाओं के वर्णन उपलब्ध है।

वर्त्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व में राज्य शासन प्रणाली के अर्न्तगत प्रजातंत्र, लोकतंत्र या गणतंत्र को सर्वाधिक महत्ता प्राप्त हो चुकी है। आज विश्व के अधिकांश देशों में स्थापित गणराज्य लोकतांत्रिक व्यवस्था के अनुरूप ही कार्यरत है। भारत स्वयं एक लोकतांत्रिक गणराज्य है। गणराज्य या गणतंत्र सरकार का वह स्वरूप है, जिसे देश का एक सर्वश्रेष्ठ विषय माना जाता है, न कि किसी की निजी संस्था या सम्पत्ति। गणतंत्र में व्यक्ति नागरिक निकाय का प्रतिनिधित्व करता है और किसी सर्वमान्य संविधान के तहत विधि के नियम के अनुसार प्रदत्त शक्ति का उपयोग करता है। प्राचीन काल से ही भारत में इस अवधारणा का समृद्ध आधार स्पष्टतः देखा जा सकता है। विडम्बनास्वरूप भारत की गुलामी के कारण इस संकल्पना को औपनिवेशिक दृष्टि से तथाकथित विकसित चिन्तन एवं शिक्षा ने इसकी महत्ता को धूमिल कर दिया है। यूनान के साथ पश्चिम की सोच ने भारतीय शासन की प्राच्य निरंकुशता को प्रचारित करने का कुत्सित प्रयास किया।

वस्तुतः, गणतांत्रिक सरकार या शासन का अभिप्राय राज्य पर नागरिक निकाय के प्रतिनिधियों द्वारा शासन किया जाना है। आधुनिक गणराज्य की अवधारणा में सम्प्रभुता लोगों के पास है; हालांकि लोगों की श्रेणी में किसको रखा जाए, किसे नहीं, यह समय सापेक्ष मान्यता है। चूंकि नागरिक स्वयं राज्य पर शासन नहीं करते हैं, बल्कि प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन करते हैं, इस दृष्टिकोण से गणतंत्र को प्रत्यक्ष लोकतंत्र से अलग किया जा सकता है। लोकतंत्र से तात्पर्य है किसी देश पर लोगों का शासन। प्रजातंत्र एक ऐसी शासन प्रणाली है, जिसके अन्तर्गत जनता अपनी स्वेच्छा से निर्वाचन में आए हुए किसी भी उम्मीदवार को मत देकर अपना प्रतिनिधि चुन सकती है। लोकतंत्र शासन का एक ऐसा रूप है, जिसमें शासकों का चुनाव लोग करते हैं। लोकतंत्र दो शब्दों से मिलकर बना है लोक और तंत्र। भारत को गणतंत्र इसलिए कहा जाता है कि यहां जनता का, जनता के लिए एवं जनता द्वारा शासन होता है। प्राचीन काल में पाणिनि ने गण व गणतंत्र की व्याख्या करते हुए गण को संघ का पर्याय

कहा है। संघोद्धो गणप्रशंसयोः अष्टध्यायी 3,3,86 साहित्य से पता चलता है कि पाणिनि और बुद्ध के समय भारत में गणराज्य की विकसित अवधारणा थी।

गणतंत्र की जननी वैशाली (भारत) अद्यतन अनुसंधानकर्त्ता एवं बुद्धिजीवियों के विमर्श का महत्वपूर्ण विषय है। यह सनातन भारतीय परम्परा की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विरासत की अस्मिता को, पश्चिमी नकारात्मक बौद्धिक विमर्श न तो समृद्ध करती है, और न तार्किक वैज्ञानिक संदर्भ को पूर्णरूपेण खण्डन करती है। इतिहास लेखन का सारतत्व और दृष्टिकोण वर्त्तमान के सामाजिक राजनीतिक सन्दर्भ से तय होता है। इस सार-तत्व के आलोक में के. पी. जायसवाल ने अपनी रचना 'हिन्दू पॉलिटी' में पालि ग्रंथों के आधार पर इस तथ्य को निष्कर्ष पर पहुँचा दिया कि वैशाली में गणतांत्रिक राज्य था और प्राचीन काल में भारतीय शासन प्रणाली में जनतंत्र का व्यवहार होता रहा है। उनके अनुसार यह संगठन आधुनिक स्विट्जरलैण्ड और अमेरिका में पाए जानेवाली किन्हीं भी संस्थाओं से अधिक विकसित एवं प्राचीन थी। अपने अध्ययन के अन्त में जायसवाल जी ने निष्कर्ष निकाला है कि हिन्दुओं द्वारा स्थापित शासन प्रणाली की बराबरी प्राचीन विश्व की किसी राजनीतिक संस्थाओं द्वारा नहीं की जा सकती है, उससे आगे निकलने की बात तो छोड़ दीजिये। इस विषय को आजादी के पूर्व पी. एन. बनर्जी ने 'Public Administration In Ancient India', 1916 के. वी. रंगास्वामी अयंगर ने 'Some Aspects of Ancient Indian Polity', 1914 आर. पी. मजूमदार ने 'Corporate Life in Ancient India', 1918 शमशास्त्री ने 'Abolition of Indian Polity', 1920 ए. एन. लॉ ने 'Aspects of Ancient Indian Polity', 1921 तथा बी. के. सरकार ने 'Political Institutions and Theories of Hindus', 1922 द्वारा स्मिथ विलफबी और हरिट्गटन जैसे परम्परागत साम्राज्यवादियों का प्रतिउत्तर प्रस्तुत किया था। एन. सी. बंदोपाध्याय ने 'In development of Hindu Polity and Political Theory', 1927 में राजनीति की व्यवहारिक व्याख्या की तो 1923 में यू. एन. घोषाल ने 'A History of Hindu Political Theory' में मैक्समूलर और ब्लूमफिल्ड के विचारों को गलत ठहराया, इसे और दृढ़ता से डी. आर. भण्डारकर ने भी अपनी रचना में दर्शाया है। जे. पी. शर्मा की रचना 'Republics in Ancient India' ए. एस. अल्टेकर की 'State and Government in Ancient India' में भारत के राजनीतिक संस्थाओं के विकास को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया है।

इतिहासकारों ने यह प्रमाणित किया है कि प्राचीन काल में चार स्थानों पर गणतंत्रीय शासन का पूर्ण अर्द्धस्वरूप था - वे हैं, भारत, यूनान, इटली तथा ट्यूनिस। इनमें भारत का गणतंत्र सबसे प्राचीन, पूर्ण और सर्वांगीण लोकतंत्र रही है। यद्यपि पोलिवियस एवं लिवि इतिहासकारो नें पश्चिम गणराज्य की श्रेष्ठता को उभारने का प्रयास किया है। वहीं हर्डर ने अपनी सांस्कृतिक विरासत की प्रधानता से अभिभूत होकर जर्मन राष्ट्रवाद को महिमामंडित किया और इतिहास लेखन में 'भारतीय औपनिवेश' के कारण इसके शासन व्यवस्था का सही चित्रण करने में कोताही बरती। स्पेग्लर का भी साम्राज्यवादी परिवेश में लिखे गए आधुनिक भारतीय इतिहास लेखन औपनिवेशिक पूर्वग्रह से ग्रस्त रहा। लेकिन कालांतर के ऐतिहासिक शोध एवं विभिन्न उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर अल्तेकर, पार्टीकर, योगेन्द्र मिश्र आदि विद्वानों ने विश्व के प्राचीनतम गणतंत्र के रूप में वैशाली के गणतंत्र को स्थापित किया। मशहूर इतिसकार के.पी. जायसवाल ने भी कई प्रमाणिक साक्ष्य की वस्तुनिष्ठता एवं वैज्ञानिकता के साथ-साथ भारतीय अतीत की मानवतावादी अवधारणा, नैतिकता, समर्पण, सहयोग एवं समन्वय के तत्वों का समावेश किया। इन लोगों ने ''वसुधैव कुटुम्बकम'' एवं ''सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः'' की अवधारणा को न केवल पुष्ट किया, अपितु प्रजातंत्र की जिस मान्यता और प्राचीनता के सम्बंध में पश्चिम के इतिहासकार

अपनी श्रेष्ठता का दावा कर रहे थे उसके प्रत्युत्तर में उनके कई दावों पर प्रश्नचिन्ह लगाते हुए विश्व के प्राचीनतम गणतंत्र के रूप में वैशाली जनपद को स्थापित किया।

वैशाली में विश्व का प्राचीनतम गणतंत्र था, जिसकी स्थापना करीब 725 ई0 पू0 यूनान में गणतंत्र के प्रादुर्भाव से पूर्व हो चुकी थी। इस क्षेत्र में गणतंत्र की स्थापना के पूर्व राजतंत्रात्मक व्यवस्था थी, जिसके कालांतर में गणतंत्र की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ, जिसकी काल गणना विशुद्ध वैज्ञानिक तरीके से करते हुए इसे विश्व का प्राचीनतम गणतंत्र प्रमाणित किया गया है। डॉ. योगेन्द्र मिश्र ने 'An Early History of Vaishali' 1962 में प्रकाशित कर तार्किक रूप से इसे प्रमाणित किया है; जिसे सभी इतिहासकारों के द्वारा स्वीकारा गया है। प्राचीन भारतीय इतिहास में 'बिहार का वैशाली' महत्वपूर्ण स्थान रखता है। वैशाली में वृज्जियों या वज्जियों अथवा लिच्छवियों के द्वारा प्राचीन विश्व एवं भारत के सबसे अधिक सुविख्यात एवं प्राचीन गणतंत्र की स्थापना हुई। इस संदर्भ में के. पी. जायसवाल, ए. एस. अल्तेकर, पार्जीटर आदि ने प्रामाणिक रूप से साक्ष्य आधारित विवरण प्रस्तुत किये; जिसमें विभिन्न तथ्यों के आधार पर प्रो. योगेन्द्र मिश्र ने 725 ई. पू. की तिथि निर्धारण कर इसे विश्व के प्राचीनतम गणतंत्र के रूप में स्थापित किया है।

वैशाली का सर्वप्रथम उल्लेख 'वाल्मीकि रामायण' के 'बालकांड' में मिलता है, कई पुराण ग्रंथों में भी इसकी कथा कही गयी है। महाभारत युद्ध के बाद भारत में जिन गणराज्यों की स्थापना हुई उनमें वैशाली का 'वज्जी संघ' सर्वाधिक शक्तिशाली था। वैशाली को इक्ष्वाकुवंशीय राजा विशाल ने बसाया था, जो वज्जी संघ के गणतंत्रात्मक प्रणाली की राजधानी थी। जातक ग्रंथों में लिच्छविगण के सात हजार सात सौ सात राजाओं के वर्णन उपलब्ध है। बुद्ध के समय में वज्जी संघ के प्रमुख का नाम चेतक था और बाद में प्रमुख के पद पर प्रदुमन भी रहा। वज्जी संघ के शासन का प्रबन्ध आज की लोकसभा की तरह बनी परिषद् करती थी और उसके सदस्यों की राय से शासन का संचालन होता था। इन सदस्यों में से ही किसी प्रमुख का चुनाव होता था। चुनाव एवं मत-स्थापन में मतगणना की प्रणाली थी, जो शलाका-पद्धति से होती थी। बहुमत का आदर विरोधी सदस्य भी करते थे। वैशाली में परिषद् की बैठक के लिए संस्थागार बना हुआ था। वैशाली का गणतंत्र संसार का प्राचीनतम गणराज्य होने के साथ-साथ एक ऐसा आदर्श था, जो आज भी कई बातों में अनुकरणीय है।

ए. एस. अल्तेकर की मान्यता है कि प्राचीन भारत में गणतंत्रों के लुप्त होने के कारणों को खोजने पर बल देना चाहिए। उनका मत है कि वज्जी गणतंत्र की सफलता की सात शर्तों की समीक्षा करनी चाहिए। आधुनिक भारत में संसद के द्वार पर बुद्ध की भविष्यवाणी अंकित की जानी चाहिए जो गणतंत्र के पतन या उसके अस्तित्व से सम्बन्धित थे। इससे आजाद भारत में गणतंत्र के विषय का विमर्श ज्यादा प्रासंगिक होगा। इस दृष्टि से जे. पी. शर्मा ने 'Republic In Ancient India', 1963 और शोभा मुखर्जी ने 'The Republic Trends In Ancient India', 1969 एवं एस. एन. मिश्र ने गणतंत्र और उसकी विभिन्न व्याख्या सम्बंधी तथ्य प्रस्तुत किए हैं। प्राचीन काल में उत्तर बिहार में दो राज्य थे, वैशाली और विदेह, जिन्हें मगध के अजातशत्रु ने पांचवीं सदी ई. पू. के प्रारम्भ में जीत लिया। वैशाली में मोटे तौर पर चम्पारण आधुनिक पश्चिमी एवं पूर्वी चम्पारण तथा मुजफ्फरपुर आधुनिक शिवहर, सीतामढ़ी और वैशाली जिले सम्मिलित थे। विदेह में दरभंगा जिला आधुनिक समस्तीपुर, दरभंगा और मधुबनी, मुंगेर जिला का उत्तरी भाग, आधुनिक बेगूसराय, सहरसा जिला आधुनिक पूर्णिया, किशनगंज, कटिहार और अररिया सम्मिलित थे। कुछ नेपाल की तराई का भाग भी था। राज्य का नाम वैशाली होने के साथ-साथ यह राजधानी का भी नाम था। इसके प्राथमिक श्रोत्र ब्राह्मण, बौद्ध एवं जैन साहित्य एवं विदेशी यात्रा वृत्तान्त हैं। यद्यपि

सिलसिलेवार इतिहास उपलब्ध नहीं है, बावजूद इसके पुराण, महाकाव्य, उपनिषद् आदि में इसकी चर्चा हैं। बौद्ध साहित्य में इसकी विस्तृत चर्चा है; साथ ही जैन एवं तिब्बती साहित्य में भी इसके प्रमाण मिलते हैं। यद्यपि कुछ इतिहासकार महाकाव्य एवं पुराणों के ऐतिहासिक महत्व पर संशय दर्शाया है, इन पक्षों पर एच. सी. पुसलकर ने परोक्ष रूप से उनका समर्थन किया है और दूसरी ओर उन्होंने पौराणिक वंशवृक्ष के कुछ वैसे विशिष्ट नामों को संकलित किया है जिनके नाम वैदिक साहित्य में भी है। इस विचार के प्रबल समर्थक एफ. ई. पार्जीटर है - जो वैदिक साक्ष्य से ज्यादा महत्व पौराणिक परम्परा को देते हैं। ब्राह्मण साहित्य के कुछ बाद के ग्रंथ भी महत्वपूर्ण साक्ष्य उपलब्ध कराते हैं। यथा पाणिनी की 'अष्टध्यायी', कौटिल्य का अर्थशास्त्र और पतंजलि का महाभाष्य। विशेषकर गणतंत्रीय अवधि के साक्ष्य बौद्ध साहित्य में मिलते हैं। इसके आलोक में वज्जी गणतंत्र के अज्ञात तिथि-क्रम को एक तार्किक रूप में तिथि क्रम के करीब लाने का सार्थक प्रयास प्रो. योगेन्द्र मिश्र ने निम्नांकित रूप में किया है।

1. बुद्ध 567-487 ई. पू. के समय वज्जी गणतंत्र सुव्यवस्थित संस्था थी; जिसकी बुद्ध ने प्रशंसा की और सात विशेषताओं का वर्णन किया था। विवरण 'महापरिनिब्बान सुत्त' में दिया गया है।
2. 'अंगुतर निकाय' में सोलह महाजनपदों का वर्णन है जिसमें वज्जियों का भी उल्लेख है।
3. विदेह शासक जनक की कहानी पी. एच. आई. पू. 82-83, में अराजक परिवेश में वैशाली क्षेत्र में वज्जी गणतंत्र की चर्चा है।
4. महाभारत एवं पुराणों की समीक्षा से उपलब्ध राजवंशों की सूची के तिथि क्रम से भी इसकी कल्पना सहायक है। इसकी चर्चा एस. एन. प्रधान की पुस्तक 'Chronology of Ancient India, Culcutta 1927 पृ. 249-59' में भी है। जिसे काफी तार्किक एवं शुद्ध सूची माना गया है।
5. पर्जिटरने पुराणों में उपलब्ध राजवंशों की सूची को विश्लेषित किया है। बौद्ध ग्रंथ महावंश के अनुसार भी इसके तुलनात्मक विवरण देखा जा सकता है।

मगध के इतिहास पर किऐ गये अनेक अध्ययनों के आधार पर भी इन तथ्यों को बल मिलता है। महाभारत युद्ध और बौद्ध धर्म के उदय अर्थात् 540 ई. पू. एवं मगध के आरम्भिक शासक बिम्बसार, महापद्मनन्द के राज्यारोहण आदि के तिथि क्रम वैशाली गणतंत्र की तिथि निर्धारण में मानक साक्ष्य का कार्य करता है। जातक कथाओं में भी कई प्रमाण मिलते हैं, जिनको आधार मानकर योगेन्द्र मिश्र ने अन्य जैन साक्ष्य के साथ वज्जी गणतंत्र की स्थापना 725 ई. पू. में हुई थी, को स्थापित किया है।

राजतंत्र की समाप्ति के पश्चात् उत्तर बिहार में स्थापित शासन को बौद्ध साहित्य में संघ या गण कहा गया है। इस शासन तंत्र में कोई राजा नहीं था; एक परिवार का प्रत्येक प्रधान वहां का राजा था। बुद्ध ने 'महापिरनिब्बान सुत्त' में वज्जी गणतंत्र की सात विशेषताओं का उल्लेख किया है, जिसकी चर्चा पाणिनी एवं कौटिल्य ने भी की है। वज्जी गणतंत्र में सांघगठनिक इकाइयों की संख्या कितनी थी इसकी स्पष्ट जानकारी नहीं है। इस गणतंत्र में न्यायिक समिति का नाम अट्ठकुलका था, यद्यपि इस पर कुछ मत-भिन्नता है। लेकिन यह अर्थात् आठ कुलों की परिषद् एक न्यायिक शब्द है, जिसपर विद्वानों में एक मत है। इसकी शाब्दिक व्याख्या नहीं की जानी चाहिए, जो काफी लम्बे समय तक होती रही थी। वज्जी गणतंत्र में वैशाली के लिच्छवियों का स्थान सबसे महत्वपूर्ण था, और वे सबसे प्रभावशाली थे। दूसरा महत्वपूर्ण कुल ज्ञातृकों का था जिससे वर्द्धमान महावीर थे। सूत्र कृतांग में इसकी विस्तृत सूची अंकित है।

अनुग्रह ज्योति

वज्जी की राजधानी वैशाली के संबंध में विद्वानों के बीच मतभिन्नता बनी रही। स्त्रोतों के आधार पर जेनरल कनिंघम ने मुजफ्फरपुर जिला के वर्तमान वैशाली के वसाढ़ गाँव की पहचान उस स्थान के रूप में की। 'Kanigham, Archeological Survey Reports', जिल्द-1, पृ. 55-56, और जिल्द XVI पृ. 6, 'Asiatic Geography of India', पृ. 507-8) वैशाली पर लिखित शोध पत्र में बी. ए. स्मिथ ने भी इसकी पुष्टि की। इसके पश्चात् 1903-04 में टी. ब्लॉश 'Archeological Survey of India, Annual Report' for 1903-04, Exhibition at Basarh नामक लेख, पृ. 81-122,) डी. वी. स्पूनर ने 1913-14 में 'Archeological Survey of India', 'Annual Report' for 1913-14 1950 में कृष्णदेव और 1958-59 में ए. एस. अल्तेकर ने उत्खनन के पश्चात् प्राप्त अवशेषों के आधार पर से इस क्षेत्र की सभी शंकाओं को निर्मूल कर दिया। इस क्षेत्र की मान्यता स्थिर होने पर अनेक साहित्य यथा बुद्धघोष की परमत्योजातिका, पुराण, जातक कथा, महावग्ग में वर्णित ललित विस्तार आदि बौद्ध ग्रंथ से इसके गणतंत्र की अवधारणा को स्पष्टता मिली। हॉर्नले ने जैन ग्रंथ उवासगदसाओं में वैशाली के चित्रण को दर्शाया; तिब्बती साहित्य, चीनी साहित्य में भी इसके साक्ष्य हैं। यद्यपि वज्जी गणतंत्र के संबंध में जानकारी बुद्ध और महावीर के समय से मिलती है। लेकिन सूक्ष्मता से देखा जाए तो सातवीं, छठी शताब्दी में भी साक्ष्य हैं। सामान्यतः गणतंत्र का कार्य प्रशासन को सुदृढ़ एवं आदर्श बनाना था। महापरिनिब्बान सुत्त में बुद्ध द्वारा उल्लिखित प्रजातंत्र के सात मूल सिद्धांतों को विकसित कर उनका पालन किया गया था। पार्श्वनाथ पंथ ने भी वहाँ प्रवेश किया और लोग उनके अनुयायी बने। अंगुतर निकाय में सोलह महाजनपद की सूची में इसे भी शामिल किया गया। वज्जी जिसे पालि साहित्य में वज्जी रट्ठ संस्कृत में वृजि राष्ट्र कहा जाता था; इसका प्रभाव गंगा नदी के किनारे से विदेह तक था; जिसे बौद्ध साहित्य में अंगुतराप कहा जाता है। इस राज्य के शासन या सरकार के स्वरूप को संघ या गण के रूप में जाना जाता था। वज्जी राज्य को कुछ लोगों ने संघीय गणतंत्र मान लिया, परन्तु यह केवल एक गणतंत्र था। यद्यपि जैन ग्रंथ में अपने पड़ोसी राज्य मल्ल के साथ एक अस्थायी संघ बनाने की चर्चा है। (कल्पसूत्र 128, एस. वी. ई. 22, पृ. 266) वज्जी गणतंत्र में बाहर के लोगों को नागरिकता प्राप्त करने की पात्रता थी। इनके बीच नीति निदेशक तत्व भी थे। इस पक्ष को सात सिद्धांत स्पष्ट करता है :-

1. वज्जियों की पूर्ण जनसभा होनी चाहिए और बार बार होनी चाहिए।
2. उन्हें इक्ट्ठे बैठक करनी चाहिए, इक्ट्ठे उठना बैठना एवं राष्ट्रीय कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए।
3. उन्हें वज्जी सभा द्वारा बकायदा कानून बनाए बिना कोई आज्ञा जारी नहीं करनी चाहिए, बने हुए कानून का उल्लंघन नहीं कर कानून एवं संस्थाओं के अनुसार बर्ताव करना चाहिए।
4. उन्हें बुजुर्ग का सम्मान एवं अनुसरण करना चाहिए।
5. अपने कुल की स्त्रियों एवं कुमारियों पर जबरन प्रभाव नहीं बनाना चाहिए।
6. उन्हें बाहरी भीतरी सभी को सम्मान करना चाहिए।
7. अपने समुदाय के लोगों को न्याय संगत संरक्षण, सुरक्षा और सहायता देनी चाहिए।

वज्जीय गणतंत्र इन्हीं सिद्धांतों से निर्देशित होते थे। बाद के स्त्रोत आट्ठकथा में तीन अधिकारियों का उल्लेख है तथा अध्यक्ष अर्थात् राजा, उपाध्यक्ष अर्थात् उपराजा और सर्वोच्च नायक अर्थात् सभापति, बाद के ग्रंथ जातक 1, पृ. 504, में चौथे अधिकारी वित्त मंत्री अर्थात् भण्डागारिक के उल्लेख अंकित हैं। इससे मंत्री परिषद् या केन्द्रीय कार्यपालिका का गठन होता था; जो कार्यपालिका, सैनिक और न्यायिक कार्य करते थे। इन सभी पदों पर निर्वाचित सदस्य होते थे। (अंगुतर निकाय-3, पृ. 76, ललित विस्तार, अंग्रेजी अनुवाद, पृ. 390) वास्तविक प्रशासनिक शक्ति विशेषकर वाह्य मामलों से संबंधित एवं गणराज्यों की अपेक्षाकृत छोटी समिति के हाथ में थी।

(कल्पसूत्र-128) केन्द्रीय विधायिका या वज्जी गणतंत्र के विधामंडल में सदस्यों की संख्या 7707 बतायी गई है। (जातक सं. 149 और विनय पिटक के महावग्ग VIII, III और महावस्तु तथा ए. एस. अल्तेकर की रचना 'State and Government in Ancient India', बनारस 1955, पृ. 115) ग्रीक इतिहासकार मैक्रिण्डल ने अपनी रचना 'Ancient India Age Described in Classical Literature', पृ. 45 के अनुसार यौधेय के गणतंत्र में 5000 सदस्य थे। एथेंस के गणतंत्र के विधानमंडल में 42000 से अधिक सदस्य थे। इनमें से प्रत्येक सदस्यों को विधानमंडल की बैठकों में भाग लेने और उसमें लाए गए प्रस्ताव पर मत प्रकट करने का अधिकार था। इसका उल्लेख द. एस. अल्तेकर ने भी किया है। अल्तेकर ने जातक के विवरण के आधार पर वैशाली राज्य के 7707 की संख्या को सही साबित किया है। यह लोकसभा या अन्य जनतांत्रिक व्यवस्था को केन्द्रीय विधान मंडल के जिस स्थान पर बैठक होती थी, उस स्थान को संस्थागार (मज्झिम निकाय 1, पृ. 228) कहा जाता था। गण एक सम्प्रभुता सम्पन्न संस्था थी। विधानमंडल सभी कार्य सम्पूर्ण जनता की ओर से सम्पन्न करती थी। (महावस्तु निकाय पृ. 254)

यह कार्यपालिका परिषद् के सदस्यों और अन्य अधिकारियों की नियुक्ति करती थी।

वैशाली के गणतंत्र की विशिष्टता लिच्छवी संविधान में निहित न्यायिक पद्धति में मिलता है। (दीर्घ निकाय 2 पृ॰ 519) जो निम्न प्रक्रिया से गुजर कर पूर्ण होती थी।

जिनके द्वारा निम्नांकित प्रमुख कार्य निर्धारित थे।

1. प्राथमिक जाँच न्यायाधीश विनिश्चय (महामात्य) करता था।
2. अपील न्यायालय का प्रधान व्यावहारिक होता था।
3. उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सूत्रधार कहलाते थे।
4. इसके ऊपर अंतिम अपील के लिए एक न्यायालय था जिसे अष्टकुलक कहा जाता था।

5. से 7. अगर नीचे के सभी न्यायालय द्वारा अभियुक्त दोषी पाया जाता था तो मामला मंत्रीपरिषद् के सदस्य के निर्णय पर भी निर्भर करता था। इस क्रम में सेनापति, उपराजा, राजा के पास जाता था। जिसमें अपराधमुक्त होकर बरी हो सकता था।

8. राजा द्वारा दोषी पाए जाने पर प्रवेणी पुस्तक के अनुसार दण्ड पर विचार किया जाता था।

यह न्याय प्रणाली काफी विकसित थी। यद्यपि स्थानीय शासन की स्पष्ट चर्चा नहीं है फिर भी अंगुतर निकाय के एक परिच्छेद में इस विषय का उल्लेख है।

बौद्ध संघ अपने नियमों एवं परिनियमों के अनुसार छठी सदी ई. पू. के गणतांत्रिक नियमों पर आधारित था। के. पी. जायसवाल ने अपनी पुस्तक 'हिन्दू पॉलिटी' में विस्तार से इसकी चर्चा की है। बौद्ध संघ के विवरण में निहित धार्मिक पक्ष को यदि अलग कर दिया जाए तो वज्जी गणतंत्र की प्रक्रियाओं को समझा जा सकता है। बिहार के वैशाली जिला में स्थित बसाढ़ क्षेत्र की पहचान को प्राचीन वैशाली के रूप में दुनिया का प्रथम गणतंत्र माना जाता है; जिसका आज यूरोप, अमेरिका आदि देश अनुसरण कर रहे हैं। उनके यहाँ जो दो सदन की प्रणाली है, वह वैशाली गणराज्य में थी।

वस्तुतः आज लोकतंत्र जीवन को समुचित ढंग से संचालित करने का माध्यम है। आधुनिक परिवेश में लोकतंत्र की प्रकृति में बदलाव आ रहा है। यह शासन व्यवस्था के विशेष स्वरूप तक सीमित न होकर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के सभी पक्षों को संबोधित करने का एक पर्याय हो गया है। इस संकल्पना में भागीदारी, प्रतिनिधित्व, जबावदेही, जनमानस की सहमति, बंधुता का आदर्श और आत्मविश्वास सन्निहित है। भारत में वर्तमान शासन

प्रणाली की त्रिस्तरीय संरचना निहित है, जिसमें सत्ता का विकेन्द्रीकरण की प्रासंगिकता महत्वपूर्ण है। इसी भावना के साथ भारत में सदियों से चली आ रही लोकतंत्रात्मक व्यवस्था स्वरूप समाज के लिए प्रेरणादायिनी है।

राष्ट्रकवि दिनकर के शब्दों में :-

वैशाली! इतिहास-पृष्ठ पर अंकन अंगारों का,
वैशाली! अतीत गह्वर में गुंजन तलवारों का।
वैशाली! जन का प्रतिपालक, गण का आदि विधाता
जिसे ढूँढता देश आज उस प्रजातंत्र की माता।
रूको, एक क्षण पथिक! यहाँ मिट्टी को शीश नवाओ,
राजसिद्धियों की समाधि पर फूल चढ़ाते जाओ।

संदर्भ ग्रंथ :

1. के. पी. जायसवाल, Hindu Polity, 1924
2. जे. पी. शर्मा ने Republic In Ancient India, 1963
3. शोभा मुखर्जी ने The Republic Trends In Ancient India, दिल्ली, 1916
4. पी. एन. बनर्जी, Public Administration In Ancient India, 1916
5. के. वी. रंगास्वामी अयंगर, Some Aspects of Ancient Indian Polity, 1914
6. आर. पी. मजूमदार, Corporate Life in Ancient India, 1918 शमशास्त्री, Abolution of Indian Polity, 1920
7. ए. एन. लॉ, Aspects of Ancient Indian Polity, 1921
8. बी. के. सरकार, Political Institution and Theories of Hindus, 1922
9. यू. एन. घोषाल, A History of Hindu Political Theory, 1923
10. जे. पी. शर्मा, Republic In Ancient India
11. ए. एस. अल्तेकर, State and Government in Ancient India
12. डॉ. योगेन्द्र मिश्र ने An Early History of Vaishali, 1962
13. एस. एन. प्रधान की पुस्तक Chronology of Ancient India, कलकत्ता, 1927, पृ. 249-59, पी. एच. आई., पृ. 82-83
14. Kanigham, Archeology Survey Reports जिल्द-1, पृ. 55-56 और जिल्द XVI, पृ. 6; Asiatic Geography of India, पृ. 507-8
15. टी. ब्लॉश, Archeological Survey of India, Annual Report for 1903-04, Exhibition at Basarh नामक लेख, पृ. 81-122
16. डी. वी. स्पूनर ने 1913-14 में Archeological Survey of India, Annual Report for 1913-14
17. महापरिनिब्बान सुत्त अंगुतर निकाय सूत्रकृतांग, कल्पसूत्र 128, एस. वी. ई. 22, पृ. 266 एवं अनेक समकालीन साहित्यों यथा महापनिब्बान सुत्त अंगुतर निकाय सूत्रकृतांग, बुद्ध घोष की परमत्योजातिका, पुराण, जातक कथा, महावग्ग के वर्णित है।

Role of MATHEMATICS in ARTIFICIAL INTELLIGENCE

Prof Shambhu Kr. Mishra
P.G. Department of Mathematics
Patliputra University, Patna

Mathematics has been at the core of AI since its inception, with mathematicians playing a pivotal role in shaping the field. They have made substantial advancements in fields like linear algebra, optimization theory and deep learning.

Artificial intelligence (AI) is revolutionizing industries and mathematics plays a fundamental role in this progress. In this article, we explore the vital role of mathematics in Al, including the innovative contributions of mathematics.

Artificial Intelligence and Mathematics are the two branches of the same tree. There is a magical connection between AI and Mathematics. Artificial intelligence problems constitute on two general categories; Search problems, and Representation problems. Following them are interconnected models and tools like Rules, frames, Logics. and Nets. All of them are very mathematical topics.

The primary purpose of Artificial intelligence is to create an acceptable model for human understanding and these models can be prepared with the ideas and strategies from various branches of Mathematics.

Consider self-driving cars; their goal is to recognize objects and people in videos images. There is mathematics behind these cars in the form of minimization procedures and back propagation. Mathematics helps AI scientists to solve challenging deep abstract problems using traditional methods and techniques known for hundreds of years. Behind all of the significant advances, there is mathematics. The concepts of Linear Algebra, Calculus etc.

Mathematicians have made ground breaking contributions to the development of AI, shaping the field throughout history. They have laid the theoretical foundations for AI systems, creating algorithms, models, and methodologies that enable machines to learn, reason and make informed decisions. One significant contribution is in the field of linear algebra which serves as the basis for numerous AI algorithms. Linear algebra allows the representation and manipulation of data, facilitating tasks like image recognition, natural language processing and recommendation systems. Mathematicians have also made notable advancements in optimization theory, which forms the basis for training and fine tuning AI models.

Examples of these contributions and challenges faced by mathematicians in AI include the development of support vector machines (SVMs). a mathematical framework widely used for classification and regression tasks in AI applications. Mathematicians have also tackled challenges related to high-dimensional data in computer vision, developing techniques such as dimensionality reduction to handle the curse of dimensionality. Applied mathematicians in AI face intriguing challenges despite remarkable progress.

One primary obstacle is the need for robust mathematical frameworks capable of handling the complexity and uncertainty inherent in real-world AI applications. Developing models that accurately capture and represent high-dimensional, noisy, and incomplete data is a critical area of exploration. Examples of challenges faced by mathematicians in AI include developing algorithms for anomaly detection in large-scale datasets, where mathematical techniques like statistical modelling and graph theory are essential. Addressing the challenge of adversarial attacks also requires mathematicians to work on robust optimization and game theory to improve the security and resilience of Al systems.

Mathematics has been at the core of AI since its inception, with mathematicians playing a pivotal role in shaping the field. They have made substantial advancements in fields like linear algebra, optimization theory and deep learning. However, challenges persist and applied mathematicians have a unique opportunity to contribute to on-going advancements in AI.

Chemistry in the Service of Mankind

Dr. Anil Kr. Singh
Associate Professor
Dept. of Chemistry
A.N. College, Patna

The main aim of chemistry has been to improve the quality of human life. Organic compounds are so closely related to our daily activities that in their absence our survival is not possible.

The main aim of chemistry has been to improve the quality of human life. Organic compounds are so closely related to our daily activities that in their absence our survival is not possible. Organic compounds are used in the field of agriculture, textile, medicine and drugs, power and transportation, plastics, dyes, soaps, photography etc. Here, a brief idea of polymer, dyes and drugs are being discussed.

POLYMERS:

Polymers are high molecular mass compounds whose structures are composed of a large number of single repeating units of low molecular mass simple compound called monomer. The process of joining together of a large number of simple small molecule is called polymerization.

Smaller species formed by the process of polymerization of a monomer are called dimer, trimer, tetramer, pentamer....etc.

Monomer		A
Dimer	Two monomer units	A.....A
Trimer	Three monomer Units	A.....A.....A
Tetramer	Four monomer Units	A.....A.....A.....A
Polymer	Large no. of monomer units $(A)_n$	

Homopolymers and Copolymers:

Polymers are divided into two categories depending upon the nature of the repeating structural units Homopolymer and Copolymer.

Homopolymer is a polymer which is obtained from only one type of monomer molecule while a polymer made from more than one type of monomer molecule is called copolymer.

Example and uses of Homopolymers.

Sr. No.	Common name of the homopolymer	Monomer	Uses
1.	Polyethylene	$CH_2=CH_2$	In the manufacture of pipes, toys, bags, wire, insulators, bottles etc.
2.	Polyvinylchloride	$CH_2=CH-Cl$	In the manufacture of sheets water pipes hand bags etc.
3.	Teflon	$CF_2=CF_2$	In the manufacture of insulators,
4.	Buna Rubber	$CH_2=CH-CH=CH_2$	In the manufacture of tyres, hoses etc.
5.	Acrylonitrile	$CH_2=CH-CN$	In the manufacture of orlon (fiber) and acrylon films

Co-polymers

1.	Synthetic rubber as styrene butadiene rubber (SBR) or (Buna-S)	I. $C_6H_5-CH=CH_2$ (Styrene) II. $CH_2=CH-CH=CH_2$ (Buta-1,3-diene)	In the manufacture of light duty tyres, belting hoses and rubber solar.
2.	Dacron or Terylene	I. Ethylene glycol II. Dimethyl tetra phthalate	In the manufacture of fabrics and magnetic recording tapes.
3.	Nylon-66	I. Hexamethylene diamine II. Adipic acid	In the manufacture of fabrics, tyres, cord
4.	Bakelite	I. Formaldehyd II. Phenol	In the manufacture of electrical goods, photograph records, fountain pen barrels
5.	Polyurethane	I. Ethylene glycol II. Ethylene di-isocyanate	In the manufacture of fibers, paints and heat insulators.

Rubber:

Rubber is a polymer which is capable of returning to its original length, shape or size after being stretched or deformed. It is a common example of an elastomer.

The rubber obtained from natural sources is called natural rubber and polymers prepared in laboratory which are similar to natural rubber are known as synthetic rubber.

Natural Rubber:

Natural rubber is a polymer which is obtained from rubber trees in the form of a milky soap known as latex. The latex is coagulated with acetic acid or formic acid. The coagulated mass is then squeezed.

The raw natural rubber is a soft, gummy and sticky mass. It is insoluble in water, dilute acids and alkalis but soluble in benzene, chloroform, ether, petrol and carbon di sulphide. It absorbs a large amount of water. It has low elasticity and low tensile strength. It breaks when too much stretched. The monomer of natural rubber is isoprene.

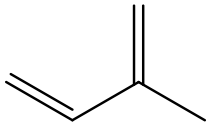

Isoprene

Vulcanization of rubber

In order to give strength and elasticity, natural rubber is vulcanized. vulcanization is a process of treating natural rubber with sulphur or some compound of sulfur like SF_6 under heat to modify its properties that is to reduce it non-plastic and to give greater elasticity and ductility. The sulphur reacts with the polymer molecules forming a cross-linked network. This cross-linking gives mechanical strength to rubber. In addition, fillers such as carbon blades and zinc oxide are usually added to crude rubber before vulcanization in order to improve its working characteristic. Natural rubber is used for making shoes, waterproof coats and golf balls. Vulcanized rubber is used for manufacturing rubber bands, gloves, conveyor belts and car tyres.

Synthetic Rubber :

They are also more flexible, tougher and durable than natural rubber. Neoprene, thiokole, buna-S and cis polybuta-1,3-diene are some examples of synthetic rubber.

Neoprene: It was the first synthetic rubber manufactured on a large scale. It is also called polychloroprene. Its monomer chloroprene is prepared from acetylene. Many of the properties of neoprene are similar to natural rubber, but neoprene is more resistant to the action of oils gasoline, and other hydrocarbons. It is also resistant to sunlight, oxygen, ozone and heat. It is non-inflammable.

It is used for making automobile and refrigerator parts, hoses for petrol and oil

containers, incubation of electric wire and conveyor belts.

Colour :

Visible light consists of electromagnetic radiations of wavelength 400-7600 A°. Each wavelength is associated with definite energy and produces characteristic colour sensation when it strikes the retina of our eye. Light possessing all the wavelengths from 400-760nm (Visible light) white. The white light is made up of seven colours. They are violet, indigo, blue, green, yellow, orange and red (VIBGYOR). When light falls on a substance three things may occur.

a. Totally reflected that is nothing is absorbed

b. Partially reflected and partially absorb

c. Totally absorb that is nothing is reflected

The substance appears white when light is totally reflected and black when it is totally absorbed. But when a part of the light is reflected and rest absorbed, the substance will have the complementary colours of the absorbed Band

Color observed	Complementary Color
Violet	Yellow
Blue	Yellow
Blue-Green	Red-Orange
Green	Red
Yellow -Green	Violet-Red
Yellow	Violet
Red	Green

Dyes

Dye is a natural or synthetic colouring matter that is used in solution to stain molecules especially fabrics. All the coloured substances are not dyes. A coloured substance is termed as a dye if it fulfils the following conditions.

a. It must have a suitable colour

b. It can be fixed on the fabric either directly or with the help of mordant.

c. When fixed it must be fast to light and washing that is it must be resistant to the action of water, acids, and alkalis particularly to alkalis as washing soda and soap have alkaline nature

Introductions to drug and chemotherapy

The word drug is derived from the French word drogue which means a dry herb. In general way, the drug may be defined as substance used in the prevention, diagnosis, treatment or cure of disease in man or other animals. Drugs may be a single chemical substance or a combination of two or more different substances. An ideal drug should satisfy the following requirements.

When administrated to the ailing individual a host its action should be localized at the site where it is derived to act. In actual practice, there is no drug behaves in this manner.

The term chemotherapy which literally means chemical therapy or chemical treatment was coined in 1913 by Paul Ehrlich the father of modern chemotherapy. According to him, "chemotherapy as the use of chemicals (drugs) to injure or destroy infections microorganisms without causing any injury to the host".

Chemotherapy has developed into a vast subject today and efforts are being continuously made to search now drugs as to force human being. Drugs used in chemotherapy are usually classified according to their action.

Antipyretics

An antipyretic is a drug which is responsible for lowering the temperature of the feverish organism to normal but has no effect on normal temperature states.

Aspirin is an important antipyretic.

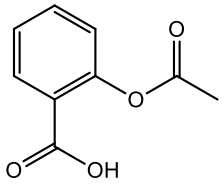

Aspirin

Aspirin is absorbed from gastrointestinal tract. The stomach acid causes a partial hydrolysis of the ester. The ester circulates in the blood and further hydrolysis occurs into salicylic acid which is the active component. It causes several side effects. It may cause minute ulcers in stomach and causes bleeding. Aspirin should not be taken empty stomach. Calcium and sodium salts of aspirin are more soluble. Aspirin is also used to prevent heart stroke because it acts as vase-dilater. The other antipyretics are phenacetin, paracetamol, Novalgina and phenyl butazone.

Analgesic: Drugs which relieve or decreases pain are termed as analgesics. These are of two types.

i. Narcotic (Addictive drugs): These are mainly opium and its products such as morphine, cocaine, marijuana and heroin. These produce analgesics and sleep and in high doses cause unconsciousness. They are very potent drugs and their chronic uses leads to addiction.

ii. Non-Narcotic (Non- addictive drugs): These are the drugs which are not potent and do not cause addiction. Common drugs are aspirin, analgesic, Novalgina, Butazolidin, brufen etc. They are quite effective and give immediate relief from pain and fever. These drugs also have antipyretic properties.

Antiseptics and Disinfectants: The chemical used for sterilization are classified as

Antiseptics : In medicine, it indicates the state of being infected with pus forming organisms. They are anti-infective agents, which prevent growth of microorganisms when in contact. They do not harm the living tissues and can be applied on cuts and wounds. Common examples of antiseptics are Dettol, Savlon acriflavine, gentian violet, mercurochrome, boric acid, chloramines-T, tincture of iodine, iodoform, potassium permanganate etc.

Disinfectants: These substances kill the microorganism or stop their growth. These are used for sterilization of inmate objects like instruments, utensils, clothes, floor, sanitary fittings, sputum and excreta. They are harmful to living tissues and cannot be used on the skin. Common examples are phenol, methyl phenols, hydrogen peroxide, chlorine, bleaching powder, sulphur dioxide.

The same substance can act as antiseptic or disinfectant depending upon the concentration of substance in solution. In smaller concentration, it is an antiseptic while in higher concentrations it becomes disinfectant. E.g 0.2 % solution of phenol acts as an antiseptic and its 1% solution is a disinfectant.

Some examples are –

Chlorine, hexachloroform, thymil, amylate cresol, bithtoral, Dettol, gertion violet and methylene blue (dyes), etc.

Antibiotics : It is a chemical substance produced by or derived from living cells which is capable of inhibiting the life processes or even destroys microorganism. The first antibiotic discovered by Alaxander Fleming in 1929 from the mold penicillium notatum was penicillium. The antibiotics can either be bactericidal or bacteriostatic. Examples are.

Bactericidal : Penicillium, ofloxacin, amino glycosidic.

Bacteriostatic : Tetracycline, chloramphenicol, and erythromycin.

Some broad : spectrum antibiotics have been discovered which are more effective than penicillin.

Some common examples are-

I. Streptomycin: It was discovered in 1949 by Waksman and is effective against tuberculosis (TB). It is also used for other common infections like throat, lungs, ear and kidney. It is very effective in the treatment of meningitis and pneumonia. PAS (p-amino salicylic acid) and INH (Iso nicotine hydrazine) are also used for the treatment of tuberculosis.

ii. Chloramphenicol: It is a broad-spectrum antibiotic. It is effective against certain gram positive and gram-negative bacteria. Some rickettsia and viruses. It is very effective in the treatment of typhoid fever, para typhoid fever, diarrhea and dysentery. It is also specific for influenza, meningitis, pneumonia, whooper's cough and urinary tract infection. Chloramphenicol may cause serious complications and hence it should not be used indiscriminately or for minor infections. Chloramphenicol in high concentrations inhibits the growth of

animal and plant cell.

iii. Tetracycline: Tetracycline are broad spectrum antibiotics and are effective against a number of types bacteria, larger viruses, protozoa, parasites and typhus fever. These can be given orally.

Antimicrobial : Chemical substances used to cure diseases caused by bacteria, fungi and viruses are called antimicrobial. These include antibacterial, antifungal and antiviral agents. Common examples of antibacterial drugs are sulpha drugs, antibiotics and quinolones etc.

Anesthetics : They are the drugs which produce insensibility to the vital functions of all types of cells especially of nervous system. The effect produced by anesthetic is decreased. Anesthetics may be classified into two groups on the basis of their applications.

I. General anesthetics: These depress the central nervous system to such an extent that all sensitivity to pain or feeling is lost i.e, they produce unconsciousness all over the body. They may be used for major surgical operations. These may be used in the form of a gas e.g. nitrous oxide, cyclopropane, ethylene, ether or may be given in the injection form. e.g sodium pentothal.

ii. Local anesthetics: These affect only a part of the body to make it insensitive to pain or feeling. E.g xylocaine, ethyl chloride, procaine, eucaine.

Tranquilizer or Hypnotics: They are used to reduce mental tension, relieve anxiety. Tranquilizers are effective in such mental disorders when ordinary hypnotics or sedatives fail.

These are also called psychotherapeutic drugs. Two powerful drugs called reserpine and chlorpromazine were first of all introduced, other examples are barbituric acid and its derivatives such as veronal, acylal luminal, equanil, Seconal, Librium, diazepam etc. Drugs used in the treatment of mental disease can be classified as

I. **Narcotics:** These are used as analgesic and depressant. It reduces anxiety and tension. Eg. Pethidine, heroin, opium etc.

ii. **Sedatives:** They reduce the action of central nervous system. These are also called depressant. These are used for violent mental patients. They induce the feeling of relaxation, calmness and drowsiness. Eg. Valium and barbiturates.

iii. **Antidepressants:** These drugs are given to the patients having lack of confidence. These are also called mood boosters. Examples are vital in, methedrine and cocaine etc.

Anti-malarials: Medicines used to bring down the body temperature during malaria fever are called anti-malarial. Malaria is characterized by clinically or periodic fever, anemia and enlargement of liver and spleen.

Choice of antimalarial drugs depends upon the point of its action on the life cycle of the malarial parasites. These are

a. Primaquine: It destroys sporozoites in the liver. It is too toxic and its long-term

use is not advisable.

b. Chloroquine, proguanil and pyrimethamine: These kill the parasites in blood.

Antacids: The compounds which reduce or neutralize acidity are called antacids. Some commonly used antacids are-

1. Baking soda containing $NaHCO_3$ and $KHCO_3$
2. MgO, $Mg(OH)_2$, MgCO3 and magnesium trisilicate
3. $CaCO_3$
4. $Al(OH)_3$, $AlPO_4$ and aluminum amino acetate.

Anti histamines : Antigens from environment and food create allergic reactions to our body. I n these situation histamines are released from certain cells of our body. These are the drugs which diminish or abolish the effects of histamines, a chemical released by mast cells during an allergic reaction. Some commonly used anti histamines are-

1. Diphenhydramine (Benadryl)
2. Pheniramine maleate (Avit and cough syrup)
3. Chlorpheniramine maleate (zeet)
4. Triprolidine (actidil)
5. Phenothiazine Promethazine (Phenogram)
6. Dime thin dane (forestall)
7. Antazoline (Antistine)
8. Chlorotheopyllinate salt (Avovner)

These drugs are used in the treatment of hay fever, mild asthma, insect bites, cold etc.

KNOW YOUR CARBON CREDITS

Prof. Tripti Gangwar
Dept. of Chemsitry
A.N. College, Patna

Social carbon adds value to sustainable development of society ad improve the livelihood of communities involved in climate change. The methodology focuses on the effective participation of communities in all processes, making it amenable to social control.

Carbon has come a long way from charcoal and diamonds, indeed. Carbon chemistry is still hot enough to capture Nobel Prizes: Carbon is a long-studied element, but that doesn't mean there isn't more to discover. A.L. Lavoisier proposed carbon in 1789 from the Latin carbo meaning "charcoal."The composition of the early atmosphere of the earth was carbon dioxide, nitrogen gas, water vapours, hydrogen gas and compounds having hydrogen atoms bonded to other light elements such as carbon, sulphur etc., that produced hydrogen sulphide, ammonia and methane.

Carbon is a chemical foundation on earth and a balance between carbon source (releases more carbon than it absorbs), carbon sink (any reservoir that absorbs more carbon than it releases) and a carbon store/stock (maintains a constant amount of carbon) contributes sustainable future. Carbon atoms move constantly through living organisms, the oceans, the atmosphere, and the Earth's crust. The ongoing rise in atmospheric CO_2, sustained by the massive release of fossil carbon by human activities, is the cause of ongoing and future climate change (IPCC-2021).

Short-term fluctuations in climate change progressively disappear from the record, almost certain that the sight of the connections between short-term events and multimillion-year climate and carbon cycle evolution is being lost. One of the main challenges for the scientific community is the prediction of the future evolution of Earth's climate and of the carbon cycle. The recent studies showed simulation of the role of land vegetation on the long-term evolution of the global carbon cycle and climate. Numerical models are not the tools to reconstruct past environments precisely but can be used to identify and quantify processes impacting the evolution of the carbon cycle and climate.

Social carbon adds value to sustainable development of society ad improves the

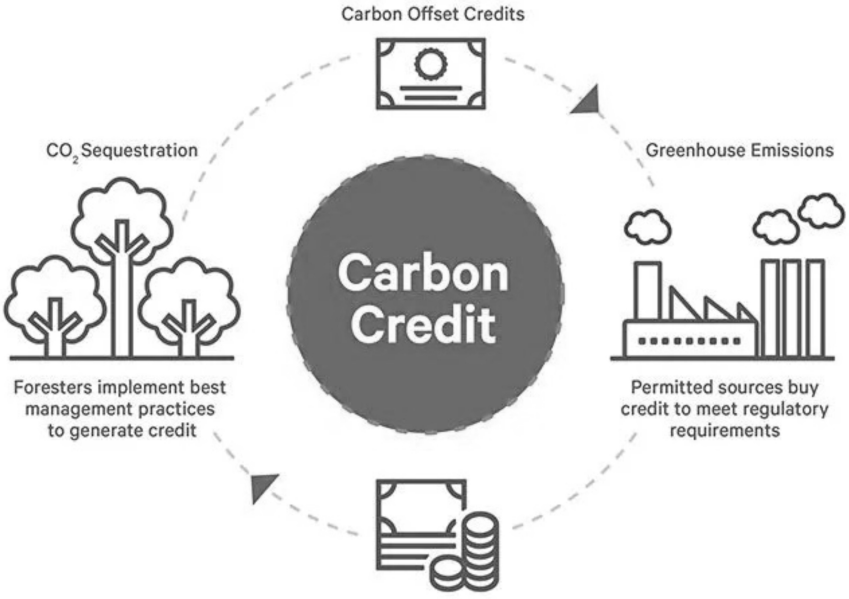

livelihood of communities involved in climate change. The methodology focuses on the effective participation of communities in all processes, making it amenable to social control. Enhanced sustainability resources help the community or company involved in carbon emission reduction projects, to achieve a sustainable process, generating carbon credits in addition to social, environmental and financial gains. Six resources contribute to the Social Carbon Methodology are Social, Human, Financial, Natural, Carbon, and Biodiversity. Impact of climate change can be evaluated by calculating social carbon credit. Thus, the demand and supply of carbon dioxide allowances focuses on market-based approaches to build a stronger, greener, more competitive economy. It brings together business, policy and academic leaders to help innovative ideas inform policy development. Go green know your carbon credits, reduce carbon footprints otherwise pay carbon tax to ensure that future generations have access to sustainable resources.

MINDFULNESS
The Way of Conflict Resolution

Prof. Shailesh Kr Singh
Dept. of Philosophy
A.N. College, Patna

Right mindfulness is the stage of intense contemplation and constant remembrance about the truth of the world and as a result gets us detached from all such worldly entities, attachment to whom is the major source of all the sorrows and conflicts.

This paper presents a broader view of the goal of the ethical and spiritual teaching of early Buddhism. The term early Buddhism stands for the teachings of Buddha himself based on his realization of truth. Later on, after the *Parinirvana* of Buddha there developed many schools of Buddhism interpreting the teachings of Buddha. Buddha's realization of Four Noble Truths at Bodh Gaya consists of: (i) life is full of suffering (ii) there is cause of suffering (iii) there is cessation of suffering and (iv) there is path leading to the cessation of suffering. The fourth noble truth reflects the ethical teaching of Buddha as contained mainly in the Noble Eight-Fold Path which is basically eight steps of gradual progression. Actually, the noble eight-fold path of the fourth noble truth is based on the realization of Buddha as regards the facts of human world that human beings are the community of sufferers. This realization of Buddha led him to develop a moral philosophy based on his metaphysical doctrine of change, the non-existence of soul and the non-existence of eternal spiritual substance like God so that the suffering beings get rid of all the sorrows and conflicts of life and the state of *nirvana* is attained.

As early Buddhism is based on the supposition of the non-existence of any spiritual reality Buddha's ethical teaching is a self-help program to attain the state of nirvana, a state which the moral practitioner attains by his own self efforts following the teachings of Buddha. So, the ultimate goal of Buddhist teaching and the practitioners/followers of it is the complete elimination of all the conflicts and sorrows of life in the state of *nirvana*. The state of *nirvana* is the culmination of the eight steps of (i) right views, (ii) right resolve (iii) right speech or control of speech (iv) right conduct (v) right livelihood (vi) right effort (vii) right *mindfulness or Samyak Smriti* (viii) right concentration or *Samyak Samadhi*

Buddhist Ethics like purity of conduct, purity of mind, moral perfection, moral truth, the role and significance of mindfulness have been highlighted in this paper. Greater emphasis has been laid on the crucial role of mindfulness, on the dimensions of mindfulness, importance of the stage of right mindfulness in noble eightfold path, impact of mindfulness in the moral upliftment of the moral agents and in their conflict resolution. It has also been expounded that in Buddhism mindfulness is considered as a prerequisite for Concentration or Samadhi leading to Nirvana which is the end of the all

sorts of sorrow, miseries and conflicts. With a purpose to present a version of Buddhist ethics in general and to focus on the mindfulness and its impact in particular I have relied on the writings of the celebrated thinkers of the area of Buddhist studies. For the sake of conceptual clarity I have no hesitation to quote their writings quite at length.

Buddhist Ethics rotates round a value which consists in the purification of mind or consciousness (Chitta). The value of the purification of mind becomes the source of other values like (i) Moral Perfection (ii) Peace and (iii) harmony. This outcome of the value of purification of the mind plays a big role in the resolution of the inevitable conflicts of life. Buddha regarded mind as the forerunner of all that takes place in the life of an individual and society. A particular state of mind is the cause of suffering and all the conflicts of life. Similarly, the other state of mind is the cause of all the good conditions of life. If with an impure mind one speaks or acts then suffering and conflicts follow because it gives rise to the attachment and grief over the loss for such things which are transitory in nature. If with a pure mind one speaks or acts then happiness springs. We can hold that as the central teaching of Buddhism envisages and illustrates that mind is the precursor of all evil and good conditions, the study of mind is at the center of Buddhist investigation. Finally, this investigation as the central theme of Buddhist teaching leads to Buddhist Ethics and its Value System. Buddhist Ethics and its Value System expounds the criterion of morality through the trinity of *Prajna, Sila and Samadhi* which in a way may be regarded as the constituents of *Dhamma.*

Buddha was interested in solving the practical problems only. How to exterminate suffering? Philosophical wrangling does not solve this problem. Idle theoretical speculation does not soothe the agony of suffering. It generates self-conceit, arrogance, and scepticism, So Buddha discourages philosophizing and emphasizes self-control, thoughtfulness, energy, activity, moral conduct, purity of mind, good will, love, compassion, and peace. (Jadunath Sinha, p. 310)

Early Buddhism as well as later schools of Buddhism in some way or the other attempts to understand the nature and function of mind and develop their own way to control, transform and reorient it for its purification so that the goal of moral perfection is realized by the moral agents. In this process, actually, mindfulness occupies significant place in Buddhism both as a form of meditation and also as a technique for the moral practitioners for having an insight of truth and the subsequent peace of mind. In this context Prof. H. S. Prasad holds that "Unlike other meditation systems, the Buddha does not embark on the realization of a transcendental reality, but uses the meditation techniques – calming, insight, and mindfulness – to cultivate a mental attitude which is the source of all embracing values – personal, social, and soteriological...first starting with the deconditioning of the mind from wrong views... he suggested his followers to suspend or disbelieve in the claims of tradition, hearsay, and metaphysical or divine structure, and so which lack moral concern. " (Prof. H. S. Prasad, page. 24)

Highlighting the importance of Mindfulness Huston Smith has said "No teacher has credited the mind with more influence over life than did the Buddha. The best loved of all the Buddhist texts, the Dhammapada, opens with the words, "All we are is the result of what we have thought." And respecting the future, it assures us that "all things can be

mastered by mindfulness." (Huston Smith, p.109)

Attaching great importance to mindfulness Edward Conze says "In Buddhist terminology, the first preliminary step is known as "mindfulness" (*smrti*), which is followed then by "ecstatic trance" (*samadhi*) and "wisdom" (*prajna*). The relation of the three is indicated by the following diagram.

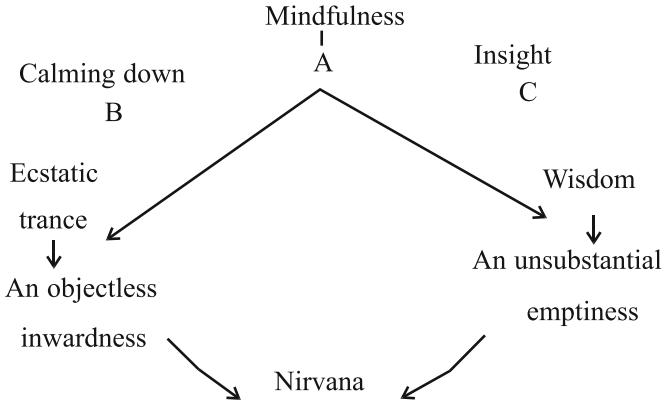

(Edward Conze, p.8)

The primary concern for Buddha is to end the misery and sorrow and not to expound metaphysical thoughts which are ethically useless and intellectually uncertain according to him. Buddha enlightened his disciples on the origin of sorrow, its cessation and path leading to its cessation. Generally, it is believed that Buddha taught a religion of intense self-effort which is devoid of the Super naturals, rituals, authority and tradition. Buddha condemned all forms of divination because, according to him, any appeal and reliance on the super naturals or the transcendent realities encourage monks to adopt shortcuts, easy answers and simple solutions that could only divert attention from the hard, practical and moral task of self-advance.

Buddha pursued an anti- metaphysical attitude as he regarded the Purity of heart and purity of conduct are the first step to enlightenment. Discipline of the intellect, emotion, and will is necessary for it. Sanctification of the whole personality is a prelude to enlightenment. Universal love and benevolence, compassion, and cheerfulness are stressed for moral culture. So Buddhism is not intellectualistic. (Jadunath Sinha, p. 328)

With this reformative goal Buddha expounded his concept of the purification of mind and moral perfection for the moral agents. In this context emphasis has also been laid on the significance of moral actions as it is believed that although purity of mind is the result of the purity of moral habits, it is the source of various other purities. The *Rathavinitasutta,* in this context, elaborates other such purities which may be analyzed as mental in nature. They are:

(i) Moral habits (silavisuddhi)

(ii) Purity of thought (chittavisuddhi)

(iii) Purity of View (dristivisuddhi)

(iv) Purity achieved through overcoming doubts (sanka vitranvisuddhi)

(v) Purity of knowledge and insight into the moral path (margamarg jnanadarshan visuddhi)

(vi) Purity of knowledge and insight into the course of action (pratipdajnana darshan visuddhi)

(vii) Purity of knowledge and insight themselves (jnana darshan visuddhi)

(viii) Purity which leads to the attainment of *Nirvana* without attachment (anupadaparinibbantya)

In the Noble Eight Fold Path of early Buddhism right mindfulness comes at the seventh stage. So, this stage comes after the stage called right effort and immediately before the culminating eighth stage of right concentration. As noble eighth fold path is the gradual and subsequential eight stages of cognitive and psychic progression, right mindfulness carries the elements of knowledge, mental control & vigilance and also of concentration. Right mindfulness is a combination of mental exercise as well as concentration. At this stage of Right mindfulness the moral agent attains a significant moral height and is at the threshold of *Samadhi*. So mindfulness paves the way to the final stage of Right concentration where the moral practitioner attains the state of *nirvana* and perfect wisdom where all the conflicts dissolve. Right mindfulness is a crucial aspect of any Buddhist meditation, and is a state of keen awareness of mental and physical phenomena as they arise within and around one. (Peter Harvey, p.70)

For the better conceptual clarity we can say that in the noble eight fold path Buddha has placed mindfulness in between right effort and right concentration because when one's speech, actions, and livelihood are free from harm, the mind is free from remorse, and this opens the way for the practice of concentration. This practice begins with right effort, which means persistence in avoiding and eliminating evil and unskillful mental qualities, and nurturing skillful mental qualities in their place. To do this involves right mindfulness, inasmuch as mindfulness is the primary skillful mental quality, necessary for the development of all other important skillful qualities, such as discernment, vigor, serenity, concentration, and equanimity. If mindfulness is lacking, one cannot know clearly which other skillful or unskillful qualities are present in the mind. Right mindfulness consists of focusing on any one of four foundations or frames or reference: the body in and of itself: feelings in and of themselves, mind-states in and of themselves: and mental qualities in and of themselves. (Robinson/Johnson, p,36)

In other words, mindfulness is necessary for the moral practitioners to constantly remember and contemplate the body as body, sensation as sensation, mind as mind, mental states as mental states and any of these should not be identified with "I" or "Mine", otherwise there arise attachment for nonentities or the perishable and thus grief & conflict over their loss. To quote Prof. H. S. Prasad here, "the transforming effect of mindfulness is such that the practitioner not only achieves the peace of mind, but also an insight into the things – mental and non-mental. Consequently, the false notion of 'I' as an eternal knowing agent and the source of unwholesome acts get dissolved. In an ethical sense, this is a big and crucial achievement as 'egoism' is dissolved and now the ground is ready for cultivating, through mindfulness, the social emotions like loving

kindness, compassion, sympathetic joy, and equanimity." (Prof. H. S Prasad, p.24)

Importance of mindfulness lies in its constant intellectual effort to ponder over the truths envisaged in the noble truths. The effort is not mere an understanding the truths but for an insight of the truth related to the nature of body and its impurities, nature of feelings, unwise mental engagements, true nature of dharmas etc. Through right mindfulness the moral aspirant experiences the truth himself by his own efforts and constantly keeps remembering the truth. So, according to Buddha, the aspirants need not and should not borrow the truths but must realize the truth.

In Buddhism the Right mindfulness consists in the recollection of the impurity of the body, the nature of feeling, pleasure, pain and neutral feeling, the nature of mind endowed with greed, hatred, and delusion, the nature of dharmas, five aggregates, sense-organs, sensible objects, means of enlightenment, and four noble truths. Thus Right mindfulness is and indispensable pre-requisite of right concentration. (Jadunath Sinha, p. 322)

Right mindfulness is the stage of intense contemplation and constant remembrance about the truth of the world and as a result gets us detached from all such worldly entities, attachment to whom is the major source of all the sorrows and conflicts. Through moral actions, purification of mind, realization and constant remembrance of truth Buddhism advocates to attain the ethical goal of detachment from worldly objects. Thus, the realization of truth and the subsequent remembrance of it through mindfulness plays a key role in the resolution of the conflicts of life and also paves the way for *nirvana*, the state of the complete cessation of all the miseries and sorrows of life.

1. Edward Conze, *A Short History of Buddhism*, Chetana Ltd, Bombay, 1960
2. Hari Shankar Prasad (Prof. H.S.Prasad), *The Centrality of Ethics in Buddhism*, Motilal Banarsidass Publisher Private Limited Delhi, 2007
3. Jadunath Sinha, Indian Philosophy, Volume II, Motilal Banarsidass Publisher Private Limited 3rd Reprint: Delhi, 2017/ Second edition: Calcutta, 1978
4. Peter Harvey, *An Introduction to Buddhism: Teaching, history and Practices, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd.*,1990
5. Robinson & Johnson, *The Buddhist Religion: A Historical Introduction*, - 4th ed, Wadsworth Publishing Company, USA, 1997
6. Smith, Huston., *The World's Religion*, 2nd edition, Harper San Francisco, 1991

Note: This paper which has been sent for the publication in the journal "Anugrah Jyoti"-2024 is based on my lecture delivered in the seminar held on the occasion of "Bodh Mahotsav 2024-" arranged by the Department of Tourism, government of Bihar and the District Administration, Gaya in collaboration with the Bodhgaya Temple Management Committee in January, 2024. The paper almost with the same content has been published in the journal *Prajna* published by the Bodh Gaya Temple Management Committee.

THE ESSENCE OF LEADERSHIP

Western Vis-a-Vis Indian Perspective.

Dr. Tanya Mukherjee
Associate Professor & Head
Dept. of Philosophy
A.N. College, Patna

"It is a very difficult task to take on the role of a leader. One must be a servant of servants and must accommodate a thousand minds. There must not be a shade of jealousy or selfishness, then you are a leader."

In early phases of evolution of the theory of leadership in management, the management thinkers propagated what is recognised as "Great Person Theory". It emphasised personal characteristics, values system and the life style of leaders. Ultimately, theory resulted in eliciting an exhaustive list of traits which is apparently ridiculous.

Attempts had been made to distil out these traits for business situations and some key attributes such as intelligence, social maturity, genuine respect for the people and achievement needs have been recognised for a successful leader.

Kast and Rosenzweig have later on observed, "but their presence does not ensure leadership success nor does their absence preclude it."

The management thinkers made a shift from their emphasis from *'What a leader is'* to *'What the leader does'*. White and Lippit have modified their approach and made it behaviour-oriented.

Ultimately, Vroom and Yetton confessed that leadership functions are important in group activities and not necessarily the responsibility of one person.

Furthermore, Bower and Seashore conducted the researches and identified the four effective dimensions of leadership, namely,

- Support
- Goal emphasis
- Interaction facilitation, and
- Work facilitation

Swami Vivekananda, in his sojourn to Chicago and other Americo-European cities, pragmatically lectured that since each work has to pass through the triple stages of ridicule, opposition, and then acceptance, *a leader must constantly remember that our best work is done, our greatest influence is exerted, when we are without thought of self,* i.e., *ego.* "Great things are done only by great sacrifices."

The secret of success of the westerners is the power of organisation and combination. That is only possible with mutual trust and cooperation and help. "It is

absolutely necessary for you, instead of frittering away your energy and often talking of idle nonsense, to learn from the Englishman the idea of prompt obedience to leaders, the absence of jealousy, the indomitable perseverance and the undying faith in himself.... Everyone should learn to obey before he can command."

Swamiji further warns us. "We complain of others in our failures. The moment I am unsuccessful, I say, so-and-so is the cause of the failure. In failure, one does not like to confess one's own faults and weaknesses. Each person tries to hold himself faultless and lay the blame upon somebody or something else, or even on bad luck."

Swamiji's exhortation is worth pondering and introspective analysis. "It is a very difficult task to take on the role of a leader. One must be a servant of servants, and must accommodate a thousand minds. There must not be a shade of jealousy or selfishness, then you are a leader."

The Western theories of leadership has been described in the Vedic literature. No doubt, the business management, as a body of knowledge, was not prevalent in those days, yet their pertinence and reasonableness are far beyond challenge. The Vedic literature is abundant in semantic symbols and images to convey the theories probably because "an eye is more receptive than an ear." Here, description was not by prescription but by symbolic inscription.

In consonance with this style of communication, the theory of leadership is symbolised in the form of Lord Ganesh, who is worshipped in the beginning of every function, whether it is religious, social or economic in the Hindu families.

The symbol of Ganesh provides the blend of the traits as well as behavioural theory of leadership. These theories have been lucidly described in the 'Ganapatistotram' and the 'Atharvasheersham', __ the prayers offered for the Lord.

What a leader *is* has been given in the Ganapatistotram, while what the leader *does* is explained in the Atharvasheersham.

At the outset, it may be argued that the very name of Lord Ganesh is a combination of two words, namely, 'Gana' meaning the people, and 'Isha' meaning the administrator. The definition of the term 'Isha', according to the Ishovasya Upanishad, is a person who is entrusted with the function of administration. Thus, Ganesh is manager of people.

His another name Ganapati makes him the leader of the people. Thus, the concept of leadership in the society has been symbolised in the form of Ganesh by the great seers. It is interesting to note that this symbol is not a proper noun but a common noun because he has been regarded as far beyond the dimensions of form, time, attributes and situation. Yet, he is a leader symbolised.

The authors of Vedic literature have given the image of Ganesh with a form of human body but with a head of an elephant and named as Gajaanan. Apparently this symbol is absurd and ridiculous. A human being is not without ego and so long as he has an ego he cannot be a perfect leader. In order to eliminate the concept of ego, they place the head of an elephant. It has thus been conveyed that no human being can be a perfect leader. Animals have little or no sense of ego. Therefore, animal head was chosen by them.

The next question that erupts is 'why the head of an elephant?' and why not of others? The elephant head had been selected with adequate consideration by the sages. What image does one draw if the head were that of a tiger, or a fox, or a pig, or any other animal for that matter? Every animal is normally associated with a fundamental attribute. For example, tiger with violence, fox with cunningness, while the elephant is associated with the attributes of bigness and calmness.

Moreover, his organs are communicative of important functions described in the foregoing lines. The elephant is an embodiment of grace, calmness, roughness and toughness. Furthermore, its eyes are straight with a downward slant, unlike that of a tiger or a pig, or even a deer. The leader should always have an eye on his path and avoid looking above towards the sky.

The Ganapatistotram describes the functional names of Lord Ganesh. He is named as 'Vakratunda' because his tusk is spherical which signifies that mouth is round in shape. The seers probably intended to communicate that a successful leader must be a 'vakratunda' and avoid direct speech. In other words, his words and language should be tactful and meaningful without calling a spade a spade.

In most of the organisations, conflicts arise because the leaders engage into straight talks. Now this symbolic elephant has only one tusk and hence, earned the name, 'Ekdanta'. It is a matter of common knowledge that a crippled person or animal is more cautious and conscious of his existence which in itself is a motivating factor for his effective and efficient functioning. Every leader ought to have such consciousness for his effective functioning.

He is 'Gajakarna'- possessing elephantine ears. Leader should have large ears to listen to what people say without reaction. Short-eared person cannot be a successful

leader because whatever he listens he conveys immediately to others. The 'Gajakarana' not only listens to the people with due attention but also digests them because he is also 'Lambodara'.

Reactive behaviour towards external forces result in tensions and stress and ultimately causes to reduce the capacity to function. A successful leader should not be reactive but responsive to external stimuli.

No leader would be successful unless he is flexible in his approach and dynamic in his action, in the absence of which he is likely to be alienated from his people. An anxious, over-stressed and tense flock can never feel aligned with their leader.

Lord Ganesh has also been connoted 'Dhrumavarna', that is, whose colour is like smoke. The colour of smoke is judged by the colour of environment. The colour as well as the forces of environment would engender the change in the colour and shape of the decisions of the leader. Ostensibly, his approach should be situational and flexible. One may recall what Vroom and Yetton suggested when they maintained that the manager should have no specific styles but rather should be dependent on the situations, if he intends to be more effective.

Last, but not the least, special attribute of Lord Ganesh is implied through his name 'Vinayak'. It indicates that he is a special leader, above all ordinariness, because in him one finds an ideal combination of physical power and supreme intelligence. He has an objective to remove the problems of his people.

Thus, one can easily aver that the concept of Lord Ganesh epitomises Indian theory of leadership.

SOURCES:

1. Selected televised episodes of *'Awakening with Brahmakumaris'*, a talk show between B.K. Sister Shivani and Suresh Oberoi, Bollywood actor.
2. Selected televised episodes of *'In Conversation with the Mystic'*, a talk show comprising several luminaries from different sections of society and Sadhguru Jaggi Vasudeva, spiritual guru.
3. Swami Vivekananda, *Complete Works of Swami Vivekananda*, Nine Volumes, Advaita Ashrama, Kolkata.

RADIOCARBON DATING

Dr. Anju K. Gupta
Associate Professor
Dept. of Chemistry
A.N. College, Patna

"Radiocarbon dating is an extremely useful technique for determining the ages of geological materials that have some organic derived carbon in them."

Carbon is found in different forms in the environment *viz.* Carbon-12 (^{12}C), Carbon-13 (^{13}C) and Carbon-14 (^{14}C). Out of these isotopes, Carbon-12 and Carbon-13 are stable whereas Carbon-14 is unstable and radioactive. The term "radiocarbon" is used for ^{14}C which is radioactive and has a half life of 5730 years.

The half-life ($t_{1/2}$) is the time required for a quantity of substance to reduce to half of its initial value. All radioactive decay obeys the following equation:

$$N = N_0 e^{-\lambda t}$$

Where, N_0 = the initial quantity of the substance

N = the quantity that is left over

t = mean lifetime of the decaying quantity

λ = decay constant

Carbon-14 is formed in the stratosphere and upper troposphere by the bombardment of cosmic ray neutrons on Nitrogen-14 and distributed evenly throughout the atmosphere.

$$_7N^{14} + _0n^1 \longrightarrow _6C^{14} + _1H^1$$

All organisms absorb carbon from the environment continuously in the form of both carbon-12 and carbon-14 in the same relative proportion that they existed naturally. When an organism dies, it stops absorbing carbon and the total carbon-14 content in the organism start decaying. Since, the half life of carbon-14 is 5730 years, it means that 5730 years after the organism dies,

half of its ^{14}C will decay into nitrogen whereas after 11460 years, only one-fourth of its original carbon-14 will remain. Thus, by measuring how much Carbon-14 concentration relative to carbon-12 is left, the age of an organism, since death, may be determined.

Collection of the radiocarbon samples

For the radiocarbon dating, proper care and handling of the sample is required and therefore, the following procedure should be followed:

- Collection of radiocarbon samples should be done before any kind of glue or preservative is applied.
- The sample must be collected with the help of excavation knife or spoon or clean towel.
- The amount of sample collected should always be greater than the required level.
- Plastic bags, glass containers, unpainted metal containers or aluminium foil are used to store the sample but the containers should be first rinsed with pure alcohol or acetone.
- The sample should be completely dry before sealing the containers. If it is wet, it must be dried thoroughly under shadow before packing otherwise fungus may grow on damp samples which will incorporate radiocarbon from the atmosphere.
- Labelling of sample on the plastic bag or aluminium foil is done before final placing.
- Sample should be properly labelled and information like site name, method of collection, date of packing, etc. has to be mentioned.

Purification and extraction of carbon from samples

In case of leaves, plants, wood, nut, grains, fibres and fruits, Acid-Base-Acid (ABA) pretreatment method is done in which Acid (HCl) is used to remove any soil carbonates, Base (NaOH) is used to remove any soil humic acids and Acid (HCl) is again used to neutralize the remaining base. The sample is then washed and dried. It is then weighed and put in vacuum with CuO. It is then pumped to high vacuum and then heated to get carbon as CO_2. It is further freeze to remove water and sulphur/nitrogen oxides. Purified CO_2 is then removed for the measurement of ^{14}C.

For charcoal, ABA is the standard pretreatment method. Other materials like teeth, bones require different pretreatment and extraction protocols.

Measurement of Radiocarbon

The standard decay counting laboratory method to quantify the radioactivity of mostly alpha-and beta- emitting isotopes are:

(i) Geiger-Muller Counter

(ii) Liquid Scintillation Counting

In both the methods, during measurement, only a tiny fraction of radiocarbon in the sample decays, therefore, large samples and long time period are required to get dates with reasonable precision. Both the methods have now become almost obsolete.

Now days, Accelerator Mass Spectrometry (AMS) is a more efficient way to measure radiocarbon content of a sample with high precision and low backgrounds. In this method, the Carbon-14 content is measured directly relative to the Carbon-12 and Carbon-13. The method does not count alpha or beta particles but the number of carbon atoms present in the sample and the proportion of the isotopes. The main advantage of this technique is that it requires small sample size (20-500 mg) whereas analysis by the conventional method requires large quantity of the sample. In addition, the Accelerator Mass Spectrometry (AMS) is a highly sensitive method of counting atoms and is used for measuring the concentration of rare isotopes that cannot be detected with conventional spectrometers. The AMS technique takes less time to analyze samples and has a run time of a few hours per sample compared to radiometric dating methods that can take up to one or two days.

Limitation

Carbon-14 has a short half-life and after seven half-life years, the β-particle emission rate becomes very low which makes it difficult to detect. Carbon dating techniques can be used with accuracy for items that are 40,000 years old but this time range may be extended up to 70,000 years with the help of a technique known as 'isotopic enrichment'.

Carbon-14 dating method cannot be used to determine the age of non-living things like rocks. In such cases, dating methods other than carbon dating are used. In these methods, decay of radioactive elements other than Carbon-14 which may be present in the material becomes the basis for the dating method. For example, in Potassium-Argon dating method, Potassium-40 having a half-life of 1.26 billion years decays to Argon and their ratio can give a clue about the age of rocks. In Uranium-Thorium-Lead dating, the radioactive isotopes of Uranium and Thorium decays to give the stable lead isotope. The age of the material can be determined by taking the ratios of these elements present in the material.

Remarkable Achievements
AWARDS WOMEN WIN

Dr. Seema Prasad
Assistant Professor
Deptt. of English
A.N. College, Patna

Within our bodies we bore the race. Through us it was shaped, fed and clothed …labour more toilsome and unending than that of man was ours…No work was too hard…no labour too strenuous to exclude us".
- Oliver Schreiner

Recently Bama was awarded the Verchole Dalit Literary Awards, 2024. The news rekindled a sense of love and admiration for the writer and for many other women authors for their exceptional contribution in literature. Names of women writers of different genres and cultures crossed the mind. Bama, Alice Walker, Toni Morrison, and Margaret Atwood are a few of the many writers who have reviewed and reported experiences of history and marginalization. They have been awarded prestigious awards such as the Pulitzer Prize, the Booker Award, and the Noble Prize for their hard work. These awards are acknowledgements and gratitude for their outstanding contribution to literature and society.

Thoughtful reading involves the dynamics of formulating relationships with authors and the characters they create. We live in a world where there are many worlds; and authors introduce us to them. The conversational tone of expression enables the reader to identify with the author. Alice Walker, in her novel, *The Colour Purple* (1982), written partly in an epistolary form, goes back in history to give voice to the silenced African woman of the early 20th century. Through her writing, one cannot help but empathise that before art is created and literature takes shape, there is a human who has shared and suffered throat-choking experiences, agonies and pain – sometimes of oneself and sometimes of others. It is through the commonality of experiences that women bond with others across the world and exhibit a solidarity that goes beyond region and culture.

Bama, in the Indian context, is recognized for her remarkable portrayal of the predicament of Dalit women. Her novels *Karukku* (1992) and *Sangati* (1994) retain the vernacular title though the book has been translated from Tamil into English and French. In works such as these, powerful narratives spring forth from autobiographical elements with a strong purpose of shaking societal structures. Defending human

dignity Bama writes: "I told myself that we must never allow our minds to be worn out, damaged, and broken in the belief that this were our fate. Just as we work hard so long as there is strength in our bodies, so too, must we strengthen our hearts and minds in order to survive."

The female tradition of writing moves beyond literary contribution as the line between fiction and lived experience is very thin and often blurred. Dalit women writers like Bama, Urmila Pawar, Hira Bansode and African-American writers like Toni Morrison and Alice Walker explain how the intersection of caste/race, gender and patriarchy lead to further marginalization of women. Authors have taken a recourse to writing powerful narratives which are, at their crux, stories of resistance. Poignant narratives are infused with autobiographical elements, paving the way for what the post-colonial scholar, Gayatri Spivak calls "strategic essentialism" – a strategy where marginalized groups temporarily put aside their differences and present a unified front in order to achieve specific goals. Diverse female lives are portrayed to reflect universal experiences, based at this intersection. Margaret Atwood, in her book, *The Handmaid's Tale* speaks of the subjugation of women and the fragility of their lives through a fictional narrative. Toni Morison, Bama, Urmila Pawar and many others create human awareness of social issues revolving around caste, class/race, gender and patriarchy.

These shared experiences create spaces of solidarity, often with the potential to effect meaningful change. Behind the intimate glimpses of resistance and resilience, activism has always been a working force. In one of her famous collection of essays, *In Search of Our Mother's Gardens'*, Alice Walker coined the word, 'womanism'. Through the essays and letters, written between 1966 to 1982, Walker addresses women and offers ways of achieving change through examples taken from history. She emphasizes upon the synthesis of freedom and expression as an important tool to bring about change.

On the other hand, one source of discrimination perpetuates other forms of trauma. The dehumanization of slaves in Toni Morison's *Beloved* leads to denial of desires and basic human rights such as that of motherhood. Bama's *Karukku* and

Dalit women writers like Bama, Urmila Pawar, Hira Bansode and African-American writers like Toni Morrison and Alice Walker explain how the intersection of caste/race, gender and patriarchy lead to further marginalization of women.

Sangati include a number of anecdotes detailing the pain and grievances of the Paraiah women. She speaks about a sordid acceptance of physical violence, polygamy and sexual exploitation of young girls like Mariamma in *Sangati*. Common threads of such stories across continents and time periods signal the shared nature of women's experiences, a reminder of the importance to continue engaging with their work.

Cultural uniqueness and references enable women's expression to discuss the complexities of identity and subjugation. In doing so, they draw on their immediate contexts. One aspect of this is through the titles of their works. For instance, Bama takes the title, "*karukku*" from a palm leaf, the edge of which is serrated on both sides, like that of a double-sedged sword. The garden which Alice Walker talks about is a space of peace; the gardener's life however means something else. Alice Walker titles her novel, *The Colour Purple,* to suggest empowerment and a commitment to social justice. The colour had played an important role in the logos used by women in the suffrage movement of the 1900s. The same colour became symbolic of healing properties, mystical and spiritual qualities. Toni Morison's *Beloved* (1987) combines lyrical prose while delving deep into the legacy of slavery.

The achievements of these writers are marked by a lifetime of commitment to women's causes. To get this far, they have merged boundaries and broken barriers. Writers represent a collective history of womanhood; their constructs serve as lighthouses and beacons of motivation for future generations. These women writers have earned rewards, yet have given so much back to the world. How much we owe to them! Their inspirational value cannot be measured.

Advancing Women's Rights through Gender Sensitization : Analyzing Practices and Impact

Dr. Henna Tabassum
Associate
H.O.D., Deptt. of Sociology
A.N. College, Patna

"Human rights are women's rights, and Women's right are human right"

-: Hillary Clinton

Introduction

The transformation of human rights from a feminist perspective is crucial to addressing global challenges to human rights in the twenty-first century (Peters and Wolper, 1995). India being a country of full of diversity where people have variation in cultural and religion resides and creates a variety in cultural, religious and social behavior. The protection of human right of the citizens in a concrete form is extremely important to any country. Obviously it is an essential object of any country for the whole developments and for the peaceful existence of citizens with variations of that country. Campaigning may be a power full tool in the present scenario to run towards the positive social change and reforms. Besides this fact, the role of media, legislation, and the judiciary definitely cannot be overlook. Media being forth pillar of the government acts as a powerful instrument for the enforcement and protection of human rights for the group of educated people, for educational institutions and for the governmental and nongovernmental organizations of the state. The Indian legislation have been quite successful to describe the human rights as, "The right to life and personal liberty, equality and dignity of the individual which is guaranteed by the constitution of India, embodied in the international reforms and these rights are enforceable by courts in India" under the Human Rights Act, 1993. The State shall not deny to any person equality before law or the equal protection of laws within the territory of India. and State shall not discriminate against any citizen on grounds of religion, race, caste, sex, and place of birth or any of them through the judicial instruments (like Public Interest Litigation, Judicial Activism, expansion of Article 21, writ petition) and speedy trials the role of Indian Judiciary as actual protector and guarantor of human rights of individuals is also very important.

Women's Rights as Human Rights:

According to Walby, gender-based violence directly affects wages, absence, and work incapacity, reflecting productivity losses. However, it is to be added that costs can also be reflected in health systems, given the need to provide mental and physical

support for victims(Walby,1990). In addition, costs can also be reflected in the legal and criminal justice system, personal costs, social welfare, and other psychological costs. From a legal perspective, it took many decades for the phrase 'Women's rights are human rights' to become a statement absorbed by law. The Declaration of Elimination of Violence Against Women, from 1993, was the first instrument to define and address forms of violence against women. It was consolidated in 1995 with the Beijing Declaration and Platform for Action, which settled 12 critical areas in which to advance women's rights. The UN Millennium Declaration also set goals for 15 years, whereas the gaps and barriers could be addressed by the agenda of the Sustainable Development Goals. Despite advancements in law and politics, the legal system is made by people with their own biases and beliefs, influencing results and advancements in this field. In many places worldwide, judges are not expected to consider offenders not guilty of domestic violence, elevating the perception of impunity. Moreover, a legal apparatus is only sufficient for treating the root causes hidden in our culture and the elements perpetuating the status quo.

The United Nations General Assembly resolution, adopted on 25 September 2015, sets a clear time frame to achieve gender equality through its Sustainable Development Goal (SDG) 5: all forms of discrimination against women and girls must be eliminated by 2030. This goal recognizes that gender equality is a fundamental human right. But it is also a response to the fact that gender inequality remains a global challenge, considering that women and girls still suffer disproportionately from discriminatory practices and violence worldwide (IOM,2017).

Gender- based Violence : A Human Rights Paradigm:

Gender- based violence is not the only form of human rights abuse that women suffer, but it is one in which the gender aspect of such abuse is often the most clear (Peters and Wolper, 1995). Women around the world nevertheless regularly suffer violations of their human rights throughout their lives, and realizing women's human rights has not always been a priority. Achieving equality between women and men requires a comprehensive understanding of the ways in which women experience discrimination and are denied equality so as to develop appropriate strategies to eliminate such discrimination(UN,2014). Attaining equality between women and men and eliminating all forms of discrimination against women are fundamental human rights and United Nations values.

Gender Sensitization:

Women are the center point of every society, and the need of Gender Sensitization is required for the well-being of our future generations to safeguard and encourage their fundamental rights. Gender sensitization is the process of changing the stereotype(categorize) mindset of the society-a mindset that strongly believes that male and female are 'unequal entities', and hence should function in different socio-economic space (Dash, Srinath & Sadangi, 2008). In other words, gender sensitization "is about changing behaviour and generates empathy into the views that we hold about

our own and the other gender." It helps people in "exploring their personal attitudes and beliefs and enquiring the 'realities' they thought they know" (Aksornkool, Joerger & Cindy, 2008). Gender sensitization refers to the alteration of behaviour by raising awareness of gender equality concerns. This can be done by conducting various sensitization campaigns, training, workshop, programs, etc (Sharma, 2016). Hence, Gender sensitization training is given in schools, colleges and other professional institutions for bringing about institutional changes (Das, 2016).

Government of India is implementing various schemes and legislations to address various forms of gender discrimination. The root cause of gender discrimination is the patriarchal mind set prevalent in the Indian society. Though this mind set is changing with urbanization and education, still there is long way to go for a permanent change in the scenario (PIB, GOI).

Government of India has already enacted a number of legislations to prevent exploitation/ harassment of women and to address the issues of discrimination and gender disparity. These include 'The Right of Children to Free and Compulsory Education (RTE) Act, 2009', 'The Criminal Law (Amendment) Act, 2013', 'The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005', 'The Dowry Prohibition Act, 1961', 'The Indecent Representation of Women (Prohibition) Act, 1986', 'The Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act, 2013'; 'The Prohibition of Child Marriage Act, 2006', 'The Equal Remuneration Act, 1976', 'The Maternity Benefit (Amendment) Act, 2017' and the 73rd - 74th Amendment of the Constitution mandating 33% reservation for women in the local governance. The Criminal Law (Amendment), Act 2013 has been enacted making the punishment more stringent for offences like rape, sexual assaults, etc (PIB, GOI 2022).

Apart from this, the Government of India is implementing various schemes to overcome gender disparity and provide equal status to women in the country. The schemes being implemented by Ministry of Women and Child Development for welfare of women are:

- Swadhar Greh Scheme to provide relief and rehabilitation to destitute women and women in distress,
- Beti Bachao Beti Padhao (BBBP) to improve the Child Sex Ratio and enabling education for the girl children,
- Ujjawala a Comprehensive Scheme for prevention of trafficking and rescue, rehabilitation and re-integration of victims of trafficking and commercial sexual exploitation,
- Rashtriya Mahila Kosh (RMK) to provide loan to poor women through Intermediary Microfinancing Organisations (IMOs), Non-Governmental Organisations (NGOs) to promote their socio-economic development,
- Working Women Hostels (WWH) for ensuring safe accommodation for women working away from their place of residence.

These Laws were enacted with a bona fide intention of protecting women against various types of discrimination, Sexual Harassment, and Injustice. However, as time passed, there were many cases in society where these laws could be misused. There are many examples where it can be seen that women exploit these laws for their benefit. In India, Laws made are Gender-specific, which means some laws protect the Rights of a woman but no law protects the rights of a man. Women misuse the laws made for their protection against men, due to which sometimes an innocent man is also considered guilty. But now it is not the case, violence is no longer confined only to women. Men are also physically, emotionally, and sexually assaulted. They do not report this abusive behavior since the laws in India the law favors women (Gupta, 2023).

Concluding remarks:

In a nutshell, the issue of human rights is not only significant in theory but in practice it has also became a debatable part of philosophy of the history of all over the world, as well as of the present scenario. There is a need to promote SDG5, which is supportive of gender sensitization that create opportunities and decent health and well-being for women to become equal players in the affairs of world management as enshrined in SDG16. Economies that are lagging behind in their efforts to become fully gender sensitive should be bolstered, while at the same time emphasizing practical gains that can be availed to society in general, on account of their willingness to embrace issues.

References:

- Kerr, J., Sprenger, E., & Symington, A. (Eds.). (2004). *The future of women's rights: global visions and strategies*. Zed books.
- United Nations. Turning Promises into Action: Gender Equality in the 2030 Agenda.
- Inglehart, R.; Norris, P. Rising Tide: Gender Equality and Cultural Change around the World; Cambridge University Press: Cambridge, UK, 2003
- UN Women. End Violence against Women and Girls; UN Women: New York, NY, USA, 2023.
- Asish Kumar Das, Prasant Kumar Mohanty; Human Rights in India,, Sarup& Sons, New Delhi,2007.
- BasuDurga Das Introduction to the Indian Constitution, 2009.
- Singh J.P., "Indian Democracy and Empowerment of Women", The Indian Journal of Public Administration, Oct-Dec, Vol. XLVI, No. 4, 2000, pp. 619.
- Sylvia, W. A. L. B. Y. (1990). Theorizing patriarchy. *Oxford: Basil Blackwell Articles scientifiques et chapitres de livres ANDERSSON Bengt-Erik (1992)«Effects of Day-Care on Cognitive and Socio-Emotional Competence of Thirteen-Year-Old Swedish Schoolchildren» Child Development*, *63*(1), 20-36.
- https://pib.gov.in/Pressreleaseshare.aspx?PRID=157951
- https://www.ijllr.com/post/misuse-of-women-centric-laws-in-india-an-analysis#:~:text=In%20India%2C%20Laws%20made%20are,man%20is%20also%20considered%20guilty

Heritage Tree : Reconciling with Our Past and Present

Dr. Shabana Karim
H.O.D., P.G., Dept. of Botony
A.N. College, Patna

A heritage tree could be described as a tree of biological, cultural, ecological or historical interest because of its age, size or condition, rarity, aesthetical, historical values associated with the historical personalities, place or even myths and customs.

Heritage tree is an important aspect of human life. It does not only give us identity but also connects us to our past generation. Every culture is a reflection of its Heritage. One of the most interesting aspects of heritage is the connection of human beings with nature. Their interactions with plants, medicinal herbs, shrubs & trees in the past and the day to day life as well. These practices of interaction with nature beautifully considered into our culture and heritage.

Thus some of the trees became an important part of our life and culture like Peepal (***Ficus religiosa)***, Banyan (***Ficus benghalensis or Ficus indica)***, Pakad (***Ficus virens)***, Neem ***(Azadirachta indica)***, Tamarind **(*Tamarindus indica*)**, Mahua (***Madhuca longifolia)*** and Mahogany (***Swietenia mahagoni)*** etc. These trees are also described as Heritage trees. These trees are worshipped and recognized for their intrinsic holiness. Peepal tree is considered to be sacred in the Hindu religion since ancient period. Pakad and Banyan tree is associated with the ***Vat-Savitri Puja*** and other ritual means. Besides these other trees are also considered as heritage trees which are standing for more than 50 years. They provide shelter and habitat for insects, birds and animals. Their big crown and canopy with enormous branches full of leaves provides shades and a seating area which show the emergence of custom and community development of people.

Thus a heritage tree could be described as a tree of biological, cultural, ecological or historical interest because of its age, size or conditions. Heritage tree are an integral and valuable part of our ecological and cultural landscape and are often among the oldest living floras of the country.

Large old trees are often called heritage trees because of their natural and cultural significance as they function as a critical habitat for a wide array of species in large landscapes (Dean et.al 1999; Jim 2017).

Heritage trees are very important even to be integrated into our culture and way of life. They are a tangible connection to the past which reminds us about our older ways of doing custom and rituals. A time where co-existing with nature was a normal thing.

A comprehensive definition of a heritage tree by Aird (2005) is "A notable specimen

because of its size, form, shape, beauty, age, colour, rarity, genetic constitution or other distinctive features, a living relic that displays evidence of cultural modification by native or non-native people".

These Heritage trees are considered as legacy or forest heritage, as they play an important role in sustaining the ecology and environment in the areas of habitat. They not only clean the environment but are also a source of natural resources for the benefit of mankind and are necessary for the future generations. They are the home of various kinds of insects, birds and animals. Thus they are crucial part of Biosphere.

Large Heritage tree play a significant role in providing ecological services and maintaining the ecosystem functioning in various ecosystem (Lindenmayer et.al 2013 & Laurance 2017).

Large old trees are often called heritage trees because of their natural and cultural significance as their function is critical in the habitat for a wide array of species in large landscapes (Dean et.al 1999; Jim 2017).

Research has shown that greater species richness is an important mitigator of environmental stress including tree pests and diseases. The presence of native tree species has been shown to promote the establishment of other native organisms such as insects, birds and animals increasing the ecological integrity of the urban forest ecosystem.

The decline of large old trees would negatively influence the environment and the species that depend on them may even face the risk of local extinction, thus affecting the ecological integrity. (Manning et.al Lindenmayer et.al 2013 & Laurance 2017).

Thus we should conserve Heritage trees properly and preserve them for biodiversity. Several measures can be taken to conserve Heritage trees:-

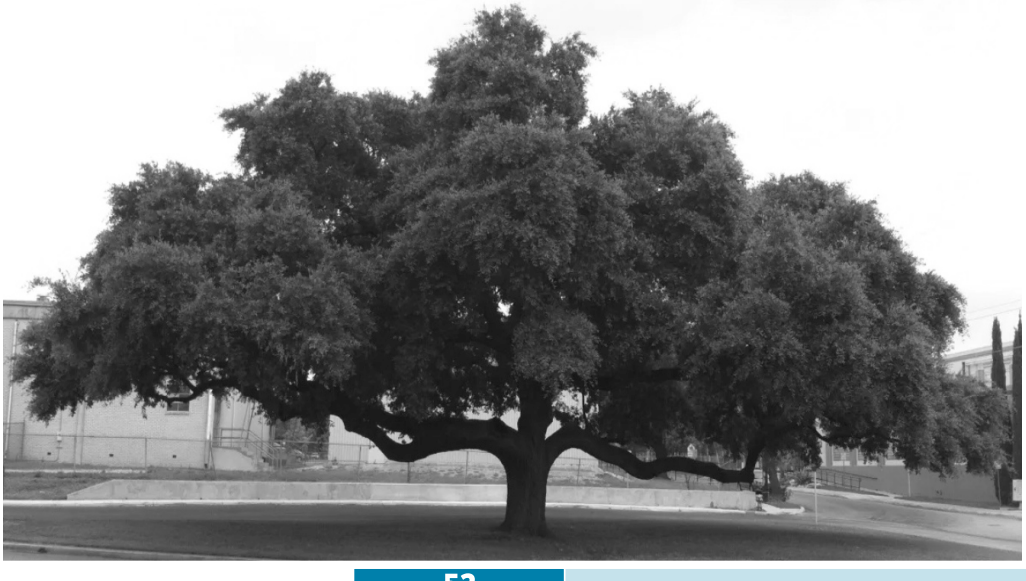

Conservation of Heritage trees:-

1. The conservation of natural heritage refers to the protection, care, management and maintenance of ecosystems, habitats, wildlife species and populations within or outside of their natural environments in order to safeguard the natural conditions for their long term permanence.
2. There are several cultural policies adopted by the government in order to conserve these trees.
3. These policies glorify the importance and achievements of these heritage trees.
4. Heritage tree conservation committee can be established in every district aiming for its conservation.
5. There should be listing of heritage trees according to their areas so that it could be easily regulated by the respective committees.

Some steps could be implemented to save our heritage trees properly:-

1. Promoting the importance and value about these "Heritage Trees" in order to cultivate a positive temperament in the society.
2. Increase plantation awareness in our society and community as well.
3. Volunteer ourselves to tree plantation.
4. Online campaigning to save these heritage trees.
5. Enhance greenery to establish or to improve our climate, to protect plants and these heritage trees so that our ecosystem becomes green, clean and sustainable biosphere for living beings.

Conclusion :

Thus heritage tree contribute to our environment through providing oxygen by the process of photosynthesis, improving air quality, climate improvement, conserving water, preserving soil and supporting wildlife. A heritage tree could be described as a tree of biological, cultural, ecological or historical interest because of its age, size or condition, rarity, aesthetical, historical values associated with the historical personalities, place or even myths and customs. Their large crown and many branches full of leaves providing shades, seating area, shelter to various insects, birds and animals. So heritage tree should be conserve properly for biodiversity and environment.

Key Words: Heritage, Photosynthesis, Medicinal, Holiness, Biodiversity.

References: Newspaper article, Internet and books related to Heritage tree.

CAPITALIST PRODUCTION IN DIGITAL ERA

The promise of the 'fourth industrial revolution' like its predecessors will remain unfulfilled for the working class as long as capitalist relation of production – the buying and selling of labour power and commodity production remain the dominant form of organizing work in human societies.

Dr. Binod Kr Jha
Dept. of Political Sc.
A.N. College, Patna

The world Economic Forum summit in 2016, stunned its representatives with a bold statement : Digital production has ushered mankind into a 'fourth Industrial Revolution', where the speed of current breakthroughs has no historical precedent and developments are 'evolving at an exponential rather than a linear pace. Regardless of the merits of such a historic statement there is, nevertheless, little doubt that the meteoric ascent of the digital economy is remarkable by any parameter of success. With global access to the internet ever on rise, especially in the third world countries where large reservoirs of populations remain an 'untapped market' for digital production, one can be certain that digital corporations will exert an ever greater economic and social influence in the future economy.

The spectacular rise of digital economy has given birth to a number of theoretical discussions, that seek to assess the economic implications of these new forms of production. Scholars have approached this question from different perspectives, and consequently have arrived at very different conclusions on how, and to what extent, digital innovation will transform human lives. The general consensus in most of the mainstream discussions is that the impact of the digital revolution is, on the whole, a positive one. What has received a lesser attention in these discussions, is the impact that digital production will have on labour.

In this paper, we have tried to address the gap in the literature by developing a political economy theoretical frame-work, that allows us to focus on questions pertaining to digital labour. Although there are multiple analytical frameworks within the broad political economy tradition, we have preferred Marxian framework, because it provides the clearest understanding of the relationship between technological

change and the matrix of social relations within which human produce and consume goods and service.

In recent few years, some discussions have taken place related to political economy of digital labour and production. We can divide the entire theoretical discussions into two broad categories, a group of theories that follow the work of Hardt and Negri which assert that 'immaterial' labour represents the demise of value theory altogether and a second group of theories that responds to these skeptical claims, by showing how the conceptual apparatus of value theory is in fact applicable—albeit certain nuances—to the digital production. **The latter group of theories are themselves split into two sets of alternative explanations :**

(1) The rent-based approaches, that argue that face-book and other similar companies do not produce anything, rather they charge a rental fee for 'use of space'.

(2) The audience-labour approaches, that accept that production takes place in these companies, and argue that the 'audiences' of websites and applications perform unpaid labour without ever realizing.

Not going into the details, we can say that the recent debates revolve around four main issues:

(1) How does one understand website/cellular applications to be commodities as in Marx's Capital, especially given the fact that in most cases a price is not charged for viewing them?

(2) How does a change in the patterns of 'labour-time' under digital labour alter the premises of 'abstract labour'in Marx's value theory?

(3) What role do audiences (users of website/application) play in the entire economic process?

(4) From a value theory standpoint, does 'production' take place in digital corporations at all, or is the labour performed more akin to 'rent-seeking', unproductive labour?

To answer the above-mentioned questions, we may present a theoretical framework that allows us to situate the production processes of digital enterprises in the context of capitalist production. But before we can assess whether the activities of digital companies can be described as capitalist forms of production, we must first understand how these corporations actually mint money, that is we must develop an understanding of their 'revenue processes'.

Two major digital corporations (Google and Face-book) who are monopolistic competitors in the sense that although they produce the same commodity, they have different specialization within this industry : Google specializes in delivering in search-based promotion services to its clients, while Face-book provides information

generated promotion services. Both corporations are members of the Fortune-500 companies. Given the fact that both these corporations have managed to achieve this coveted position in a relatively short time period, the profit rate of these corporations are spectacular, even by historical standard.

Now a question emerges, what is the revenue process that has resulted in these massive rates of expansion? This process can be explained and summarized as a two-stage process. In first step, the digital corporation generates a 'network of users' that creates 'traffic' on its website. In this step the corporation seeks to extract as much personalized information as possible from the 'user' during what seems like a 'free interaction' in the sense that the user is not charged a price in this interaction. The desirable result from the perspective of the digital corporation, is that the set of free services offered by the website-search engine in the case of Google and social interaction in the case of Face-book- result in the generation of traffic on the website. Once a significant threshold level of traffic is generated then, in step two, the corporations find a way of monetizing the traffic that it has generated by allowing others to promote their message to specific group of users. Thus, as more varied and diverse groups of users get connected to the network produced by the corporations, it attracts an equally diverse range of customers from all across the globe. How each firm generates traffic on its website varies from company to company but the general revenue model is the same : traffic generation, followed by monetization of that traffic.

Now coming to our basic question as to how can this two-stage revenue process discussed above be understood as occurring on a capitalist basis? In order to answer this question, first of all we must clarify what do we mean by capitalism, which is itself a question of intense debate within Marxian tradition.

In contrast to orthodox approaches to Marxism, which views capitalism as a system of 'private ownership of the means of production', Resnick- Wolf and Gibson- Graham have shown, a surplus based approach, that provides the clearest exposition of Marx's unique understanding of the mode of production.

Following their insights, and Marx's discussion in Capital, we will rely on Marx's circuit of capital model to understand capitalist production, as it provides summarized understanding of capital as 'value-in-motion.

Capital which goes into the sphere of circulation and is exchanged for labour power and means of production, it then leaves the sphere of circulation and enters the realm of production, where the capitalist must 'productively consume' the commodities that have been purchased from the market. The productive consumption of these two commodities yields a new commodity, which is pregnant with surplus-value. This then returns to the spheres of circulation and realizes itself as capital. Capital for Marx is self –valorizing value or value that is in the process of increasing itself.

Thus, to talk about capitalist production- as a social relation- in any concrete form of economic activity, we must look for two kinds of social interaction :

(1) The buying and selling of labour power.

(2) The selling of the produced commodity to a customer. Minus any one of these two conditions, an economic process cannot be understood as being a capitalist economic process from the perspective of Circuit of Capital.

Given this model, one can examine any concrete case of production and ask the following questions:

(1) Who furnishes the initial capital and in what proportion he allocates the capital to purchase labour power and means of production,

(2) Who are the productive workers.

(3) What is the commodity in any concrete case.

(4) Who is the buyer. These are the questions which directly emerge from the above-mentioned model.

We will try to answer these questions by taking working of Google as a case example.

Google derives over 75% of its revenue from a feature known as 'Adwords'. All keyword searches made by users on their website are run via an algorithm to sort relevant information, and delivery of most relevant one to users. The use of this algorithm is free, and which generates a huge amount of traffic on the website. This is step one of the revenue generation processes. This does not generate revenue for the firm, but merely generate the traffic that will be monetized in next step. Roughly Google processes more than 40,000 searches per second, but none of these searches are commodity in themselves. Revenue generating process necessitates the intervention of a customer, willing to pay for promotion services in that traffic generating network. This consists in converting those keywords searches into a monetizeable activity. This Google does by converting every keyword search to tailor the display of its advertisements for each specific user. Here the main point is not who the buyers are, but rather that there are people who are willing and able to buy the commodity and extract its use-value promotions on wall. Since there is a demand for this labour, the production of digital promotion on a capitalist basis constitutes a new and independent branch of the social division of labour.

Once we have settled the issue that a commodity is being sold by Google, now we can enquire about the production of this commodity. A number of labour processes have to be performed for 'promotion services'. A host of software experts must write and run the algorithm, network specialists must design the server connections and marketing specialists must focus on the features. It is clear that the commodity (promotion

services), the sale on which results in the profit for the firm has to be produced through the labour of these individuals. All these types of labour are performed in the circuit of production.

Thus, the two stage of revenue process of Google can easily be summarized with in Marxian circuit of capital model. This is seen as soon as firstly the distinction between user and customer is properly understood. The goal of the business model is to sale of the product as a use value to the latter by luring him/her into the network. The former (user of the website) is an unavoidable middle, a mere condition of existence for this concrete kind of capital to serve as a capital. The latter, the client is the active agent in the realization of surplus value. Thus, while former is not charged, the flipside of his/her free consumption is the forced consumption of unsolicited content from the latter.

But whether the profit of the Google is just the result of surplus-value extraction from the workers they directly hire, the answer is certainly not. A host of independent labourers spreads out all across the globe, also upload content that they themselves produce, incurring the labour as well as non-labour costs independently. It is crucial here to remember that from the perspective of the Circuit of Capital model, this is not capitalist production. Rather this traffic and the promotion services that result from it are the product of independent workers, since the transactions did not take place, even though they engage in commodity production. The digital corporations only facilitate the sale of promotion services which resulted from traffic generated by the labour of the independent workers. For performing the role of middle man in this arrangement, these corporations charges these individual a fee, this fee is a distribution out of the revenue made by independent labourers.

As we see, the firm's profits are the result of unpaid labour extractions from these people in addition to surplus value appropriated directly from their own workers. To summarize, digital profits cannot be made without the production of online promotion services—the commodity produced and sold by Google. Promotion services in turn cannot be produced without the labour of individuals directly hired by these companies as well as the labour of independent workers spread out all across the globe.

To present a clear and consistent theoretical account of capitalist production in digital corporations, we have offered in this paper a Circuit of Capital model that is consistent with Marx's analysis of capitalism in Capital. This allows us to first and foremost distinguish the commodity that digital corporations produce, 'promotion service.' The free searches that users are allowed to conduct on Google, that baffles audience-labour and rent–theorists alike are not the commodity sold by these companies. Rather it is the sale of promotion services in that free network that is being produced and sold

on a commodity basis by these companies. We saw that it is only once that the commodity (and hence the customer) is clearly identified that we can even begin to talk about the direct producers, who engage in the act of producing promotion services on a capitalist basis. This we saw consisted of two main type of unpaid labour extractions:

(1) Those made from workers directly hired by these firms; direct surplus appropriations, and

(2) Those made from independent labours, uploading their content on these platforms, from whom these corporations receive surplus value distributions.

Thus, digital production does not mark the end of Marxian theory of value as Hardt and Negri and others have concluded. Digital space represents a new site for the exploitation of labour by capital. The promise of the 'fourth industrial revolution' like its predecessors will remain unfulfilled for the working class as long as capitalist relation of production – the buying and selling of labour power and commodity production remain the dominant form of organizing work in human societies.

स्वामी विवेकानन्द का हिन्दु धर्म में योगदान

डॉ. संजय कुमार
सह-प्राध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

दुखद तथ्य यह है कि आज अधिकांश हिंदुओं को स्वामीजी द्वारा हिंदू धर्म में किए गए महान योगदान के बारे में पता नहीं है। हम सभी का कर्त्तव्य है कि हम स्वामीजी के इन योगदानों का गहराई से अध्ययन करें, उनके वास्तविक महत्व को समझें और उन्हें व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन में प्रभावी बनाने का प्रयास करें।

स्वामी विवेकानन्द सर्वोच्च कोटि के वेदान्तिक संन्यासी थे, जो लगातार अतिचेतन (superconscious) क्षेत्र में रहते थे। ''एक प्रबुद्ध आत्म पर कौन सा निषेध लागू हो सकता है जो तीन गुणों से परे पारलौकिक पथ पर स्वतंत्र रूप से चलता है?'' फिर भी, पूरी तरह से प्रकाशित आत्मा होने के बावजूद, स्वामी विवेकानन्द ने एक सच्चे संन्यासी का जीवन जीया। अपने संपूर्ण सार्वजनिक जीवन (जो केवल साढ़े नौ वर्ष तक चला) के दौरान स्वामीजी ने मानवता के कल्याण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन योगदानों को तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है हिंन्दू धर्म में योगदान, भारत के उत्थान में योगदान, और विश्व संस्कृति में योगदान। स्थान की कमी के कारण, मैं यहां केवल हिन्दू धर्म में स्वामीजी के योगदान के बारे में चर्चा कर रहा हूँ।

1. पहचान और एकता

स्वामी विवेकानन्द ने हिन्दु धर्म को एक उचित पहचान, समग्रता और पूर्णता प्रदान किया। स्वामीजी के परिदृश्य में आने से पहले, केवल कई संप्रदाय थे, जिनमें से प्रत्येक कमोबेश स्वतंत्र थे, प्रत्येक दूसरे पर श्रैष्ठता का दावा करते थे। इन सभी संप्रदायों के सामान्य आधार के रूप में हिंदू धर्म की कोई स्पष्ट समझ नहीं थी। सिस्टर निवेदिता ने स्वामी विवेकानन्द के संपूर्ण कार्यों के परिचय में लिखा है : 'धर्म संसद के समक्ष स्वामी के संबोधन के बारे में, यह कहा जा सकता है कि जब उन्होंने बोलना शुरू किया तो यह ''हिंदुओं के धार्मिक विचारों'' के बारे में था, लेकिन जब वह समाप्त हो गया, हिन्दू धर्म का निर्माण हो चुका था।' यह स्वामी विवेकानंद ही थे जिन्होंने पहली बार दिखाया कि समग्र रूप से हिंदू धर्म में कुछ बुनियादी अवधारणाएं हैं जो सभी संप्रदायों के लिए समान हैं। ये बुनियादी अवधारणाएँ हिंदू धर्म को उसकी विशिष्ट पहचान देती हैं। स्वामी विवेकानन्द ने हिन्दू धर्म को न केवल पहचान दी बल्कि एकता भी प्रदान की। स्वामाजी स्वयं हिंदू धर्म की एकता के प्रतीक बन गए (न कि किसी नए संप्रदाय के प्रमुख के रूप में)। अपने व्याख्यानों और पत्रों के माध्यम से उन्होंने हिंदुओं की चेतना जगाई, उन्हें उनकी साझी विरासत की याद दिलाई और हिंदुओं के बीच एकता के बंधन को मजबूत किया। स्वामी जी ने हिंदुओं को 'साझा समुदाय' की भावना दी।

2. हिंदू धर्म की समृद्ध विविधता का संरक्षण

हिन्दू धर्म संस्थाओं, रीति-रिवाजों, प्रथाओं, विश्वास-प्रणालियों, दर्शन, पंथों, देवताओं, धर्मग्रंथों आदि का

एक विशाल समूह है जो इसकी आश्चर्यजनक विविधता का निर्माण करता है। श्री रामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द ने सम्पूर्ण हिन्दू धर्म को उसकी समस्त विविधता के साथ स्वीकार किया। उन्होंने संपूर्ण वेदों, ज्ञान कांड और साथ ही कर्म कांड को स्वीकार किया : अन्य सभी ग्रंथ जैसे पुराण और इतिहास; शैव, शाक्त और वैष्णव जैसे सभी संप्रदाय; दर्शन के सभी विद्यालय जैसे अद्वैतवाद, द्वैतवाद, आदि; सभी साधु-संत; मूर्ति पूजा से लेकर भगवान के रूप में मनुष्य की पूजा तक सभी प्रकार की पूजा; सभी अनुभव, मिथक और किंवदंतियाँ। श्री रामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द ने सभी विविधताओं को स्वीकार और पुनर्जीवित करके उन्हें संरक्षित करने में मदद की।

3. सार्वभौमीकरण

प्राचीन काल में, सनातन धर्म या भारतीय उपमहाद्वीप का शाश्वत धर्म एक सार्वभौमिक धर्म था, इस अर्थ में कि यह सभी के लिए खुला था। यह भारत में लाए गए विभिन्न विदेशी समूहों और पंथों को समाहित कर सकता था। लेकिन मध्य युग के दौरान हिंदू धर्म ने विदेशी तत्वों के लिए अपने दरवाजे बंद कर दिए और एक संकीर्ण जातीय धर्म बन गया। स्वामीजी ने अपने लिए जो कार्य निर्धारित किए उनमे से एक हिन्दू धर्म को एक बार फिर सभी लोगों और जातियों के लिए खुला सार्वभौमिक धर्म बनाना था। स्वामी जी ने हिंदू धर्म को न केवल सार्वभौमिक बल्कि गतिशील भी बनाया। उन्होंने हिंदुओं में मिशनरी उत्साह का संचार किया। वह चाहते थे कि भारत का आध्यात्मिकता का प्राचीन संदेश दुनिया के सभी हिस्सों में फैले और सभी लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान मिले। उन्होंने उपदेश दिया; 'उठो भारत, और अपनी आध्यात्मिकता से दुनिया को जीतो।'

4. हिंदू धर्म का उत्थान

19वीं सदी के अंत में पश्चिम में लोगों की भारत और हिंदुओं के बारे में राय खराब थी। हिंदु धर्म को अंधविश्वासों का धर्म माना जाता था, और हिंदुओं को मूर्तियों, गाय और सांप की पूजा करने वाले लोगों के रूप में माना जाता था। पश्चिमी में स्वामी विवेकानन्द के कार्यों की एक उपलब्धि इस गलत दृष्टिकोण को बदलना था।

स्वामीजी के अनुसार, धर्म में एक आवश्यक आंतरिक कोर और एक गैर-आवश्यक बाहरी आवरण होता है। गैर-आवश्यक आवरण में मिथक, अनुष्ठान, रीति-रिवाज, त्यौहार आदि शामिल हैं। आवश्यक मूल में आध्यात्मिकता शामिल है। स्वामीजी ने दिखाया कि अध्यात्म के क्षेत्र में हिंदू धर्म अन्य सभी धर्मों से श्रेष्ठ है। हिंदू धर्म की प्रधानता इस तथ्य से आती है कि हिंदू आध्यात्मिकता आध्यात्मिक दुनिया के शाश्वत सत्य और नियमों पर आधारित है।

विज्ञान की कई शाखाएँ हैं जैसे भौतिकी, रसायन विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, प्राणीशास्त्र, आदि। लेकिन वे सभी भौतिक जगत के शाश्वत और सार्वभौमिक सत्य और नियमों पर आधारित हैं। इसी प्रकार विश्व के विभिन्न धर्म आध्यात्मिक जगत के शाश्वत एवं सार्वभौथ्तक सत्य एवं नियमों पर आधारित हैं। इन आध्यात्मिक सत्यों और नियमों की खोज सबसे पहले भारत के प्राचीन ऋषियों ने की थी। हम भौतिक क्षेत्र में विज्ञान की श्रेष्ठता को स्वीकार करते हैं। स्वामीजी ने कहा, उसी प्रकार, दुनिया को आध्यात्मिक क्षेत्र में हिंदू आध्यात्मिकता की श्रेष्ठता को पहचानना चाहिए। चूँकि आध्यात्मिकता के शाश्वत सार्वभौमिक सिद्धांत, जो सभी धर्मों का आधार हैं, प्राचीन हिंदू संतों द्वारा खोजे और व्यवस्थित किए गए थे, इसलिए हिंदू धर्म को सभी धर्मों की जननी माना जाना चाहिए। स्वामीजी द्वारा हिंदू धर्म की आध्यात्मिक श्रेष्ठता की स्थापना ने हिंदुओं को अपने धर्म के प्रति गौरव प्रदान किया है, और उन्हें अपनी आध्यात्मिक विरासत की महान संपदा के प्रति सचेत किया है।

कई पश्चिमी विद्वानों (जैसे मैक्स वेबर) और कुछ भारतीय धार्मिक नेताओं ने हिंदू धर्म को भारत के पतन और पिछड़ेपन का कारण बताया था। इसलिए वे हिंदू धर्म में 'सुधार' करना चाहते थे। स्वामी विवेकानन्द ने स्पष्ट रूप से दर्शाया कि भारत के पतन का कारण हिन्दू धर्म नहीं था; वास्तविक कारण सामाजिक था - गरीब जनता की उपेक्षा और महिलाओं की उपेक्षा।

5. उपनिषदों का महत्व

हिंदू धर्म में स्वामी विवेकानन्द का एक और योगदान लोगों के बीच प्राचीन भारतीय ऋषियों द्वारा खोजे गए आध्यात्मिक जगत के शाश्वत सत्यों और नियमों के अभिलेख के रूप में उपनिषदों के महत्व के बारे में जागरूकता फैलाना था। उपनिषद मिलकर वेदांत का निर्माण करते हैं। वेदांत शब्द का प्रयोग उपनिषदों में दर्ज शाश्वत आध्यात्मिक सत्य और उन पर आधारित दर्शन प्रणाली के अर्थ में भी किया जाता है।

स्वामीजी ने वेदांत को धर्म के सार्वभौमिक दर्शन के रूप में स्थापित करने के लिए निम्नलिखित समर्थन प्रदान किए। स्वामीजी ने दिखाया कि उपनिषदों में प्रकट शाश्वत सत्य आधुनिक विज्ञान के विरोधाभासी नहीं बल्कि पूरक हैं। वास्तव में, वेदांत को 'चेतना का विज्ञान' माना जा सकता है। स्वामीजी ने उपनिषदों और अन्य धर्मग्रंथों की आधुनिक भाषा में ऐसी व्याख्या क, जिसे सामान्य व्यक्ति भी समझ सके। वास्तव में, स्वामी विवेकानन्द के कार्यों के माध्यम से ही भारत और अन्य देशों के लाखों लोगों ने वेदांत के मूल सिद्धांतों की कुछ समझ हासिल की है।

स्वामीजी ने केवल वेदांत की पारंपरिक व्याख्याओं का ही पालन नहीं किया : उन्होंने वेदांत क समझ और व्यावहारिक अनुप्रयोग में भी मौलिक योगदान दिया। उन्होंने अद्वैत को नकार के दर्शन से बदलकर ब्रह्म की महिमा और शक्ति की पुष्टि के दर्शन में बदल दिया।

6. योग को आध्यात्मिक अनुशासन के रूप में लोकप्रिय बनाना

हिंदू धर्म में योग के महत्व को आज जो मान्यता प्राप्त है वह काफी हद तक स्वामी विवेकानन्द के प्रभाव के कारण है। इस क्षेत्र में स्वामीजी का कार्य निम्नलिखित था।

स्वामीजी ने आध्यात्मिक अनुशासन के रूप में उच्च योग को शारीरिक मुद्राओं से और योग को मानसिक शक्तियों से अलग

किया। दूसरे, स्वामी जी ने योग को वेदांत का व्यावहारिक पहलू बनाया। गीता के रचयिता श्रीकृष्ण ने वेदांत और योग को संयोजित करने का पहला प्रयास किया। लेकिन बाद की शताब्दियों में वेदांत के प्रभुत्व के कारण योग उपेक्षित हो गया। श्री रामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द ने आधुनिक विश्व में वेदांत और योग को पुनः एक करके संतुलन स्थापित किया।

स्वामीजी ने चारों योगों में से प्रत्येक में मौलिक योगदान दिया। सभी संकायों के विकास और सर्वांगीण व्यक्तित्व के विकास के साधन के रूप में स्वामीजी का 'योग के संश्लेषण' का विचार हिंदू आध्यात्मिकता में स्वामीजी का एक और योगदान है।

7. व्यावहारिक वेदांत

स्वामीजी ने दिखाया कि वेदांतिक सिद्धांत न केवल व्यक्ति को मुक्ति प्राप्त करने में मदद करते हैं, बल्कि यदि उन्हें व्यावहारिक जीवन में लागू किया जाए, तो उन्हें रोजमर्रा की जिंदगी की समस्याओं का सामना करने या हल करने में भी मदद मिलती है। जहाँ पारंपरिक अद्वैतवादियों ने ब्रह्म के पारलौकिक पहलू पर जो दिया, जबकि श्री रामकृष्ण और स्वामी विवेकानंद ने इसके अंतर्निहित पहलू पर जोर दिया। अन्तर्निहित पहलू दो सिद्धांतों पर आधारित है : (ए) मनुष्य का वास्तविक स्वभाव न तो शरीर है और न ही मन बल्कि प्रत्यागात्मन या आंतरिक स्व है; (बी) परमात्मा या सुप्रीम सेल्फ सभी लोगों में अंतर्यामी, आंतरिक नियंत्रक के रूप में निवस करता है। ये दो सिद्धांत, यदि जीवन में लागू किए जाएं, तो जीवन के प्रति हमारा संपूर्ण दृष्टिकोण बदल सकते हैं और निम्नलिखित क्षेत्रों में हमारे लिए बहुत मददगार हो सकते हैं।

नैतिक जीवन : पारंपरिक नैतिकता मजबूरी और ईश्वर के भय या प्रतिशोधात्मक कर्म के डर पर आधारित है। लेकिन अगर कोई अपने वास्तविक स्वरूप को आत्मा के रूप में सोचता है, तो नैतिकता जीवन का एक स्वाभाविक तरीका बन जाती है; और कोई अपने शरीर या मन का दुरुपयोग नहीं करेगा।

स्वयं पर विश्वास और जीवन की समस्याओं का सामना करने का साहस : यदि किसी व्यक्ति को यह एहसास हो जाए कि उसकी आत्मा में एक दिव्य केंद्र है, तो वह अनायास ही अपने आप पर विश्वास और जीवन की समस्याओं का सामना करने के लिए आंतरिक साहस महसूस करेगा।

प्रेम और सेवा : यदि कोई व्यक्ति यह समझ ले कि सभी लोगों में अंतरतम आत्मा के रूप में सर्वोच्च आत्मा का वास है, तो अन्य लोगों के प्रति उसका दृष्टिकोण अनायास ही प्रेम और सेवा की भावना में बदल जाएगा। यह विचार

भारत को छोड़कर दुनिया के अधिकांश हिस्सों में मठवाद में गिरावट आ रही है। पश्चिमी दुनिया में ईसाई मठवाद का पतन हो रहा है क्योंकि यह आधुनिक जीवन की चुनौतियों का सामना करने में असमर्थ है। भारत में भी अद्वैतवाद अब नाजुक दौर से गुजर रहा है। इसी संदर्भ में हमें स्वामी विवेकानन्द द्वारा अद्वैतवाद को एक नई दिशा देकर और आध्यात्मिक जीवन के शाश्वत सिद्धांतों को तेजी से बदलते आधुनिक समाज के अनुरूप ढालकर पुनर्जीवित करने के प्रयासों को समझना होगा।

हमेशा हिंदू धर्मग्रंथों में निहित था, लेकिन सामाजिक जीवन में शायद ही कभी इसे लागू किया गया। स्वामी विवेकानन्द ने इसे सामने लाया और इसे सामाजिक जीवन में लागू किया, विशेषकर लोगों को गरीबों, दलितों, बीमारों और उपेक्षितों की सेवा करने के लिए प्रेरित किया।

8. हिंदू मठवाद का कायाकल्प, पुनरुद्धार और पुनर्गठन

भारत को छोड़कर दुनिया के अधिकांश हिस्सों में मठवाद में गिरावट आ रही है। पश्चिमी दुनिया में ईसाई मठवाद का पतन हो रहा है क्योंकि यह आधुनिक जीवन की चुनौतियों का सामना करने में असमर्थ है। भारत में भी अद्वैतवाद अब नाजुक दौर से गुजर रहा है। इसी संदर्भ में हमें स्वामी विवेकानन्द द्वारा अद्वैतवाद को एक नई दिशा देकर और आध्यात्मिक जीवन के शाश्वत सिद्धांतों को तेजी से बदलते आधुनिक समाज के अनुरूप ढालकर पुनर्जीवित करने के प्रयासों को समझना होगा।

हिंदू मठवाद के इतिहास में एक महान हस्ती स्वामी विवेकानंद हैं। अपने गुरु, श्री रामकृष्ण के स्पष्ट आदेश पर, स्वामी विवेकानंद ने रामकृष्ण मठ के नाम से जाना जाने वाला एक नया मठवासी आदेश अस्तित्व में लाया, जो तेजी से बदलते भारतीय समाज और हिंदू लोकाचार की जरूरतों और विश्व मामलों में भारत की नई भूमिका के अनुकूल था। इससे हिंदू मठवाद का महत्वपूर्ण कायाकल्प हुआ है। स्वामीजी द्वारा मठवासी जीवन में लाए गए कुछ परिवर्तन संक्षेप में नीचे दिए गए हैं।

उनके द्वारा शुरू किया गया पहला परिवर्तन सामाजिक कल्याण के लिए मठवासी जनशक्ति का उपयोग करने से संबंधित है। चूँकि संन्यासी स्वार्थी इच्छाओं और संसार के प्रति आसक्ति से मुक्त होते हैं, इसलिए उनके पास मनुष्यों का भला करने की एक संभावित रूप में महान शक्ति होती है, और यदि इस शक्ति को एक उच्च दिशा दी जाए, तो यह शीघ्र ही सामाजिक समृद्धि और प्रगति ला सकती है। स्वामीजी की इस योजना में मुख्य बाधा यह विश्वास था कि संन्यासी सामाजिक दायित्वों से मुक्त होते हैं और कर्म योग करने की आवश्यकता से ऊपर होते हैं।

स्वामी जी ने अपने गुरू श्री रामकृष्ण द्वारा प्रतिपादित सेवा के नये आदर्श का पालन करके इस बाधा पर विजय प्राप्त की। श्री रामकृष्ण ने सिखाया कि मनुष्य की सेवा भगवान के रूप में की जानी चाहिए (शिवज्ञाने जीव-सेवा)। इस प्रकार रामकृष्ण मिशन के संन्यासियों द्वारा किया गया कार्य समाज सेवा नहीं बल्कि भगवान की पूजा है। श्रद्धेय माधवानंदजी महाराज ने एक बार बताया था कि हमारे संन्यासियों द्वारा किया गया कर्म योग भक्ति योग का ही विस्तार है। श्रद्धेय गमीरानन्दजी ने इसे 'सेवा-योग' कहा। इसलिए रामकृष्ण मिशन को एक सामाजिक सेवा संगठन के रूप में नहीं बल्कि एक आध्यात्मिक संगठन के रूप में माना जाना चाहिए।

रामकृष्ण मिशन में, बाहरी तपस्या की तुलना में संन्यासियों की आंतरिक शुद्धता पर अधिक जोर दिया गया है। हमारे संन्यासियों के लिए गेरुआ वस्त्र आंतरिक पवित्रता और त्याग की अग्नि का प्रतीक है। रामकृष्ण मिशन के संन्यासी तपस्या, त्याग और सादगी के मठवासी सिद्धांतों से समझौता किए बिना, भोजन, पोशाक, यात्रा, संचार आदि में आधुनिक जीवन शैली का पालन करते हैं।

गैर-सांप्रदायिक दृष्टिकोण : श्री रामकृष्ण किसी संप्रदाय से नहीं थे, लेकिन उन्होंने सभी संप्रदायों के प्रति सम्मान दिखाया और कभी भी किसी भी संप्रदाय की आलोचना नहीं की। रामकृष्ण संप्रदाय के संन्यासी किसी संप्रदाय के नहीं हैं; वे विभिन्न अखाड़ों के संन्यासियों के साथ-साथ वैरागियों, योगियों और अन्य लोगों के साथ स्वतंत्र रूप में मिल सकते हैं। मिशन की एक अन्य विशेषता जाति, धर्म या नस्ल के भेदभाव के बिना सभी के लिए खुलापन है।

अनुग्रह ज्योति

मठवासी जीवन के आधार के रूप में प्रेम : यह रामकृष्ण मठ के मठवाद की एक और महत्वपूर्ण विशेषता है, जिस पर, हालांकि, अधिक ध्यान नहीं दिया गया है। अधिकांश हिंदू मठों में सामुदायिक जीवन का आधार संन्यासियों की एक दूसरे पर निर्भरता या गुरू के प्रति निष्ठा या एक सामान्य आदर्श के प्रति निष्ठा है। लेकिन रामकृष्ण संप्रदाय में सामुदायिक जीवन का आधार श्री रामकृष्ण का अपने शिष्यों के प्रति महान प्रेम, पवित्र माता का मातृ प्रेम और गुरु के प्रत्यक्ष शिष्यों द्वारा प्रदर्शित भाईचारे के प्रेम की महान परंपरा है। रामकृष्ण संप्रदाय के सभी संन्यासी एक ही माता-पिता की संतान की तरह रहते हैं। अपने भाईयों के प्रति उनका प्रेम सामान्य मानवीय लगाव नहीं है, बल्कि दिव्य प्रेम, आध्यात्मिक प्रेम है, जो सभी मानवीय रिश्तों को दिव्य बनाता है।

अनुशासन : अनुशासन प्रेम से कम महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभाता है। वास्तव में, रामकृष्ण संप्रदाय का मठवाद कए सख्त आचार संहिता और लिखित नियमों में अद्वितीय है जो न केवल संन्यासियों के व्यक्तिगत जीवन को बल्कि पूरे मिशन के प्रशासन को भी नियंत्रित करता है। सख्त अनुशासन को संन्यासियों द्वारा स्वेच्छा से स्वीकार करने से मठवासी व्यवस्था की पवित्रता, आध्यात्मिक शक्ति और कार्यकुशलता को बनाए रखने में मदद मिलती है।

आदर्श के रूप में रामकृष्ण : वर्तमान युग में श्री रामकृष्ण मठवासी जीवन के दो उच्चतम आदर्शों, अर्थात् काम कांचन (वासना और लालच) का त्याग और मुक्ति या मुक्ति के साधन के रूप में ईश्वर-प्राप्ति के आदर्श अवतार के रूप में खड़े हैं। इसलिए स्वामी विवेकानन्द ने सन्यासियों के सामने श्री रामकृष्ण के जीवन को सर्वोच्च आदर्श के रूप में रखा। श्री रामकृष्ण की छवि आधुनिक दुनिया में त्याग, बेदाग पवित्रता और दिव्य प्रेम का सबसे उत्कृष्ट प्रतीक है। संन्यासियों के लिए, श्री रामकृष्ण की पवित्र छवि प्रेशा मंत्र के रूप में कार्य करती है, जो उन्हें तीनों लोकों के आकर्षण से परे जीवन के अंतिम लक्ष्य की ओर ले जाती है। श्री रामकृष्ण का ध्यान मन को शुद्ध करता है, व्यक्ति के कार्यों को पवित्र करता है और उसके दृष्टिकोण और रिश्तों को दिव्य बनाता है। संपूर्ण रामकृष्ण संप्रदाय रामकृष्ण आदर्श पर केंद्रित है जो इसकी पहचान है, जो इसे अन्य मठवासी आदेशों से अलग करता है।

दुखद तथ्य यह है कि आज अधिकांश हिंदुओं को स्वामीजी द्वारा हिंदू धर्म में किए गए महान योगदान के बारे में पता नहीं है। हम सभी का कर्त्तव्य है कि हम स्वामीजी के इन योगदानों का गहराई से अध्ययन करें, उनके वास्तविक महत्व को समझें और उन्हें व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन में प्रभावी बनाने का प्रयास करें।

RECLAMATION OF ACIDIC WASTELAND BY FLY ASH APPLICATION-AN ECO FRIENDLY APPROACH OF WASTE DISPOSAL THROUGH LEGUME CULTIVATION

The improvement of the amended soil was reflected by the increased rate of germination survival at maturity. Increase in number of leaves, Leaf area, early flowering & fruiting. Increased yield per plant in terms of higher number so seeds per body and mean seed weight for 100 seeds. Trace element analysis of the seed of the crap revealed that the concentrations of elements like zinc, copper, magnesium, molybdenum and boron were well below the permissible toxicity limits.

Dr. Pushpa Singh
Associate Professor
Dept. of Botany
A.N. College, Patna

The quantum of fly ash production in India is increasing very fast with setting up of more and more new thermal power plants besides the existing ones. Normally the fly ash generated in damped in fly ash dykes in open arable lands or in water bodies. This needs to be handled with an objective to minimize the air, water & soil pollution caused by such large scale dumping of fly ash. A pot culture investigation on two leguminous crop vigna radiate L and rica faba L was carried out as basis to study the possibility of cultivation of legumes in the fly ash amended acid red laterite soil of Southern part of Jharkhand. The different doses of the fly ash to the soil brought significant change in soil PH, texture, porosity & water holding capacity due to the high PH & prevalence of silt sighed particles in the fly ash. The improvement of the amended soil was reflected by the increased rate of germination survival at maturity. Increase in number of leaves, Leaf area, early flowering & fruiting. Increased yield per plant in terms of higher number so seeds per body and mean seed weight for 100 seeds. Trace element analysis of the seed of the crop revealed that the concentrations of elements like zinc, copper, magnesium, molybdenum and boron were well below the permissible toxicity limits. The increase in the number of root nodules in the higher dose of fly ash was also observed. At the same time it can help in reducing the expense towards fertilizer by marginal & small farmers for improving the soil quality & supplementing the necessary micro nutrient elements to the crop.

When coal in burnt in coal fired power plants at a temperature of 1350-1650 digress Celsius for power generation. Three general types of ashes are produced fly ash, bottom ash & boiler slag. Of these the major part is fly ash produced as a by product (waste) of the process. Of the 100,000 MW electricity generated in India about 70%

based on coal live to law caloric valve & high (35%-45%) ash content on an average 12 tones of coal per day in required to generate one MW of power. In the eastern India particularly in the state of Jharkhand & West Bengal Damodar Valley corporation is the major power generating company. It produce both thermal as well as hydel power. How ever the total thermal Power being generated is 2710 MW (Chandrapura, Bokaro, Durgapur & Mejia TPPS as against 144 MW power of hydel power generated at Tilaiya, Maithon. Thus the generation of fly ash is also destined to go higher and higher.

The disposal of fly ash owing to its huge quantum requires not only large chunk of land bit at the same time causes a potential threat to the environment, ecosystem and ecological balance by polluting air, water and land. Thus there is a great potential to recycle fly ash and convert a troublesome bi-product into a useful material only 13% is recycled and lagoon re-cultivation is still in its experimental stage.

Ash disposal, its sustainable utilization without damaging the environment has become a major and challenging issue to the environmentalists. In India the utilization of fly ash is only 40% of total flay ash produced.

Chemically fly ash is a heterogeneous mixture of amorphous and crystalline phases and is a ferro-allumino-silicate mineral with Al, Ca, Fe, K, Na and Si as predominant elements, lesser amount of Zinc, Copper, manganese, Boron and numerous other trace elements like molybdenum, nickel and cadmium in plant available from and smaller amount of phosphates & carbonates. It contains all the elements similar to that of soil except humus & nitrogen however composition of fly ash depends mainly upon geological and geographical factors related to coal deposits, operating conditions of the furnace and the type of ash collection devices with increasing environmental awareness and stringent laws coming in force the conventional landfill and lagoon disposal of fly ash is unlikely to comply with its present rate of generation & utilization.

Furthermore the progressively shrinking availability of arable land for its disposal also has necessitated looking for environment friendly and gainful utilization of this thermal power waste. Therefore, the disposal of fly ash becomes a problem unless, it is used more sustainably without causing appreciable harm to air, water & soil resources.

Land application of fly ash to agricultural crops may offer a sensible distributed waste recycling alternative to landfill disposal, provided their positive value in crop growth can be demonstrated and they do not contaminate the food chain or environment. The most likely agronomic use for this material is to substitute lime or fertilizer as soil amendment. Red lateritic acid soils are low in organic matter, nitrogen, phosphorus. Hence in the management of these soils, generally, chamical fertilizers are used due to ready availability and quick yield response. The indiscriminate and continues use to high levels of such chemical fertilizers often leads to nutritional imbalance particularly for micro-nutrients which ultimately causes deterioration in physic-chemical properties of soil and steadily decreases crop-yield.

In acid soil, like that of Chhotangapur, nutrient Imbalance, either deficiency of

toxicity, is one of the main reasons of low productivity. Therefore periodic liming becomes essential to exploit the naturally occurring elements available in the soil by increasing the PH to the favorable range or near neutrality. However it times, leming may be economically non viable. So alternatively industrial wastes like fly ash may be identified as potential source of soil amendment, which is abundantly available in the area. It also serves the suitable disposal problem of the waste produced by the thermal power plants.

The agronomic value of fly ash is gaining global attention but its effective use has not yet gained popularity at desired level. Field and green house studies on the biological effect of fly ash indicate that though it contains almost every natural element: Plant nutrition with this complex martial is not straight foward, as demonstrated by contrasting reports in literature.

Fly ash can supply essential elements to crops growing in nutrient deficient soils and highly alkaline fly ash act as potential liming agent and has been used for amending agricultural soil to improve both physical and chemical properties of soil. Fly ash amendments have corrected plant nutritional deficiencies of Boron, Magnesium and Molybdenum and Zink. Fly ash improves crop growth by neutralizing soil acidity, acts as soil modifier and micro-fertilizer as it contains some essential nutrient, showed better growth in maize and better plant yield in cabbage. In recent approaches, because of the liming potential of certain Fly ash and their ability to provide essential nutrients for plants, Fly ash is being considered for amending the Skelton and agricultural soil to improve both their physical and chemical properties. Plant grown in such amended soil might give better response towards growth, development & yield.

Fly ash sample were collected freshly from electrostatic precipitator (ESPS) of Chandrapura thermal power station of Damodar valley corporation (DVC). It is situated

in the state of Jharkhand covering an area of 790 heated 4 N l latitude and 86° 2 E to 86° E longitude of Jharkhand. It is bounded by Damodar river in south. Fly Ash collected is the burnt product of coal.

In the current study, Coarse, sandy, loam soil of Chhotanagpur (Jharkhand) has been used which is slightly acidic in nature and the fly ash from Chandrapura Thermal power plant which is slightly acidic in nature and the fly ash from Chandrapura Thermal power plant which is basic in nature has been selected which might function as an amendment or a fertilizer.

These legumes are commonly known as pulses. Being rich in protein and few essential amino acid, they are important ingredients of the vegetarian diet. Pulses are the chief source of protein in the developing countries like India, with a population using predominantly vegetarian diet. Therefore pulse are sometimes referred as the "poor man's meat and rich man's vegetables".

It was apparent from the present study that the legumes like Viccia radiate and V. faba seemed to show tolerance and acclimatization towards the fly ash amended soil. This shows a promise for its recommendations. As a successful crop and their viable utilization to cultivate in fly ash amended soil, as the can also contribute towards the nitrogen recuperation of the course sandy soil with the help of enhanced nodulation in the fly ash as treated soil. Thus fly ash may be used as a soil amendment and nutrient supplement for the marginal, water, deficient, acidic soil of the Chhotanagpur region of Jharkhand were the marginal farmer will save their investment on chemical fertilizer and irrigation with enhanced crop yield with the recommended leguminous crop. However, further trials, in filed condition, would be necessary to evaluate the various aspect of its utility in agriculture.

Reference

1) Fulekar M.H. and J. M. Dave (1990)
"Environmental implact assessment of fly ash from coal fired power plants".

2) Khan R. K and M.W Khan (1996)
"The effect of fly ash on plant growth and yield of tomato".

PSYCHOLOGICAL FACTORS IN CLIMATE CHANGE PERCEPTION AND ACTION

Dr. Sujeet Kr. Dubey
Associate Professor
Head Dept. of Psychology
A.N. College, Patna

ABSTRACT : *The knowledge of the psychological factors that influence people's perceptions of climate change and the actions they take in response to those perceptions is essential to the development of effective techniques for climate change adaptation and mitigation. According to the findings of study, people's perceptions of climate change and their responses to it are influenced by a wide variety of cognitive, emotional, and social factors. It is possible for individuals to have an exaggerated perception of the severity of climate change or the need of taking action owing to cognitive biases such as optimism bias or future discounting. In regard to climate change, people's feelings and behaviors may also be influenced by emotional responses such as dread, guilt, or hope. Either they may motivate individuals to take action or they might cause them to avoid taking action. Furthermore, when it comes to climate change, other aspects of society, such as social identity, traditions, and values, have a significant impact on how people think and act. It is possible to construct policies, interventions, and communication approaches that are aimed at the promotion of pro-environmental attitudes and behaviors with higher success if these psychological components are taken into consideration. This will help in the process of mitigating and adapting to the effects of climate change.*

Keywords : *Climate Change, Psychological Distress, perception & action*

INTRODUCTION

It is standard practice to refer to the ecological and physical systems that comprise the biosphere as life-support systems. The stability and successful operation of these systems are essential to the health of individuals throughout the course of their lifetimes. Despite the fact that it is simple to lose sight of this connection, particularly

as human beings are becoming more urbanized and disconnected from these natural systems, doing so would be a severe error. Numerous processes that are responsible for maintaining life, such as the global climate system, are now experiencing the pressure that is being caused by the ever-increasing human population as well as the economic and industrialization that is linked with it.

Weather patterns are only one facet of climate change that is being discussed. Climate change is defined by the Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC, 2007b) as "any change in climate over time, whether due to natural variability or as a result of human activity." This definition describes climate change in its broadest sense. Climate change may be characterized as adjustments in the average and variability of weather variables such as temperature, precipitation, and wind across time scales ranging from months to millions of years. These shifts can occur over a wide range of time periods. In a more general sense, climate refers to the changes that occur in the following areas: the atmosphere, the hydrosphere, the cryosphere, the land surface, and the biosphere, which is comprised of ecosystems and species that inhabit the atmosphere, the land, and the seas. The changes that occur in the climate of the whole planet are mostly biophysical in character. Human activity, on the other hand, is the principal factor that is responsible for the recent and growing warming of the temperature of the Earth; psychological and social processes moderate its effects, and human activity is the primary mechanism by which these consequences can be avoided.

This research, which was conducted by a task group of the American Psychological Association (APA), provides a comprehensive analysis of the role that psychology plays in expanding our understanding of climate change and its impacts, as well as in directing our collective response to these continuing global phenomena. We have unique insights into the causes and consequences of human behavior that exacerbates climate change because we are members of both the academic and professional communities of psychology. We also have insights into how to mitigate the psychological and social effects of climate change and find ways to assist society in adapting to the challenges that it is currently facing and will face in the future. Psychologists need to participate in cross-disciplinary communication with other social and natural science domains in order to create agreement on significant human phenomena that are connected to climate change and how they might be integrated with existing frameworks and knowledge. This is necessary in order for psychologists to have an influence that is meaningful.

According to the most recent major international scientific consensus assessment (IPCC, 2007c), human activity is the primary cause of the climate change that is happening on a global scale. According to the findings of the evaluation, there are now a

number of geophysical and biological ramifications becoming apparent. Along the same lines as earlier summaries of climate change, this report draws on the findings of the IPCC Working Group II, which came to the conclusion that there is a high probability (67 to 95 percent likelihood) that climate change will cause the following:

- There has been a correlation established between higher maximum temperatures and an increase in the number of deaths and illnesses that are caused by heat, as well as the impacts on crops, livestock, and cattle.
- Certain pests and disease vectors are able to have a larger region of spread when the lowest temperature is higher.
- An increase in the frequency of weather events that bring significant precipitation, which may make soil erosion, mudslides, and floods worse.
- An increase in the risk of forest fires, a decrease in agricultural output, and a decline in both the quality and quantity of water supplies as a result of increased summer dryness and drought.
- As a result of an increase in the wind and precipitation intensities that are associated with tropical cyclones, the risk of infectious disease epidemics, coastal erosion, destruction of infrastructure, and damage to coastal ecosystems is increased.

In most cases, the effects of climate change are anticipated to be felt until either 2050 or 2100. However, it is important to remember that there are many who believe that the consequences of climate change are now being experienced and will continue to be seen during the next century and beyond. However, further research is necessary in order to arrive at a conclusion on the chronological order of the various effects. There are a number of elements that make it hard to identify the precise timing and intensity of these occurrences. Some of these aspects include human response, the interconnectivity of biophysical phenomena, and the potential of separate time courses for diverse events.

The Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC) report outlines a number of domains in which the consequences of climate change are either already being experienced or are expected to be seen in the near future. The origins, impacts, and responses to climate change that are attributed to human activity are shown in Figure 1. The article discusses the ways in which catastrophic events have an influence on ecosystems, food security and supply, water sources, human health, and habitations. It also discusses how average precipitation, temperatures, and sea levels are impacted via these events. Mitigation, which refers to human interventions that aim to reduce the impact of anthropogenic drivers on climate systems, and adaptation, which can be defined as "adjustments in natural or human systems in response to actual or expected climatic stimuli or their effects, which moderates harm or exploits beneficial

opportunities," are the two primary categories that are typically used to classify human responses to these changes and threats (IPCC, 2007b). In conclusion, changes in socioeconomic variables, which include patterns of production and consumption, laws imposed by the government, and the use of technology advancements, have an effect on the causes, impacts, and responses.

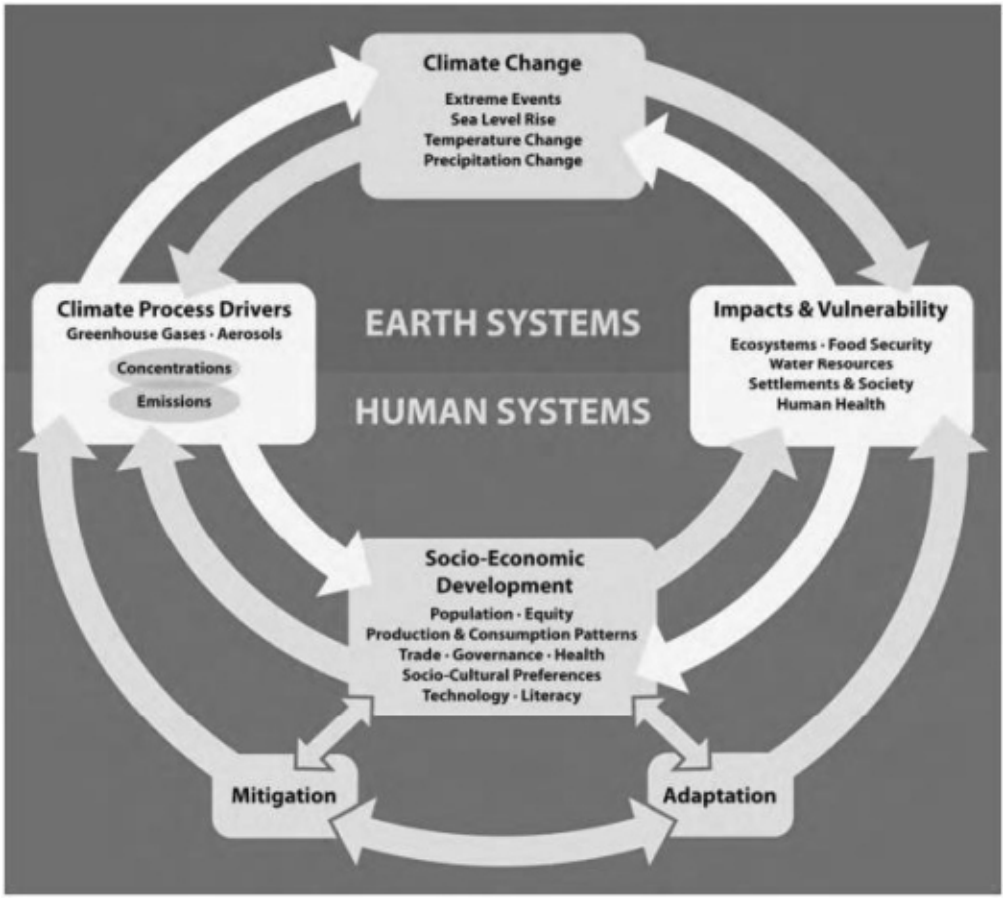

Figure 1 : Anthropogenic climate change : A schematic illustrating the causes, effects, and solutions

The effects of climate change on humans

Examples of human interactions with climate change include human drivers or causes (such as fossil fuels, land use and land use change, for example), human impacts or consequences (such as changes in the frequency and intensity of natural disasters, improvements in water supplies, improvements in food production, and threats to public health), and human responses (such as individual and collective efforts to

mitigate climate change or adapt in ways that reduce damage from climate change that were not avoided). The interactions that take place on these levels may be broken down into many other levels, such as individuals, households, corporations, governments, and society. In addition, there is a temporal component associated with the human components of climate change. In light of the fact that people have altered the surface of the Earth and used technologies that release greenhouse gases into the atmosphere, the contribution that humans have made to climate change has changed throughout the course of time. It is impossible to separate the ties that humans have with other living things and the rest of nature from the connections that they have with climate change. However, the degree to which people pay attention to this relationship varies from person to person, civilization to civilization, culture to culture, and time to time. Attempts are being made by researchers in the social sciences, especially psychologists, to acquire a more in-depth understanding of the human dimensions of climate change.

The psychological effects of climate change

The field of psychology has the potential to provide information on how individuals and society perceive climate change. Climate change, for example, does not instantly manifest itself in people's lives. Various forms of media, instructional materials, and interactions with other people all contribute to the dissemination of portrayals of climate change to the general public. It is possible that as a consequence of these presentations, students may make the assumption that natural disasters such as hurricanes and wildfires are indicators of climate change.

In general, the degree to which individuals are aware of the problem is a significant factor in determining whether or not they are likely to support and take action in response to governmental policy that addresses climate change. As will be seen in the following explanation, it is difficult to arrive at an understanding that is acceptable for a number of reasons. The general people does not have a good understanding of the ramifications of climate change, and the ones that are acknowledged may be very subtle. Climate change is not a hazard in and of itself, despite the fact that it has the capacity to produce a wide variety of other problems. The prevalence of place-specific effects may be attributed to a number of factors, including regional differences in impacts, national inequalities that are the outcome of geographic differences, and changes in the resources that are available for adaptation. Catastrophes that are caused by climate change should also not come as a surprise to us; it is possible that we will have to suffer things that science has not yet given a warning about. In light of the fact that the average temperature of the earth is increasing outside of the range in which it has fluctuated throughout the whole of human history that has been documented, it is possible that many of our beliefs on the climate are no longer

relevant. Further, since climate change occurs at a rapid pace and does not necessarily follow linear patterns, it is possible that events that occurred in the past are not trustworthy indications of what will happen in the future. Although many of the impacts that are occurring right now are significant and urgent, some of the most disastrous consequences will not arise until a very long time in the future, which is beyond the planning horizons of the majority of individuals and organizations. Finally, as the environment undergoes change, the world will likewise undergo change, which will make it even more difficult to anticipate with confidence.

OBJECTIVES

1. To study the psychological factors in climate change.
2. To study the psychological factors affecting climate perception and action.

METHOD

The research was deemed to be ethically acceptable by the Social and Humanities Ethics Committee of a public university in India.

PARTICIPANTS

In terms of its nature, the research is descriptive. The process of sampling is one that can be accomplished with relative ease. For the purpose of conducting power analysis and determining the suitable sample size, the G*Power program was used (Faul et al., 2007). For the purpose of conducting an a priori power analysis, a total of 111 samples were collected by using the G*Power method (t tests, correlational: point bi serial model, effect size | |=0.3, err prob = 0.05, Power (1- err prob)= 0.95). The sample for the study consisted of thirty-nine male volunteers out of a total of one hundred and twenty-three who voluntarily participated in the research by posting announcements on social media. An average age of 34.38 years was found among the participants, with a standard deviation of 10.90 years. The existence of residency in a variety of India's geographical regions is one of the inclusion criteria for the sample. Individuals from seven distinct regions of India participated in the study, despite the fact that the research was not statistically balanced.

PROCEDURE

In June of 2023, data for the research were collected via the use of online forms. A number of different social media networks were used in order to locate participants. Participants indicated that they were willing to take part in the study by confirming their willingness to do so after reading the research rules and returning the online form. They started by responding to the socio-demographic questions that were asked. After that, they provided their responses to the questions that evaluated the psychological distance that is related with climate change on its many sub-dimensions. In addition to completing the survey and providing responses to the scale questions,

they also provided responses on the seven-point Likert scale (left/right), which provided information on political opinions. Five minutes was the average amount of time required to complete the whole study. An application of Pearson correlation analysis was used in the process of data analysis in order to analyze the correlations that existed between the variables. A t-test was then used in order to look at the differences and similarities between the sub-dimensions of psychological remoteness, denial of climate change, and engagement with environment. For the sake of comparison, the sample was split into groups representing political opinions on the left and the right. For the purpose of analyzing the data that was gathered, JASP version 0.17.3 was used (JASP Team, 2023).

Measures

Psychological distance questions

For the purpose of determining the psychological distance, perceptual, and behavioral intents about climate change in the India sample, the questionnaires developed by Spence, Portinga, and Pidgeon (2012) were used with very minor adjustments. In terms of geographical, social, and temporal aspects, the questions of the Likert type are used to quantify the psychological distance from climate change. There is the possibility of providing responses in dimensions 4, 6, and 7. In addition to that, it inquires about concerns, fears, willingness to act, and doubt or skepticism. For the purpose of determining the extent to which individuals are concerned about climate change, three questions that were of a similar character were employed. The questions that were asked centered on the general concerns, individual affects, and societal ramifications that are related with environment change. A Cronbach's alpha ( ) grade of 0.83 shows that there is a high degree of internal consistency across all of the items that have been merged. We found that our study has a Cronbach's alpha of.85. It has been determined that the Cronbach Alpha score for the skeptical dimension of uncertainty is.71. In our study, the Cronbach's alpha was calculated to be.52. Within the whole of the survey, there are fourteen questions presented. Survey questions were used to collect descriptive data on psychological distance from the local sample. This data was acquired from their responses. Every question that was asked may be found in the appendix.

Climate change denial scale

The five items that make up the climate change attitude scale are rated using a Likert scale that has five points and ranges from "strongly disagree" to "strongly agree." It was proved by the findings of the scale that the level of denial about climate change increased in tandem with the scale's scores. According to the findings of the researchers, the scale exhibited both metric (with a CFI of.091) and structural (with a comparative fit index [CFI] of.970 and a root mean square error of approximation

[RMSEA] of.088) invariance. Using this measure, we were able to determine the extent to which people are denying the existence of climate change. In order to facilitate the cross-cultural study conducted by Nartova-Bochaver et al. (2022), Kiral Ucar went ahead and translated this scale into Indian. The dependability value was discovered to be (McDonald's omega).= 70, with a mean score of 1.62 and a standard deviation of.58. This was determined within the context of the Indian adaptation investigation. A Cronbach Alpha score of.80 was assigned to the scale that was used in this inquiry.

Contact with nature scale

It was Herzog and Strevey (2008) that came up with the scale. On the Likert scale, which has five points, there are nine questions, and the responses range from "never" to "very often." A number of questions are posed, such as how often people go camping and how much they like being outside. As the scores on the scale increase, it indicates that there is a greater degree of engagement with the natural world. Adaptation of the scale to the Indian language was finished. The value of the Cronbach Alpha coefficient for the scale was found to be. 90. According to the findings of this analysis, the Cronbach Alpha value of the scale was found to be.88.

Politic opinion

Using a Likert scale ranging from 1 to 7, the participants provided their responses to the researcher's single question about their political opinions. To the left of the scale is where the left view is represented, and to the far right of the scale is where the right view is defined.

Statistical analysis

In the context of climate change, the dimensions of psychological distance were shown via the use of reaction rate distributions as descriptive statistics. When comparing data using the t test and Pearson correlation in statistical analysis, a p value with two sides that was less than 0.05 was considered to be statistically significant with regard to the comparison.

RESULTS

There is a listing of the outcomes of the analyses that were carried out in line with the goals of the research under the designated topics. In Table 1, the socio-demographic information pertaining to the sample is shown.

Table 1. Descriptive statistics

Age	19 (min)	64 (max)					
Gender	Women (84)	Men (39)					
Education	High school (22)	[12 years]	Undergra duate (50)	[16 years]	Graduate (51)	[18 years]	
Geo graphical area	Mediterra nean (7)	Eastern Rajasthan (10)	Aegean (9)	Southe astern Rajasthan (5)	Central Rajasthan (33)	Black Sea (29)	Marmara (30)
Politic view	Left (59)	Central (35)	Right (29)				

Year information is shown along with the minimal amount of time spent in school.

Plots for Psychological distance questions

The distribution of answers to the geographical distance questions is shown in Figures 1a and 1b using geographical regions as the different categories. On the horizontal axis, the scale is as follows : (1-Strongly agree/5-Strongly disagree)

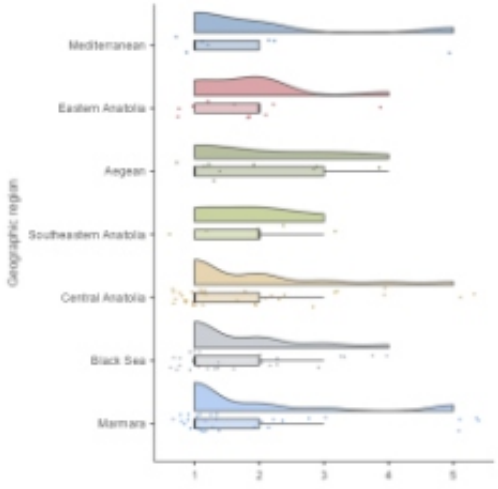

Figure 1a. Climate change will probably have an impact on my neighborhood.

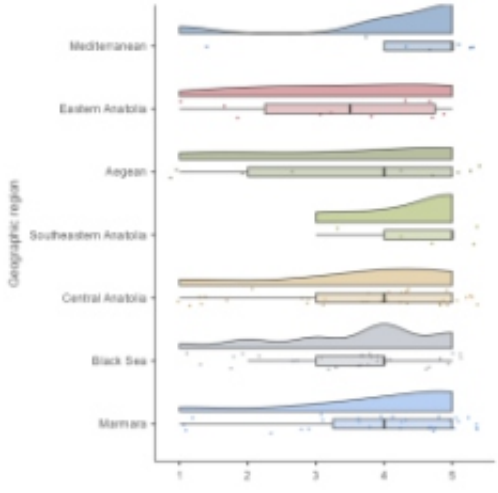

Figure 1b. Climate change will impact areas that are further away from this place.

The distribution of replies to the social distance questions according to political position is shown in Figures 2a and 2b. On the horizontal axis, the proportion of respondents who strongly agree with the statement is one to five.

As shown in Figure 3, the distribution of answers to the question about temporal distance is broken down according to political opinion on a seven-point scale (We already feel the effects equals never).

On a scale that ranges from strongly disagreeing to strongly agreeing, the answers to the question about uncertainty and skepticism are laid out in Figure 4, which depicts the distribution of responses according to political position.

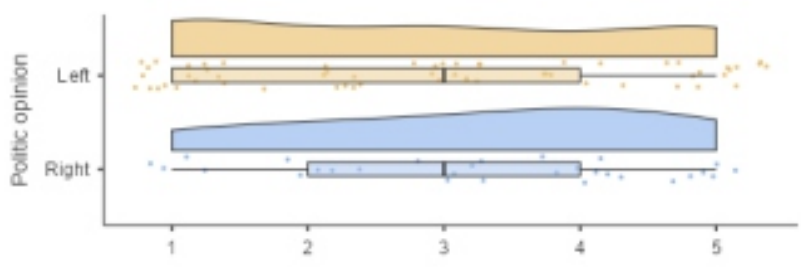

Figure 2a. The least developed nations will be most impacted by climate change

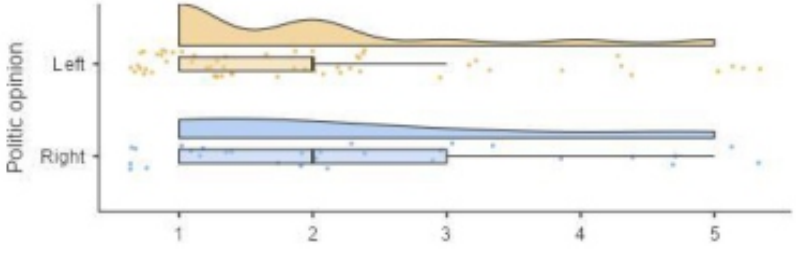

Figure 2b. The effects of climate change on individuals like me are expected to be substantial

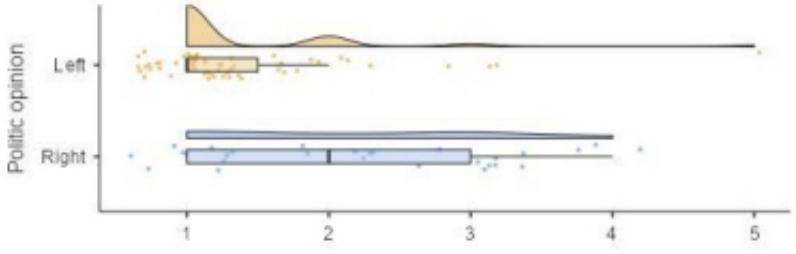

Figure 3. In your opinion, when exactly will India begin to experience the consequences of climate change?

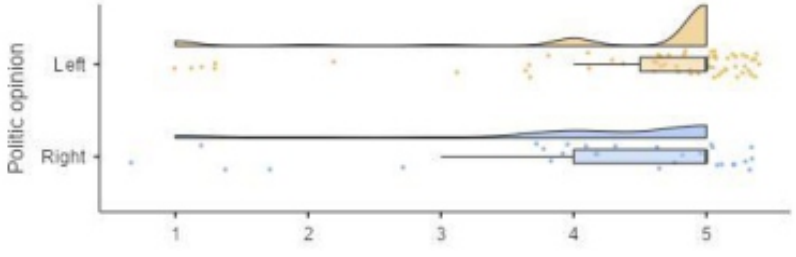

Figure 4a. I'm not sure whether climate change is really occurring.

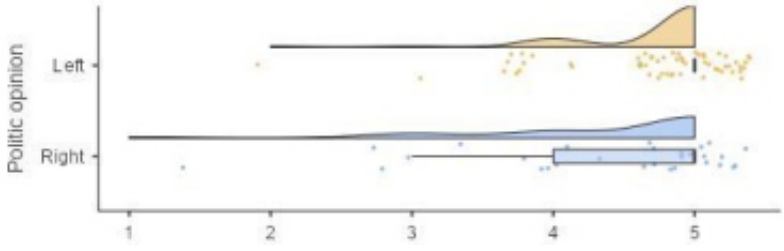

Figure 4b. It is overstated how dangerous climate change.

Figure 5 illustrates the distribution of answers to questions on climate change worries according to political viewpoint. The scale ranges from "very concerned" to "not at all concerned," with "very concerned" being the most concerned.

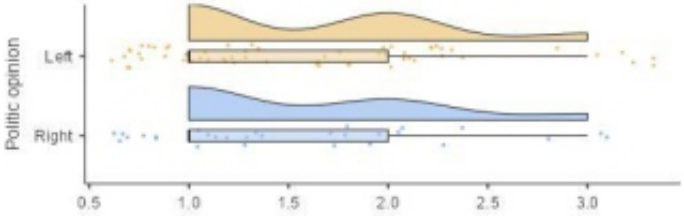

Figure 5a. Regarding climate change, which is often commonly referred to as global warming, what degree of concern do you have?

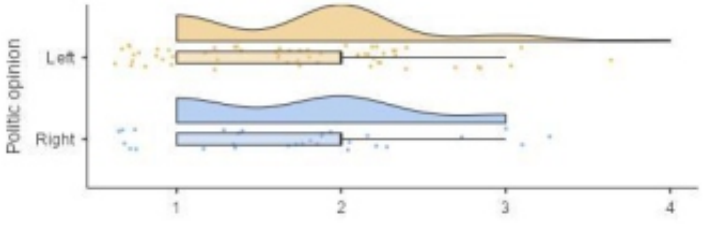

Figure 5b. Global warming, considering all potential consequences

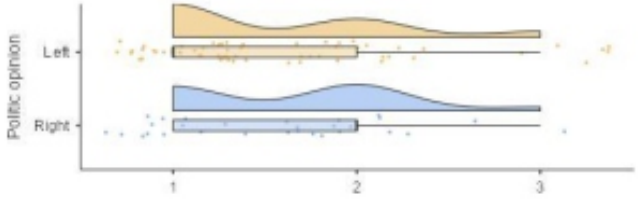

Figure 5c. Global warming, contemplating the potential social effects
A five-point scale (Strongly agree–Strongly disagree) is used to display the distribution

of responses to the ready to act question based on political ideology. This distribution is shown in Figure 6

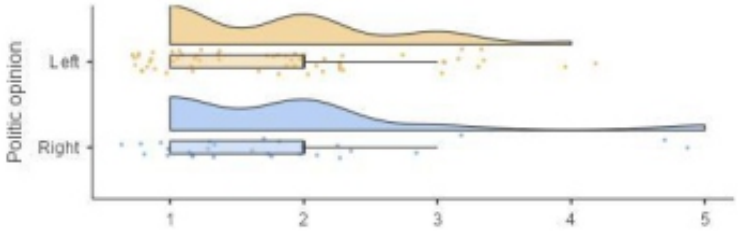

Figure 6. To combat climate change by drastically cutting down on electricity use

The percentages of participants who responded to the question "Which of the following best describes your view of the causes of climate change" on the questionnaire that examined their psychological detachment from climate change are also presented in Table 2. The findings of the survey indicate that 68 percent of respondents believe that human action is the only cause of global warming. Six percent of the whole sample are of the opinion that it is fully natural, while twenty-six percent are of the opinion that it is in reality a blend of natural and manmade components.

Table 2. Reference to climate change

Attribution group	Frequency	Percent
Entirely natural	7	5.691
Partly natural partly human	32	26.016
Entirely human	84	68.293
Total	123	100

Correlation analysis results

The findings of the correlation analysis that was performed in order to analyze the connections between the variables that were investigated in this research are shown in Table third. The findings shed light on a number of key connections between many factors. The first thing to note is that there is an inverse relationship between age and climate denial. Probability is less than 0.05, and the correlation coefficient is -.235. According to the available evidence, people's level of doubt about global warming decreases as they become older. When it comes to climate denial, there is a positive correlation between political attitude and climate denial ($r=-.263$, $p<05$). There seems to be a correlation between the political movement toward the right and the number

of individuals who reject the fact of climate change. No significant correlation was found between the denial of climate change and age as a function of the amount of time spent in natural settings.

Table 3. Correlations table

		Age	Climate denial		Contact with nature	Politic opinion
Age	Pearson's r	—				
	p-value	—				
Climate denial	Pearson's r	-0.235 **	—			
	p-value	0.009	—			
Contact with nature	Pearson's r	0.065	-0.085		—	
	p-value	0.475	0.350		—	
Politic opinion	Pearson's r	-0.148	0.263	**	0.117	—
	p-value	0.101	0.003		0.197	—

Note. * p < .05, ** p < .001, ***. Politic opinion, Left=1; Right=2

Results of independent sample t test analysis

Those individuals who received a score of less than four on the Likert-type rating scale, which has seven points, were assigned to the left group, whilst those who had a score of more than four were assigned to the right group for this evaluation. A significant disparity exists between the two groups in terms of the degree to which they deny the existence of climate change [t(86) = -3.038, p =.003, d= -0.69]. The likelihood of liberals rejecting the truth of climate change is lower than the likelihood of conservatives doing so. The following is a breakdown of the descriptive data according to group: The fourth table.

Table 4. Independent Samples t-test

		Statistic	df	p		Effect Size
Climate denial	Student's t	-3.04	86.0	0.003	Cohen's d	-0.689
Contact with nature	Student's t	-1.62	86.0	0.109	Cohen's d	-0.367

Note. H μ Left ≠ μ Right

DISCUSSION

The purpose of this study was to evaluate the ways in which the political leanings of the Indian people influence their perspectives on climate change and the psychological experience of being physically separated from the rest of the population. Our research on psychological distance took into account a number of different aspects, including

time, social distance, physical distance, and uncertainty. In addition to this, we investigated the relationship between people's interest in nature and their climate denial position in reaction to increasing temperatures. The results brought to light the vital relevance of political attitudes by indicating remarkable disparities in the degree to which various political parties deny the existence of climate change. It was also shown that persons of a more advanced age are more prone to reject the idea that climate change is occurring. In 2023, when the effects of climate change will be felt more often on a daily basis via severe occurrences such as droughts, floods, and forest fires, our research has provided us with the opportunity to investigate the ways in which different psychological aspects are related to people's perceptions of the human element, which is responsible for the majority of the damage. In spite of the fact that the concept of climate change may first seem to be a theoretical concept, the repercussions of climate change are becoming increasingly obvious and observable in our everyday lives. **Haines** and **Ebi (2019)** provide a list of several instances in which climate change poses a threat to human health, safety, and welfare. These instances include the occurrence of more frequent and severe weather events, the elevation of sea levels, and the potential for shortages of both food and water. As a result of these impending repercussions, it is more important than ever to take immediate action to address climate change.

Due to the fact that climate change is so obvious and relevant in the current world, it is of the utmost importance to have a comprehensive understanding of the many perspectives that individuals have about this issue (**Climate Change and Human Behavior - Nature Human Behavior, 2022**). One of the key objectives of the study was to investigate the four components of PD, which are geographical, social, temporal, and uncertainty related to climate change. A further investigation was conducted to determine the participants' political leanings as well as their perspectives on environmental and climate change.

CONCLUSIONS

In light of this, our study has shed light on the many aspects that influence people's attitudes and reactions to this pressing global issue. This was accomplished by undertaking an in-depth investigation of the complex network of psychological concepts around climate change among the Indian population. By examining psychological distance from the perspectives of chronology, geography, society, and uncertainty, we were able to identify regional differences and relationships with political leanings. One finding that is worth mentioning is that persons who live in regions that are more "for now" impacted by climate change perceive a shorter distance than those who live in regions that are less affected. There is a correlation between the findings of the t-test that compared groups according to people's self-

reported political leanings (left/right) and the findings that are discovered in the literature. It was found that there were considerable differences in the degrees of climate change denial when the data was split down according to political ideology. The findings of the correlation analysis provided more evidence that there is a substantial link between political convictions and the denial of climate change. Not only that, but there was a significant association between those of advanced age and those who reject the idea that climate change is occurring. Those on the left who are less inclined to reject climate change also score lower on the social distance, temporal distance, and concern dimensions, as can be seen when looking at how various political opinion groups scored on the psychological distance sub-dimensions. This is evident when looking at how different political opinion groups scored on the individual dimensions. Our study makes a contribution to the existing body of literature on climate change by shedding light on the role that social and cognitive factors play in the perspectives of Americans on the problem and by providing recommendations for how to most effectively address it. In order to have an impact on public opinion and to stimulate the implementation of effective mitigation measures, we must first acknowledge climate change for what it is: a significant danger that can be traced back to specific causes. To be more specific, whereas 6% of our sample believed that climate change was entirely caused by natural sources, the remaining 80% of us placed the blame somewhere between mostly natural and partially human-induced or entirely human-driven.

REFERENCES

1. Climate change and human behaviour - Nature Human Behaviour. (2022, November 16). Nature.https://doi.org/10.1038/s41562-022-01490-9.
2. Gifford, R. (2011). The dragons of inaction: psychological barriers that limit climate change mitigation and adaptation. Am. Psychol. 66, 290–302. https://doi.org/10.1037/a0023566.
3. Faul, F., Erdfelder, E., Lang, A. G., & Buchner, A. (2007). G*Power 3: A flexible statistical power analysis program for the social, behavioral, and biomedical sciences. Behavior Research Methods, 39(2), 175–191. https://doi.org/10.3758/ BF03193146.
4. Haines, A., Ebi, K. (2019). The Imperative for Climate Action to Protect Health. N Engl J Med. Jan 17;380(3):263-273. doi: 10.1056/NEJMra1807873. PMID: 30650330.
5. Herzog, T. R. & Strevey S. J. (2008). "Contact with Nature, Sense of Humor, and Psychological Well-Being". Environment and Behavior 40(6)747-776.
6. Hornsey, M. J., Harris, E. A., Bain, P. G., & Fielding, K. S. (2018). Meta-analyses of the determinants and outcomes of belief in climate change. Nature Climate Change, 8(7), 614-620.
7. IPCC, 2022: Climate Change 2022: Impacts, Adaptation, and Vulnerability. Contribution of Working Group to the Sixth Assessment Report of the Intergovernmental Panel on

Climate Change [H.-O. Pörtner, D.C.

8. Roberts, M. Tignor, E.S. Poloczanska, K. Mintenbeck, A. Alegría, M. Craig, S. Langsdorf, S. Löschke, V. Möller,Okem, B. Rama (eds.)]. Cambridge University Press. Cambridge University Press, Cambridge, UK and New York, NY, USA, 3056 pp., doi:10.1017/9781009325844.
9. Kahan, D. M., Peters, E., Dawson, E. C., & Slovic, P. (2011). Motivated numeracy and enlightened self-government. Cultural Cognition Project, Yale Law School. https://doi.org/10.1017/bpp.2016.2
10. Kahan, D. M., Jenkins-Smith, H., & Braman, D. (2012). Cultural cognition of scientific consensus. Journal of Risk Research, 15(2), 139-147. Doi: 10.1080/13669877.2010.511246.
11. Keller, E., Marsh, J.E., Richardson, B.H., and Ball, L.J. (2022). A systematic review of the psychological distance of climate change: Towards the development of an evidence-based construct. J. Environ. Psychol. 81, 101822. https://doi.org/ 10.1016/j.jenvp.2022.101822.
12. Kiral Ucar, G. (2019). Kent kimligi, dogayla temas ve oznel iyi oluş. Akdeniz İnsani Bilimler Dergisi/Mediterranean Journal of Humanities, 9(2), 419-430. 10.13114/MJH.2019.499
13. Leiserowitz, A., Maibach, E., & Roser-Renouf, C. (2010) Climate change in the AmericanMind: Americans' global warming beliefs and attitudes in January 2010. Yale University and GeorgeMason University. New
14. Haven, CT: Yale Project on Climate Change. http://environment. yale.edu/ uploads/AmericansGlobalWarmingBeliefs2010.pdf
15. Leiserowitz, A, Maibach, E., Rosenthal, S., Kotcher, J., Carman, J., Wang, X.[X.], ... Marlon, J. (2021). Public support for international climate action, March 2021. Yale University and George Mason University. https://www.climatechangecommunication.org/wp-content/uploads/2021/04/public-support-international-climate-action-march-2021.pdf.
16. Loy, L. S., & Spence, A. (2020). Reducing, and bridging, the psychological distance of climate change. Journal of Environmental Psychology, 67, 101388. https://doi.org/10.1016/j.jenvp.2020.101388.
17. Luo, Y. and Zhao, J. (2019) Motivated Attention in Climate Change Perception and Action. Front. Psychol. 10:1541. doi: 10.3389/fpsyg.2019.01541.

Empowering Youth through National Service Scheme :

Highlights from NSS Special Camp 2023 of A. N. College, Patna

Dr. Ratna Amrit
Program Officer, NSS
Associate Professor
Dept. of History

Dr. Abhishek Dutta
Program Officer, NSS
Assistant Professor
Dept. of Economics

Introduction

The National Service Scheme (NSS) stands as a cornerstone in the landscape of India's educational and developmental framework aimed at channeling the energetic potential of the youth towards community service and nation-building.The NSS fosters a spirit of voluntary work among young people. One of the most vibrant manifestations of this initiative is the Special Camp organized by our institution, A.N. College, Patna, which epitomizes the values of the NSS and its commitment to societal progress.

National Service Scheme: A Brief Overview

Established in 1969, the NSS was launched to develop a sense of social responsibility among students and to promote a culture of community service. By engaging in various activities such as blood donation drives, environmental conservation projects, and health awareness campaigns, students gain invaluable life skills and a profound understanding of the social realities surrounding them. The scheme operates under the principle of "Not Me But You," underscoring the importance of selfless service and collective welfare.

The Role of Youth in National Service Scheme

The youth are the heartbeat of NSS. Their energy, creativity, and enthusiasm are harnessed to tackle pressing social issues. Participation in the NSS helps young individuals develop leadership qualities, teamwork skills, and a sense of empathy. It also bridges the gap between theoretical knowledge and practical application, enabling students to apply their learning in real-world context. Through their involvement, young people are transformed into proactive citizens who are prepared to contribute meaningfully to society.

Special Camps: A Catalyst for Change

Special Camps are a unique feature of the NSS, designed to provide students with

immersive experiences in community service. The Special Camps organized by NSS unit of A.N. College have made significant strides in various areas. Health camps have been conducted to provide medical check-ups and raise awareness about health issues. Environmental initiatives, such as tree plantation drives and cleanliness campaigns, have contributed to the ecological well-being of the community. Literacy programs have empowered adults and children alike, opening doors to new opportunities and brighter future.

NSS Special Camp 2023 was organised on the theme "Civic Leadership and Community Engagement" at Motihari from 25th November to 1st December, 2023. Here is a brief report of the Special Camp.

Day 1: Arrival and Kickoff

On the 25th of November, our enthusiastic team of NSS volunteers assembled at 6:00 am in the college. The NSS team under the leadership of the Programme Officers was flagged off by the Principal, A.N. College. This team arrived in Motihari at 10:30 am. After breakfast there was a briefing session by Programme Officer, Dr.Ratna Amrit in the Conference Hall of District Guest House. DDC, Motihari, Shri Sameer Saurav, also addressed the students. The fervor and dedication of our volunteers set a positive tone for the day.

From the District Guest House the NSS team along with the Program Officers left for Sonbarsa village where they were received by the villagers with great enthusiasm. The Volunteers interacted with "Jeevika Didis" – who symbolize women empowerment in Bihar. It was a great learning experience for the students. A unique experiment in the village was the scheme, 'Guardians of Champaran'. This was related to protection of trees. The entire village was mobilised to protect the trees promoting environmental sustainability.

Day 2: Health Check-Up Camp and Social Awareness

On the second day a Health Check-up Camp was organized with the help of District Administration at Mathiya Village. The camp was graced by DDC, Motihari, Shri Sameer Saurav and the Civil Surgeon. Emphasizing the importance of health, the camp provided essential medical services to the local community.

Our volunteers also performed a"Nukkad Natak"focusing on 'Bhrun Hatya' (female foeticide), aiming to ignite discussions and raise awareness about this critical issue. In the evening a Camp fire was organized where the students engaged in discussion on topics which included "Development of Tourism in Bihar". The DDC Motihari, Shri Sameer Saurav, IAS; SDM, Motihari, Shri Anupam Shresth, IAS and IAS Probationer, Shri Rituraj Pratap Singh interacted with the students and also shared there views on the topic.

Day 3: Menstrual Hygiene Awareness and Sports

On the third day, our team visited the Kasturba Gandhi Balika Vidyalaya in SemraTola, Banjara Block. Here, our volunteers performed a "Nukkad Natak" on

Menstrual Hygiene, followed by interaction with the girls, discussing crucial aspects of menstrual hygiene. The programme was attended by officers from District Administration, BDO, CO, local representatives, teachers and students of KGVB.

Lunch was hosted at the KGBV Campus, which fostered lively conversation and community bonding. In the afternoon, a friendly Cricket match was organized which the NSS volunteers enjoyed and at the same time it taught them spirit of sportsmanship and teamwork.

Day 4: Environmental Awareness

The fourth day began with "Prabhat Pheri" by our NSS volunteers, along with enthusiastic students of Shri Mahaveer Government Middle School, Lauthaha, Motihari.

This was followed by a visit to Kisan Vigyan Kendra, Piprakothi. The volunteers learnt about the pivotal role of KVK in farm testing, capacity building, and extension activities. Dr. Arvind Kumar Singh, Senior Scientist and Head, provided a comprehensive tour of the Kisan Vigyan Kendra. This was a great learning experience for the NSS volunteers.

Lunch was organized at Kisan Vigyan Kendra, Pipra Kothi which further fostered camaraderie. Evening activities included sports and preparations for the upcoming day, keeping the volunteers engaged.

Day 5: Community Service and Cultural Engagement

Day five started with a "Shramdan" at Gandhi Sanghralaya, Motihari, emphasizing our commitment to community service and a cleaner environment. Our volunteers conducted an awareness program for students of Middle School, Kotwa, on critical societal issues such as dowry, blood donation, and women empowerment, aiming to foster social responsibility.

A community lunch hosted by the village Mukhiya fostered a spirit of camaraderie amongst all present. In the evening, volunteers visited Kesariya Stupa and learnt about its history. They also attended the Kesariya Mahotsav, adding cultural richness to their NSS journey.

Day 6: Visit to Central Jail and interactive session on "Engaging with the Community and Leadership"

The sixth day featured a visit to Central Jail, Motihari, where the NSS volunteers interacted with the inmates. They visited the different sections of the jail which changed their preconceived notion of jail and its inmates. The volunteers had a

firsthand idea of the different activities of the jail inmates, like, handicrafts, embroidery, cooking, gardening, electrical work, etc.

In the afternoon, the NSS unit, in collaboration with the District Administration of Motihari, organized an interactive session on "Community Engagement and Leadership" in Bapu Sabhagar, Motihari. The Chief Guest for the occasion was Shri Pratyaya Amrit, Additional Chief Secretary, Health Department, Road Construction Department, and Disaster Management Department, Govt. of Bihar. The other Guests of Honour were Shri Shirshat Kapil Ashok, IG Prisons and Reform Services cum Additional Secretary, Department of Home; District Magistrate, Shri Saurav Jorwal; SP, Motihari, Shri Kantesh Kumar Mishra; DDC, Motihari, Shri Sameer Saurav; SDM, Shri Shrestha Anupam and IAS Probationer, Shri Rituraj Pratap Singh among others, shared their wisdom with NSS Volunteers and students from various schools of Motihari. Programme Officer, Dr. Ratna Amrit delivered the Welcome Address, while Dr. Abhishek Dutta delivered the Vote of Thanks.

Day 7: Final Day and Farewell

The final day of the camp involved a plantation activity at the District Guest House, Motihari, highlighting our commitment to a greener environment. A feedback session followed whereby the volunteers shared their experiences on the seven-day camp.

Commitment of A. N. College to NSS

The college regularly organizes NSS Camps, aligning with the broader objectives of the NSS and contributing to the development of its students and the community at large. These camps are meticulously planned and executed, ensuring that both students and the community derive maximum benefit from the initiative.

Conclusion

The NSS Camp 2023 served as a transformative experience, fostering personal growth, community engagement, and a deeper sense of social responsibility among all the participants. The camp served as a training ground for the students, enhancing their problem-solving skills, cultural awareness, and emotional intelligence. The hands-on experience gained during this camp prepared students to tackle future challenges with confidence and resilience. The bond formed between students and the community fostered a sense of unity and shared purpose, reinforcing the importance of collaborative efforts in achieving common goals.

Through various activities it not only instilled values of teamwork and leadership but also contributed positively to the welfare of local community. The camp proved to be a fulfilling and enriching endeavour for all involved.

Water Studies in A.N.College, Patna :
Pioneering New Vistas of Interdisciplinary Research

Prof. Nupur Bose (Retd)
Dept. of Geography
A.N. College, Patna

Water research is a multidisciplinary field that encompasses the study physical, biological and environmental aspects of water. Understanding its properties, distribution, and impact on ecosystems and human societies is crucial to human wellbeing and holistic development.

Bihar has abundant fresh water sources. As per the Second Bihar State Irrigation Commission, 1994, Bihar has 14 river basins, while the Central Ground Water Board has identified 3 layers of aquifers in the state. The post-Independence period saw a gradual shift from surface water usage to tapping of ground water sources as a logical option to cope with polluted and contaminated surface water and to guarantee access to clean water even during floods and droughts.

However, unregulated ground water extraction for both direct (drinking purpose) and indirect (borewell irrigation purpose) human consumption, coupled with changing rainfall regime, have resulted in a hydrogeological imbalance involving uncertain ground water recharge and continued ground water extraction. This imbalance has also extended to the identified physico-chemical parameters of ground water used for human consumption (as enunciated by the WHO) thereby leading to health crises over the entire state.

In A.N.College, Patna, water research involves various issues relating to compromised ground water quality due to increase in permissible limits of its parameters like arsenic and fluoride, clean water availability, water management and sustainability. Of great importance and relevance of this research is that the study areas are largely confined to geographical and geological boundaries of our state, bringing in valuable inputs for policy formulation and implementation. Two decades ago, 2 departments- Dept of Environment and Water Management and Post Graduate Dept of Environmental Sciences- initiated research into the extent of ground water contamination by excessive arsenic and fluoride respectively, that gradually spread out from laboratory testing of drinking water samples, tracing the insidious route of arsenic through borewell irrigation water into the human food chain, the health impacts and finally to the socio-economic ramifications of consumption of such contaminated water in different parts of Bihar, their mitigation and management.

Presently, more than a dozen research projects on ground water arsenic and fluoride have been completed or are under implementation, being initiated

respectively by two faculty Leads- Dr. Ashok Kumar Ghosh (retd), Depts. of EWM and Botany) and Prof. Bihari Singh (retd) Depts. of Environmental Sciences and Chemistry. Other faculty researchers include Prof. Shatrunjay K. Singh (retd.) Depts. of Botany and EWM; Prof Nupur Bose(retd), Depts. of EWM and Geography; Prof Tripti Gangwar, Depts. of Chemistry and Environmental Sciences.

Broad Findings of ground water research:

- Identification of arsenic and fluoride affected areas, and making the primary data available to PHED, Govt. of Bihar
- Assessment of health issues (arsenicosis and fluorosis among the vulnerable population)
- Assessing the mitigation strategies in place and their validation
- Adoption of green technologies and bioremediation for sustainable mitigation
- Assisting the authorities in strengthening the district-level water quality testing laboratories
- Creation of a rich database that is periodically updated through field tests and interviews

In the last 20 years, water studies, having different dimensions, have presented an open field for collaborations for this college, bringing in experts from other national and international institutions of repute through a wide range of academic research and exchange programmes – UGC and DST projects, UNICEF, Patna, NEERI, IIT Kharagpur, NIAS Bangalore, European Comission's Erasmus faculty and students programmes, Linnaeus -Palme Awards, UKIERI initiatives and Cambridge-India Partnership project and others. More than 25 joint research publications, more than 30 conference presentations, innumerable invited lectures by the faculty members bear testimony to the success story of A.N.College's water research initiatives.

Simultaneously, studies on changing surface water configurations, wetlands conservation, traditional surface water management techniques with appropriate local technology inputs, and validation of the ongoing surface water conservation schemes have also been carried out under an international Social Sciences project headed by Sodertorn University, Stockholm. In this, research into Environmental History was undertaken by Dr. Ratna Amrit, Dept. of History and MBA to assess the relevance of traditional water management in modern context in Bihar. The findings were presented in the World Water Week, Stockholm, in 2023.

In all the above research work, PhD scholars and bona fide students from different departments have been trained in fieldwork / laboratory protocols, analysis and report writing within the ambit of their syllabi. Their participation in fieldwork further their education by bringing them in contact with experts and the community.

However, emerging water quality issues do not allow us to be complacent. Arsenic is a known mutagen and a carcinogen. Our recent studies are showing that there is more arsenic intake through food chain than through drinking water. The UKIERI project

revealed greater disposition to non-communicable diseases in arsenic contaminated areas. An ongoing project is exploring behavioural issues and community responses to the arsenic issue. There are other contaminants- high levels of managanese, nitrate, uranium, iron, pesticides and others - that have infiltrated our ground water reserves that await research interventions and public awareness so as to facilitate appropriate regulatory mechanisms regarding fresh water usage and conservation.

Basic water quality parameters

1.	pH	-	6.5- 8.5	No Relaxa3tion
2.	TDS	Milligram/ litre	500	2000
3.	Turbidity	NTU	1	5
4.	Chloride (As Cl)	Milligram/ litre	250	1000
5.	Total Alkalinity as Calcium Carbonate	Milligram/ litre	200	600
6.	Total Hardness (as CaCO3)	Milligram/ litre	200	600
7.	Sulphate (as SO4)	Milligram/ litre	200	400
8.	Iron (as Fe) *	Milligram/ litre	1.0	No Relaxa3tion
9.	Total Arsenic (as As)*	Milligram/ litre	0.01	No Relaxa3tion
10.	Fluoride (as F) *	Milligram/ litre	1.0	1.5
11.	Nitrate (as NO3)	Milligram/ litre	45	No Relaxati3on
12.	Total coliform bacteria	Shall not be detectable in any 100 ml of sample		
13.	E.coli/ Thermotolerant coliform bacteria	Shall not be detectable in any 100 ml of sample		
14.	Free residual Chlorine	Milligram/ litre	0.2	1
15.	Colour	Hazen units	5	15
16.	Odour		Agreeable	Agreeable

Source: jaljeevanmission.gov.in

Acknowledgement:
PHED, GoB & UNICEF, Patna Office; UGC, N.Delhi 2009-12; DST -WTI, N. Delhi, 2016, 2021; DST-UKIERI 2017; EU's EURINDIA Project, 2010.

HUMAN VALUES and Ethics in Higher Education

Students have to study Human values & Professional ethics as part of their curriculum. Inclusion of Human Values and professional ethics in curriculum was meant to inculcate these values and ethics in students. The most pathetic fact is that large number of students get good grades in this paper without studying and by adopting the most unethical method.

Dr. Sushil Kr. Singh
Associate Professor
Dept. of Botany

A guideline called *Mulya Pravah* was notified by the University Grants Commission in 2019 seeks to inculcate human values and professional ethics in higher education institutions(HEIs). It has been modified and the modified version is *Mulya Pravah* 2.0. The stated objective of such guideline is to build value-based institutions by orienting individuals and institutions towards developing a deep respect for fundamental duties and constitutional values and bonding with the country. Why the UGC had to issue such guideline? The compelling reason for such guideline was the findings of a survey of human resource managers. The findings highlight unethical practices in various organizations which include arrangements with contractors and vendors for monetary gains, inconsistent view on discipline, favouritism in hiring, training, pay and promotion, sexual harassment, gender discrimination in promotion, compensation, recruitment and hiring and lack of confidentiality. Education, particularly higher education serves as enabling tool for realisation of an individual's potential. It would become a reality only if the higher education administrators, teachers and learners become conscious of human values and professional ethics. What are various dimensions of human values and professional ethics for stakeholders of HEIs and to what extent they have been imbibed or they are in practice are matter of concern in present context.

Human values

Values are our guidelines for our success- our paradigm about what is acceptable. Values are defined as a principle that promotes well being or prevents harm. Values are associated with a person's sense of what is wrong and what is right. They are associated with personal aspects of a person. Human values are integral part of one's personality and they enhance employability quotient of a person. Values of a person

are determined by family values, religion, culture, community etc. More specifically, the factors which play important role in evolution of human values are as follows:

A. Norms of the society on the fulfilment of the individuals needs or desires,

B. Awareness, choice and judgement of the person in fulfilling the needs,

C. Teaching and practice of religious leaders which may be modified or fostered either by social leaders, or by law or by rulers.

The principal values are as follows:

Love and compassion: Kindness, empathy, compassion and sincere care for others without any condition is love.

Peace: Peace must be at both the individual and world levels.

Truth: The ultimate and unchanging reality is truth which is eternal and immutable. Search for truth helps to nurture and enhance the values of common sense, intuition, justice, quest for knowledge, the spirit of enquiry and synthesis of ideas. In professional life truth is manifested in form of ***sincerity*** which is commitment to work.

Non-violence: Conscious restraint from harming anyone or anything with thought, word and deed is non-violence.

Righteousness: Righteousness is 'right conduct.'

Renunciation: Renunciation is manifested as austerity, self control and selflessness.

Service: Being kind and helpful without any reciprocal expectation is service.

All individuals are expected to inculcate and consciously practice them to be good human beings. Since values are learnt by listening, observing, reflecting and finally practicing them, the administrators and teachers in higher education must be aware that they are being watched and observed by their peers and other learners, who inculcate the values which they observe in their surroundings. Naturally the campus of HEIs should have administrators and teachers of high moral values who would be role models for students. Their presence in campus would ensure value education.

The ultimate aim of life is happiness, which may be result of success for some individuals. But success doesn't ensure happiness or greatness in every case. Only that success ensures happiness and greatness which is the culmination of efforts based on human values and professional ethics. Obviously, human values and professional ethics are essential ingredients for transformational learning and a life of happiness and greatness.

Professional Ethics

Ethics represent the standards of conduct that indicate how one should behave and decide whether an action is legitimate or not. Ethics being a system of moral principles align with a professional setup. The concepts and frameworks of moral right or wrong as applied to a professional organization, its execution policies and human behaviour represent professional ethics.

Ideally education is not a professional enterprise, but it is treated as a profession

for practical purpose, so that an institutional framework of ethics in higher education may be propounded.

Human values, professional ethics and *legal framework* are three sets of guiding principles for decision making. Human actions based on these three guiding principles would be more prosperous, full of equity and justice. For any operation or action minimum requirement is to follow legal framework. But law should be followed in spirit and not merely in words.

Desirable and undesirable acts in a profession are differentiated based on professional ethics. It is value based ethical behaviour of the committed faculty members administrators, staff and learners on which success and mission of the institution depends. The stakeholders of an institution would be guided by the following core values.

Integrity : to conduct duties in righteous manner following principles of honesty, trust, transparency and fairness

Trusteeship : to operate in an efficient, ethical and true manner while ensuring group participation and a system of checks and balances.

Harmony : to balance diversity and differences through a culture of tolerance, discussion and forgiveness among stakeholders

Accountability : to enable the environment of openness and trust to accommodate mistakes and encourage individuals to take responsibility for their actions.

Inclusiveness : to adopt standards, policies and procedures to promote and ensure equal opportunity without discrimination against any individual or group for education, employment, promotion and other activities in an institution.

Commitment : to be dedicated to the vision and mission of the institution.

Respectfulness : to create an environment of mutual respect, trust and quality interaction as well as fair participation by functions and beneficiary of the institution.

Belongingness : to foster a shared vision of the institute to feel secure, supported, accepted and initiated.

Sustainability : to ensure optimal resource utilization to achieve a long lasting and safe future.

Constitutional values a nd ***Global citizenship.***

Values and ethics for Academic Administration

It is expected that the Academic Administration would

1. ensure that provisions of Acts/Statutes/Ordinance and Regulations of the HEIs are observed and the business of the university is carried out as per prescribed norms.

2. comply with the laws, rules and regulations of the government as applicable to the HEIs.
3. provide inspirational and motivational value based academic and executive leadership to the HEI.
4. conduct with accountability, transparency, fairness, honesty, highest degree of ethics and decision making all that is in the best interest of HEI.
5. refrains from any misappropriation of financial and other resources.
6. refuse to accept any gift, favour, service or other items which may influence the impartial performance of duties.
7. follow objectives and policies of HEI.
8. maintain confidentiality of records.
9. promote an excellent work culture
10. act as agent of social change.
11. ensure the practice of constitutional values and spirit of global citizenship

Values and ethics for teachers

Teachers have strong influence on the character, personality and career of students. Values and ethics pinpointed for teachers in the guideline are as follows-

- act as role models worth emulating by the students.
- act as guide, mentor and facilitator of students.
- create a conducive environment for the teaching learning process and strive for innovative practices and increasing knowledge.
- refrain from harassment of students in any form.
- refrain from any type of discrimination.
- inculcate human values and environmental concern among students.
- encourage students to actively participate in schemes or activities of national priorities.
- work for national integrity and communal harmony.
- be sensitive to societal needs and communal harmony.
- abide by Acts/Statutes/Ordinance, Rules, policies and procedures of the University and respect its ideals, vision, cultural practices and traditions.
- practice utmost integrity in the assimilation, dissemination, evaluation, creation and implementation of knowledge.

Values and ethics for Students

- abide by Acts/Statutes/Ordinance, Rules, policies and procedures of the University and respect its ideals, vision, cultural practices and traditions.
- remain punctual, disciplined and regular in attending classes.
- be modest in overall appearance and behaviour.

- behave with dignity and courtesy with teachers, staff and fellow students.
- act as role models for junior students.
- maintain harmony among students.
- contribute to the cleanliness of the campus and surrounding.
- respect and care for the institution's properties.
- observe proper behaviour while on outdoor activities.
- honestly providing information.
- maintaining highest standards of academic integrity,
- being sensitive to gender issue, societal needs their health and
- to keep the campus ragging free.

Values and professional ethics for administrative support staff, staff unions and governing body have also been specified in the guideline and the overall focus of these values and ethics remain the same i.e. to build value-based institutions by orienting individuals and institutions towards developing a deep respect for fundamental duties and constitutional values and bonding with the country.

Implementation of human values and professional ethics

An implementation plan is essential to inculcate human values and professional ethics.

Such plan for teachers mainly includes

A. exposing and sensitising teachers through workshop and training programme, induction, orientation, and refresher programmes,
B. interaction with other stakeholders,
C. by encouraging teachers to take up interdisciplinary research on human values and professional ethics to demonstrate certain values,
D. to render services as mentors to inculcate such values and ethics.

Implementation plan for students includes

A. a foundation course on human values and professional ethics.
B. outreach programme on human values and professional ethics
C. promotion of human values and professional ethics,
D. learning through Indian Art, Language and culture,
E. constitutional values
F. global citizenship

Methodology for the inculcation of human values and implementation of professional ethics in HEIs.

Methodology to inculcate human values and professional ethics involves

- training/workshop, lectures, discussion, demonstration, dramatization, short movies,
- value clarification approach,

- exposure to anecdotes, stories etc.
- field visits,
- experimental learning,
- study circles,
- value orientated games,
- writing articles,
- participation in community programmes, cultural activities,
- case studies
- writing a reflective journal
- value and ethics be included in all courses at UG and PG levels.

Monitoring Mechanisms for Human values and professional ethics

It has been suggested that a robust monitoring mechanism be developed to monitor inculcation of human values and professional ethics. Main suggestions are as follows-

- *Review meeting* for monitoring the inculcation of human values and professional ethics,
- *Value audit of human value and professional ethics* in HEIs and Feedback reports.
- *A National Centre for Human Values and Professional Ethics* should be established to strategies, implement, review and audit the implementation plane.
- *State-wise regional centre* in one of Central Universities of the state should be established to coordinate the activities related to human values and professional ethics.
- *A value officer* should be nominated at institutional level and
- There should be provision to train adequate number of such faculty members in value education who are inclined and have willingness to excel in imparting values education to the students.

Ground reality of Human values and Professional ethics in HEIs

In our country where there is concept of Vedantic view of karma, which emphasises that every action has a corresponding reaction, and it reinforces the importance of moral choices, the state of human values and professional ethics in HEIs is very agonising and painful . In Indian philosophy, Karma is supreme and it is considered as a manifestation of the divinity and hence the karma must be pure, honest and sincere. It also teaches us the manner to perform the work without having any attachment to the results, as the results do not fall under the jurisdiction of the doer. But the very fact that the UGC had to issue *Mulya Pravah* shows that unethical practices and negligible regard for values are prevailing in our campuses. Number of those who believe and practice such values and professional ethics is dwindling in all spheres of society including HEIs. Awarding work to contractors for infrastructure creation, repair and unwanted renovation in campus of HEIs and so many unnecessary

purchases in arrangement with vendors are common practices for monetary gain. Favouritism in recruitment of faculty member or support staff on basis of caste, gender and monetary consideration or on recommendation of influential person is very common. HEIs have become hub of construction work instead of being the centre for shaping the character, personality and career of the students. Non-performance may not reflect in appraisals if there are resonating frequencies on other parameters between teacher/staff and administrator. Confidentiality has gone to winds as almost all examination related works are in hands of private agencies. Respectfulness is low priority value compared to personal loyalty to administrators or superiors. Misappropriation of financial resources is not uncommon in HEIs. Newspapers reports, audit reports, police action and court cases substantiate the observation.

Core values like integrity, harmony, trusteeship, accountability, commitment and respectfulness are eroding in teachers also. Several surveys show that students do not aspire to be a teacher which indicates that teachers are no more their role models. Role of teachers as facilitator, guide and mentor is on wane. To put pressure on students in name of internal assessment, practical examinations or dissertation is not uncommon. Research scholars are much harassed lot in various HEIs. Even evaluation work by teachers is not being done with the kind of integrity and sincerity which are required. Consequently, the line between intelligent and average students has blurred.

Students have to study Human values & Professional ethics as part of their curriculum. Inclusion of Human Values and professional ethics in curriculum was meant to inculcate these values and ethics in students. The most pathetic fact is that large number of students get good grades in this paper without studying and by adopting the most unethical method. Discipline related issues, issues related to attendance in class room, ragging in the campus despite strict ban on it. Gender issues, issues related to academic integrity are major areas of concern.

Many more lines can be written on each stakeholder of HEIs. Is it criticism? No, it's an urge, appeal, request and prayer to each stakeholder for introspection. What we were supposed to be and what we are becoming? Definitely, it's time for each one of us to take a pause and introspect. It's a matter of concern requiring conscious effort to inculcate values and practice ethics. Let's take a stand against the unethical practices and make a new start.

"Keep a little fire burning however small, however hidden."

BEWARE...

OUR MOTHER EARTH IS GETTING DEHYDRATED

Dr. S P Singh
Associate Professor
Dept. of Chemistry
A.N. College, Patna

A sustainable solution for potable water requires a multifaceted approach, combining surface water management, desalination, water reuse, conservation, efficient agricultural practices, alternative water sources, and integrated resource management.

The Earth's water crisis is an escalating issue that demands immediate attention. The term "dehydration" typically describes a human body deprived of adequate water, but this metaphor aptly captures the current state of our planet. Dehydration of the Earth manifests through dwindling freshwater resources, severe droughts, desertification, and the overall degradation of ecosystems that rely on water. This article explores the causes, consequences, and potential solutions to this pressing global issue.

Causes of Earth's Dehydration

Human activities are the primary drivers of the Earth's dehydration. Over-extraction of groundwater for agriculture, industry, and domestic use has led to a significant decline in water tables worldwide. Over-extraction of groundwater can lead to increasing ionic concentration in several ways:

Depletion of Aquifers : As groundwater is pumped out faster than it can be replenished, the water table drops, leading to the depletion of aquifers. The remaining water in these aquifers often contains higher concentrations of dissolved ions because it has been in contact with soil and rock minerals for a longer period, allowing more ions to dissolve into the water.

Extracting water from deeper aquifers depletes these water reserves faster than they can be naturally replenished by precipitation and surface water infiltration. Deeper aquifers often recharge over geological timescales, meaning it can take thousands to millions of years for them to replenish. Over-extraction can lead to

permanent depletion.

Reduction in Dilution : When groundwater levels are high, the influx of fresh rainwater or surface water can dilute the concentrations of dissolved ions. Over-extraction reduces this influx, leading to higher ion concentrations in the remaining groundwater.

Saltwater Intrusion : In coastal areas, over-extraction of groundwater can cause saltwater from the ocean to intrude into freshwater aquifers. This process, known as saltwater intrusion, significantly increases the ionic concentration of the groundwater, especially the levels of sodium and chloride ions.

Concentration Effect : As water is removed from the aquifer, the volume of water decreases, but the amount of dissolved ions remains the same or even increases due to continued dissolution from surrounding materials. This reduction in water volume with a constant or increased amount of dissolved ions results in higher ionic concentrations.

Mobilization of Contaminants : Over-extraction can change the flow patterns of groundwater, potentially mobilizing contaminants that were previously stable. These contaminants can include various ions from industrial, agricultural, or natural sources, increasing the overall ionic concentration in the groundwater.

Thus, over-extraction disrupts the natural balance and replenishment processes of groundwater, leading to higher concentrations of dissolved ions due to less dilution, longer contact times with minerals, and potential contamination from various sources. Extracting groundwater from deeper aquifers is increasingly harmful because it accelerates resource depletion, causes land subsidence, degrades water quality, harms ecosystems, raises energy costs, and can lead to social conflicts. Sustainable

groundwater management practices are essential to mitigate these impacts and ensure the long-term availability of this critical resource.

Climate change exacerbates this situation by altering precipitation patterns, leading to prolonged droughts in some regions and excessive rainfall in others. The increasing global temperatures contribute to higher evaporation rates, further reducing the availability of surface water. Urbanization and deforestation disrupt natural water cycles, decreasing the land's ability to absorb and retain moisture.

Consequences of a Dehydrated Earth

The impacts of Earth's dehydration are profound and multifaceted. Water scarcity affects billions of people, leading to conflicts over water resources and exacerbating social inequalities. Agriculture, which consumes about 70% of global freshwater, faces severe challenges, threatening food security. Crops fail, livestock perish, and rural communities, particularly in developing countries, suffer immensely.

Ecosystems suffer as rivers, lakes, and wetlands shrink or disappear. Aquatic life, dependent on stable water levels, faces extinction. For example, the Aral Sea, once one of the largest lakes in the world, has nearly vanished due to water diversion for irrigation, devastating local communities and wildlife.

Moreover, economic consequences are significant. Industries reliant on water for production face increased costs and operational disruptions. The cost of water is rising, impacting both individuals and businesses. Tourism, particularly in regions known for their natural water bodies, also suffers.

Solutions to Combat Earth's Dehydration

Addressing the Earth's dehydration requires a multifaceted approach. Firstly, sustainable water management practices are crucial. This includes improving irrigation efficiency in agriculture through technologies like drip irrigation, which minimizes water wastage. Industrial processes need to be redesigned to recycle and conserve water.

Governments and organizations must invest in infrastructure to capture and store rainwater, particularly in arid regions. Policies should promote the protection and restoration of natural ecosystems like wetlands, which play a vital role in maintaining the hydrological balance.

Public awareness and education are equally important. Individuals can contribute by adopting water-saving practices in their daily lives, such as reducing water wastage and supporting sustainable products. Innovations in water desalination and purification also offer potential solutions, though they must be pursued with environmental considerations in mind.

At a global level, international cooperation is essential. Water does not adhere to political boundaries, and many of the world's water sources are shared between countries. Diplomatic efforts to ensure equitable water distribution and joint management can help mitigate conflicts and ensure sustainable use.

Conclusion

The dehydration of our Earth is a critical issue that threatens the very fabric of life. Immediate and concerted efforts are necessary to reverse the damage and secure a sustainable future. A sustainable solution for potable water requires a multifaceted approach, combining surface water management, desalination, water reuse, conservation, efficient agricultural practices, alternative water sources, and integrated resource management. By diversifying water supply sources and promoting efficient use, governments can reduce dependency on groundwater and ensure a stable, sustainable supply of potable water for the future. By understanding the causes and consequences, and by implementing comprehensive solutions, we can work towards a world where water is available for all forms of life. As stewards of the planet, it is our responsibility to act now and ensure that the Earth remains a vibrant, thriving home for generations to come.

ENVIRONMENT and Human LIFE

Dr. Vinod Mandal
Associate Professor
Dept. of Chemistry
A.N. College, Patna

The natural environment has been undergoing continual change (of course physical as well as chemical changes) even before the evolution of man on this earth. The Evolution of Living beings is itself due to long chemical and physical changes occuring in this nature.

The whole universe is composed of chemicals. Universe consists of Matter and Energy. Matters create the physical form or stature of the universe, while Energy drives the different phenomena to conduct and regulate the systems of universe which are essential for stabilising the universe.

Matters are actually chemicals ranging from a single element (having its own existence independently in nature) to a more complex Long and Branched Chain or cydic gaint molecules. Thus the whole living and nonliving bodies existing air this Planet-Earth (which is a tiny part of this universe) are actually composition of Pure Chemicals. The whole area surrounding us from earth surface to space creates environment.

The natural environment has been undergoing continual change (of course physical as well as chemical changes) even before the evolution of man on this earth. The Evolution of Living beings is itself due to long chemical and physical changes occuring in this nature. Some of these natural changes are irreversible, while others are cyclic or transient.

The growth of Human Civilisation is based purely on exploitation of environment. The exploitation and control of environment often creates conflicts between human goals and natural processes. In order to achieve greater yields or for other purposes, man deflects the natural flows of energy, by-pass natural processes, severs food chains and simplifies eco-systems.

Each and every act (walking, running, speaking, digestion even thinking) of a living being (Plant or Animal) is due to some chemical and/or Biochemical changes occurring inside the body of that living being. Chemical or Biochemical changes or reactions must accompanied with the exchange of Energy (mostly inform of Heat, a few due to

Mechanical energy, Electrical energy, Energy of light...). Thus Human Life is completely governed and run by the exchange or transformation of matter and energy. Consequently even a minor change in environment due to change in energy of any form must greatly affect the human life. The best example of environmental change may be cited of the use of fire. From the primitive age the use of fire which generates heat and light by the burning initially of wood, grass and later on the animal fat, vegetable oil and recently of fossil oils, started to distort or destroy the natural environment.

Due to this fire-generated by burning of natural products some amount of extra energy in form of heat, light as well as several types of harmful gases like CO, CO_2, SO_2, NO, N_2O, NO_2... accumulate and increase the level of gases as well as increase the temperature of natural environment.

Even the increase in temperature in environment causes so many changes in human life by changing the Rate and Mode of Chemical/Biochemical reactions occurring inside the body from Toe to Head. Due to this change the equilibrium of body is disturbed and hence a man suffers from several disease.

Thus the change of Natural Environment changes a human life and behaviour of a per as well.

युग प्रवर्तक महात्मा कबीर

डॉ. संजय कुमार सिंह
हिन्दी विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

''ऐसे थे कबीर। सिर से पैर तक मस्त-मौला; स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़; भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचंड; दिल के साफ, दिमाग के दुरुस्त; भीतर से कोमल, बाहर से कठोर; जन्म से अस्पृश्य, कर्म से वंदनीय। वे जो कुछ कहते थे अनुभव के आधार पर कहते थे, इसीलिए उनकी उक्तियाँ बेधनेवाली और व्यंग्य चोट करने वाले होते थे।''

मध्ययुगीन भक्त कवियों में महात्मा कबीरदास का व्यक्तित्व अप्रतिम है। वे अपने समय के सबसे प्रखर एवं स्पष्ट वक्ता थे। उन्होंने बड़ी निर्भिकता के साथ धार्मिक क्षेत्र में प्रवर्तित बाह्याचारमूलक अंधविश्वासों और रूढ़ियों का खण्डन किया। उनका विश्वास था कि ईश्वर भक्ति के मार्ग में मिथ्या कर्मकाण्ड और पाखण्ड के लिए कोई स्थान नहीं है। सच्चा संत पुरुषार्थ में तो विश्वास करता है किन्तु अकर्मण्य होकर ढोंग और दंभ का बोझ नहीं ढोता। भाग्य और अदृष्ट के सहारे प्रमाद को प्रश्रय देने वाले ढोंगी साधुओं से उन्हें बड़ी घृणा थी और वे बड़े साहस के साथ करम की रेख पर मेख मारने की बात कह सकते थे।

कबीरदास ने यह अनुभव कर लिया था कि शास्त्र-मर्यादा के साथ सम्प्रदाय-निष्ठा अनायास ही जुड़ी रहती है और शास्त्र तथा सम्प्रदाय की सीमा में रहकर मानव मात्र के लिए भक्ति का सर्व-सुलभ पथ प्रशस्त नहीं किया जा सकता। भक्ति-पथ के दो बड़े अवरोध हैं, शास्त्र और सम्प्रदाय, जो भक्ति-भावना को अनाविल भले ही रखते हों किन्तु सहज और सरल नहीं रहने देते। कबीर सहज में आस्था रखने वाले मानववादी व्यक्ति थे। इस्लाम को स्वीकार करने पर भी मज़हबी कट्टरता से वह कोसों दूर थे। उनका कोई लगाव किसी रूढ़ और अन्ध-मर्यादा में नहीं था। हृदय की स्वच्छ कसौटी पर विवेक की जो खरी लीक बनती उसे ही कबीर साहब सही मानते। अनुभव की तुला पर तथ्य और सत्य की परख कर ग्रहण या त्याग की पद्धति ही उनका जीवन-क्रम बन गया था।

सत्य की खोज में निकले हुए जिज्ञासु की भांति वे प्रत्येक क्षेत्र में निजी अनुभव को ही प्रमाण मानते थे। साधना और अनुभव के बीच कोई खाई उन्होंने कभी नहीं खोदी और आँख मूँदकर पोथी-पुस्तक का सहारा नहीं लिया। 'मसि कागद छूयो नहीं' का अभिधेयार्थ ही अभी तक सही माना जाता है, किन्तु लाक्षणिक दृष्टि से भी यह तथ्य उनके अनुभूति पक्ष का पोषक है। किताबें पढ़कर ज्ञानी बनने वाले पण्डितों का जितनी प्रखरता के साथ कबीर ने विरोध किया, उतनी प्रखरता के साथ पहले किसी ने नहीं किया था।

इन विलक्षण गुणों के अतिरिक्त कबीर की भक्ति-पद्धति, रहस्यवादिता, धार्मिक तथा सामाजिक मान्यताएं भी ऐसी हैं जो सामान्य व्यक्ति की सीमाओं से उच्चतर भूमि पर है। कबीर के व्यक्तित्व का विश्लेषण करने के साथ उनकी मान्यताओं पर अनेक विद्वानों ने विचार-विमर्श किया है। उनके धर्म और दर्शन के सम्बन्ध में गहन विचारों का विश्लेषण करने वाले विद्वान कबीर को रहस्यवादी ठहराते हैं और साथ ही उच्च कोटि का भक्त कवि भी। वस्तुतः कबीर का व्यक्तित्व अनेक दृष्टिकोण से बेजोड़ है।

कबीर भक्त थे, कवि और समाज सुधारक थे, मानवतावादी सत्पुरुष थे। उनके काव्य में प्रतीक और अप्रस्तुत

योजना का सुन्दर विधान है। उनकी भाषा में विलक्षण शक्ति का स्रोत है। इन्हीं कारणों से विद्वान इन्हें विविध रूपों में महात्मा, सन्त और महापुरुष होने के साथ महाकवि भी स्वीकार करते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ठीक ही कहा-**''हिन्दी साहित्य के हजार वर्षों के इतिहास में कबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न नहीं हुआ। मस्ती फक्कड़ाना स्वभाव और सब कुछ झाड़ फटकार कर चल देने वाले तेज ने कबीर को हिन्दी साहित्य का अद्वितीय व्यक्तित्व बना दिया है।''**

कबीरदास में अपने प्रति तथा अपने प्रिय के प्रति एक अखण्ड, अविचलित विश्वास था उसी ने उनकी कविताओं में असाधारण शक्ति भर दी है। उनके भाव सीधे हृदय से निकलते हैं और श्रोता पर सीधे चोट करते हैं। प्रेम भक्ति का यह पौधा भावुकता की आँच से न तो झुलसता ही है और न तर्क के तुषारपात से मुरझाता है। वह हृदय के पातालभेदी अन्तस्तल से अपना रस संचय करता है। न आँधी उसे उखाड़ सकती है और न पानी उसे बहा सकता है। इस प्रेम में मादकता नहीं है पर मस्ती है, कर्कशता नहीं है पर कठोरता है, असंयम नहीं है पर मौज है, उच्छृंखलता नहीं है पर स्वाधीनता है, अन्धानुकरण नहीं है, पर विश्वास है, उजड्डता नहीं है पर अक्खड़ता है - इनकी प्रचण्डता सरलता का परिणाम है, उग्रता विश्वास का फल है, तीव्रता आत्मानुभूति का विवर्त है। यह प्रेम वज्र से भी कठोर है, पर कुसुम से भी कोमल! इसमें हार भी जीत है, जीत तो जीत है ही। यथा -

हारौं तो हरि नाम है, जो जीतूँ तो दाव।
पारब्रह्म सौं खेलता, जो सिर जाय तो जाय।।

इस सरलता और विश्वास के कारण ही जहाँ वह एक स्थान पर भगवान के निकट अतिशय विनीत और अहंकार विहीन दीखते हैं वहीं दूसरे स्थान पर चुनौती देते हुए भी दिख जाते हैं। पर कहीं भी उन्होंने शिकायत नहीं की, मचलने का अभिनय नहीं किया, उपालंभों की झड़ी नहीं लगाई - महान् की महत् मर्यादा को उन्होंने कभी अपनी ससीमता से गंदला नहीं किया। साईं के प्रति उनकी भक्ति अडिग है। वह राम के कुत्ते के रूप में अपना परिचय देते नहीं लजाते। आत्मसमर्पण की यह हद है। इतने पर भी मन की प्रतीति नहीं होती कि यह प्रेमरस पर्याप्त है। क्या जाने उस प्रियतम को कौन-सा ढंग पसन्द हो, कौन-सी वेश-भूषा रुचिकर हो, हाय उस अजब मस्ताने प्रिय का समागम कैसा होता होगा! -

मन परतीति न प्रेम रस, ना इस तन में ढंग।
क्या जाणौं उस पीव-सूँ, कैसी रहसी रंग।।

इस उक्ति को अपने प्रति अविश्वास समझना गलती होगी। इसमें केवल प्रेमातिशय और औत्सुक्य प्रकट हुआ है। भक्त को अपने ऊपर पूर्ण विश्वास है, पर प्रिय की उच्चता और महिमा के प्रति उसका विश्वास और भी अधिक है। अविचल प्रेमी ही यह सोचता है कि उसका प्रिय कहीं अतृप्त न लौट जाय। अपनी अपूर्णता इस उत्सुकता और आशंका का कारण होती है, अपने प्रति अवज्ञा नहीं।

कबीरदास की एक और खासियत है वह है व्यंग्य वाणी। सच पूछा जाय तो आज तक हिन्दी साहित्य में ऐसा

जबर्दस्त व्यंग्यकार पैदा हीं नहीं हुआ। सीधे चोट करने वाली उनकी भाषा बिना कहे ही सब कुछ कह देने वाली शैली और अत्यंत सादी किन्तु तेज प्रकाशन-भंगी अनन्य साधारण है। यथा -

''मसजिद भीतर मुल्ला पुकारै, क्या साहब तेरा बहिरा है?
चिऊँटी के पग नेवर बाजे, सो भी साहब सुनाता है।
पण्डित होय के असान मारै, लम्बी माला जपता है।
अन्तर तेरे कपट-कतरनी, सो भी साहब लखता है।
सतवन्ती को गजी मिलै नहिं, वेश्या पहिरै खासा है।
जेहि घर साधू भीख ने पावै, भंडुआ खात बतासा है।

यह भाषा झकझोर देने वाली है। जितनी ही सहज उतनी ही तेज। पढ़ते समय साफ मालूम होता है कि कहने वाला अपनी ओर से एकदम निश्चिन्त है। अगर वह अपनी ओर से इतना निश्चिन्त न होता तो इस तरह का करारा व्यंग्य नहीं कर सकता। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन यहां प्रसंगानुकूल है - ''भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया - बन गया है तो सीधे-सीधे, नहीं तो दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार-सी नजर आती है। उसमें मानो ऐसी हिम्मत ही नहीं है कि इस लापरवाह फक्कड़ की किसी फरमाइश को नाहीं कर सके।''

अन्ततः यही कहा जा सकता है कि महात्मा कबीर युगावतार की शक्ति और विश्वास लेकर पैदा हुए थे, और युगप्रवर्तक की दृढ़ता उनमें विद्यमान थी, इसीलिए वह युग-परिवर्तन कर सके। उनके बहुआयामी व्यक्तित्व को आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने निम्नलिखित उत्कृष्ट शब्दों में भली भांति उकेरा है -

''ऐसे थे कबीर। सिर से पैर तक मस्त-मौला; स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़; भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचंड; दिल के साफ, दिमाग के दुरुस्त; भीतर से कोमल, बाहर से कठोर; जन्म से अस्पृश्य, कर्म से वंदनीय। वे जो कुछ कहते थे अनुभव के आधार पर कहते थे, इसीलिए उनकी उक्तियाँ बेधनेवाली और व्यंग्य चोट करने वाले होते थे।''

सन्त कवि लक्ष्मीनाथक लोक-वेद

डॉ. वन्दना कुमारी
असिस्टेंट प्रोफेसर
(मैथिली विभाग)
ए.एन. कॉलेज, पटना

मिथिलाक लोक-वेदक इएह मैथिलपन हुनक काव्य-रचनाक आकर्षणक प्रमुख उत्प्रेरक तत्त्व बनल। वस्तुतः लक्ष्मीनाथ गोसाइँकेँ जँ मिथिलाक सूर, तुलसी आ कबीरक समन्वित रूप कहल जाय तँ अत्युक्ति नहि मानल जयबाक चाही।

प्राचीन कालमे सन्त शब्दय भावना, अवस्था आ विशेष विचारवान व्यक्तिक अर्थमे प्रयोग होइत छल। हिन्दी साहित्यमे विशिष्ट रूपेँ ई शब्द निर्गुण ब्रह्मक मध्यकालीन उपासक कविगणक हेतु रूढ़ि जकाँ प्रयुक्त होइत अछि। रामचरितमानस, महाभारत, भागवत आदि प्राचीन ग्रन्थ सबमे सन्त शब्दक प्रयोग बुद्धिमान, पवित्रत्मा, सज्जन, परोपकारी, सदाचारी व्यक्तिसभक लेल कयल गेल अछि। मुदा बौद्ध धर्मग्रन्थ ''धम्मपद''मे सन्त शब्द शान्तक अर्थमे प्रयुक्त भेल अछि।[1] तथापि, भक्ति-काव्य ओ सन्त-काव्य परम्पराय भाव-बोधक दृष्टिएँ परस्पर विरोधी धारा मानल जाइत अछि। कारण, प्रथम थिक शास्त्रीय तथा दोसर थिक अशास्त्रीय, प्रथमक उद्देश्य थिक गार्हस्थ ओ पुनः पुनः जन्मधारण तथा दोसरक उद्देश्य थिक संन्यास ओ मोक्ष। प्रथममे अछि सहिष्णुता, दोसरमे उग्रता। प्रथममे बौद्धिक चिन्तनक सन्तुलन अछि तथा दोसरमे अछि अबौद्धिकता। प्रथम थिक साकारोपासना तथा दोसर थिक निर्गुणिया। मुदा सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ दुनूक अद्‌भुत संयोग ओ समन्वय कयलनि अछि।[2] ओ भक्त-कविसँ बेसी सन्त-कवि मानल गेलाह अछि।

से एहू लेल मानल गेलाह अछि जे लक्ष्मीनाथ गोसाइँ एक ब्रह्ममे विश्वास करैत छलाह। ओ अपन ओही एक ब्रह्मक रूपकेँ विभिन्न देवी-देवताक रूपमे देखलनि। इएह कारण अछि जे ओ कोनो एक सम्प्रदायसँ कहियो सम्बद्ध नहि रहलाह। ओ मिथिलाक भक्त सन्त परम्पराक अनुकूल समवादी विचारक परिचय अपन काव्य-रचनाक माध्यमसँ देलनि। एहि बातक पुष्टि पण्डित छेदी झा "द्विजवर" द्वारा सम्पादित हुनक "गीतावली"क आमुखसँ होइत अछि। पण्डित छेदी झा द्विजवर लिखैत छथि, ''स्वामीजी सगुणोपासकक लेल राम, कृष्ण, शिव, गुरु, गंगा प्रभृति देवतादिक उपासनाक लेल विनय लिखलनि अछि, हुनक चरित्रक वर्णन कयलनि अछि। तँ निर्गुणोपासकलोकनिक लेल निर्गुण ब्रह्मक वर्णन कयलनि। तकर भाषा अत्यन्त बोधगम्य रखलनि। सांसारिक लोककेँ हृदयस्पर्शी उपदेश देलनि।'' तात्पर्य ई जे ओ आम लोक आ सामान्य जनक कल्याणक भावनासँ काव्यक रचना कयलनि-जन जन हिताय, जन जन सुखाय। स्वाभाविके जे हुनक आम लोक आ सामान्य जनमे सब धर्म, सब पन्थ, सब सम्प्रदाय आ सब जातिक लोक-वेद सहजतासँ समाहित भेल छथि।

सधुकरी भाषा मुदा मैथिलीक प्रधानता : प्रायः एही सहजता आ समन्वयक प्रतिफल अछि जे लक्ष्मीनाथ गोसाइँक काव्यक भाषा शुद्ध ब्रजभाषा, अवधी किम्बा खड़ी बोली नहि, मैथिली मिश्रित सधुकरी भाषा अछि।[3] एहन सर्व-समावेशी सधुकरी मैथिली जे शिक्षित-निरक्षर सब लोकक बुझबा-योग्य अछि, जाहिमे मैथिली आ मिथिलाक

लोक-वेद बजैत अछि। शब्दक चयन आ भाषाक प्रयोगमे हुनक मैथिलत्व हुनक सुचिन्तित उद्यमक उपजा थिक। एहि बातकेँ प्रसिद्ध विद्वान आ प्राध्यापक प्रो. आनन्द मिश्र आओर फरिछबैत कहैत छथि जे लक्ष्मीनाथ गोसाइँक रचनामे मैथिलीक बाहुल्य तँ अछिये, ब्रजभाषाक प्रभाव सेहो कम नहि देखबामे अबैत अछि। सन्तलोकनिक भाषा एही कारणेँ सधुकरी भाषा कहल जाइत छलैक, जाहिमे कोनो भाषा-विशेषक व्याकरणक बन्धन नहि रहैत छलैक। हुनकालोकनिक सिद्धान्त छलनि, ''बात अनूठी चाहिए, भाषा कोउ होय''। तेँ हुनकर रचनामे भाव-प्रवणतापर ध्यान देब आवश्यक, भाषा पर नहि।[4] एहि सन्दर्भमे मैथिली साहित्यक प्रमुख इतिहासकार डॉ. दुर्गानाथ झा "श्रीश" सेहो मानैत छथि जे लक्ष्मीनाथक काव्य-भाषा लोकभाषासँ अधिक निकट अछि तथा ओहिमे साहित्यिक भाषाक परिनिष्ठिताक अभाव प्रतीत होइत अछि।[5] साहित्यिक परिनिष्ठिताक इएह अभाव हुनक लोकप्रियता आ जन-स्वीकार्यताक कारक बनल। अन्यथा सम्भव छल जे हुनको काव्य-रचना धर्म-भावसँ ललका कपड़ामे लेपटाय धराउ बनल रहि जइतनि।

कवि-उपन्यासकार-इतिहासकार प्रो. मायानन्द मिश्रक मान्यता छनि जे सन्त कवि लक्ष्मीनाथक काव्य-भाषा मैथिली, ब्रजभाषा तथा सधुक्कड़ीक मिश्रित भाषा अछि किन्तु प्रमुखता अछि मैथिली भाषाक।[6] हुनक काव्य-रचनामे मैथिलीक इएह प्रमुखता हुनका अन्य भाषा-भाषी सन्त कविसँ फुटकबैत विशिष्ट निजत्वक संग उच्च पदासीन करैत छनि। मैथिलीक आ मिथिलाक सन्त-कवि बनबैत छनि। ध्यान देबाक थिक जे विभिन्न प्रान्तक सधुकरी भाषाक स्वरूप भिन्न-भिन्न होइत अछि। ओहिपर स्थानीय अथवा क्षेत्रीय भाषाक सुगन्धि आ सौरभ अनायासे रचि-बसि जाइत अछि। प्रायः तेँ लक्ष्मीनाथ गोसाइँ मिथिलाक एहन अनमोल सन्त कवि छथि जे अपन रचनामे मिथिलाक पाबनि-त्योहार, रीति-रिवाजक संग मैथिलीक निज ठेठ शब्द, लोकोक्ति, क्रिया, विशेषण, ध्वनि आदिक प्रचुरतासँ प्रयोग कयलनि अछि, जे आन प्रान्तक सधुकरी भाषासँ हुनका फुट-फराक करैत छनि। हुनक भाषा मिथिलाक "सधुकरी" भाषा कहल आ मानल जायत।[7]

मैथिली भासगीतपर आधारित रचना : एतबे नहि, सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ अनेक देवी-देवताक साकारोपासनाक भक्तिपद सेहो लिखने छथि जाहिमे विष्णुपद, महेशवाणी आ गंगाक वन्दना प्रमुख अछि। हिनक एहि कोटिक पद रागतालाश्रयी अछि। ई अनेक भासगीतक रचना सेहो कयलनि जाहिमे मिथिलाक निज राग-भास मानल जायवला चौमासा, तिरहुति तथा पराती आदि प्रमुख अछि। डॉ. दुर्गानाथ झा "श्रीश" सेहो स्वीकार करैत छथि जे हिनक पद मैथिल परम्पराक गीतक अनुसरण करैत अछिय यथा-चौमासा, तिरहुति, प्राती, विष्णुपद ओ महेशवाणी।[8] दोसर दिस प्रो. मायानन्द मिश्रक अनुसार, सन्त लक्ष्मीनाथ निराकारी पदक रचना कयने छथि, जाहिमे यौगिक क्रिया-प्रक्रियाक संगहि सन्त-काव्यक अपन विम्ब-विधानक प्रचुर प्रयोग भेल अछि।[9]

यद्यपि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ वृहत्तर मिथिला-भूमिक प्रचलित आ लोकप्रिय लोकगीतक भासपर विभिन्न भाव-भंगिमाक गीतक रचना अवश्य कयलनि मुदा से महाकवि विद्यापतिक गीत जकाँ मात्र महिला-कण्ठक आभूषण बनल नहि रहि गेल। हुनक गीतक परिधि विस्तार भेलय तकर कारणो स्पष्ट अछि। कारण ई भेल जे सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ वृहत्तर मिथिलाक प्रसिद्ध लोकगीतक भासक अवलम्ब मात्र लेलनि मुदा लिखलनि ओ मूलतः साहित्यिक गीत। आ साहित्यिक गीतमे अपेक्षित सरसताक अभाव बहुधा देखल गेल अछि। लक्ष्मीनाथ गोसाइँक रचनाक संग सएह विडम्बना रहलनि। हुनक रचना कतहु कलात्मक उच्चता, कतहु पौराणिक श्रेष्ठता आ कतहु भक्ति-भावनाक प्रबलतासँ अनुप्राणित होइत रहलनि। लोकक मनोरंजन मात्र करब आ लोकप्रियता प्राप्त करब कहियो हुनक अभीष्ट रहबे नहि कयलनि। दोसर दिस, वेदान्तक गहन अध्ययन हिनक पदकेँ अधिक खन वैचारिक सन्तुलनक दृष्टिएँ सम्यक् बनौने रखलकनि। तथापि भावक निर्मलता ओ सरलता, भक्तिक प्रवणता ओ तन्मयता, अभिव्यक्तिक सहजता तथा मिथिलाक ठेठ शब्दावलीक प्रयोग हिनका सहजहि अधिकाधिक पाठक-श्रोता दैत रहल अछि।[10]

मैथिल ग्राम्य चित्त-वृत्तिक विशेषता : हुनक काव्यक एक पैघ विशेषता मैथिल ग्राम्य-मनोवृत्तिक अद्‌भुत चित्रण सेहो अछि। ग्रामीण मैथिलक अनुराग-विराग, हुनक आशा-आकांक्षा, घृणा-सम्वेदना, वातावरणक हेरफेर एवं जीवनक तीत-मीठ अनुभवक ओ अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण कयने छथि। इएह कारण अछि जे कविक व्यक्तित्व, विचार आ भावावेशक प्रति ग्रामीणलोकनिमे सहज अनुराग आ दृढ़ विश्वास उत्पन्न होइत छनि। कवि सर्वदाक लेल हुनक आत्मीय भ' जाइत छथि।[11] तात्पर्य ई जे सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँक कवि-व्यक्तित्व अगाध आ अपरिमेय तथा ओकर मैथिलपन सर्वथा श्लाघनीय-अनुकरणीय अछि।

एक दिस राज्याश्रित होयबाक दबाव अथवा आग्रहमे महाकवि विद्यापति पहिने संस्कृत तथा प्राकृत भाषामे रचना कयलनि आ मैथिली भाषामे रचना बहुत बादमे कयलनि। तँ दोसर दिस, सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ से नहि कयलनि। ओ अपना समयक परिनिष्ठित ब्रजभाषा वा अवधी अथवा संस्कृतमे रचनाक' सकैत छलाह। मुदा से नहि कयलनि। ओ मातृभाषा मैथिलीक ऋणी होयब स्वीकार कयलनि। आ से केवल भाषेक स्तरपर नहि। मिथिलाक रीति-रिवाज आ प्रथा ओ लोक-वेद आ लोक-व्यवहारक मैथिल निजत्व हुनक रचनाक केन्द्रीय तत्त्व बनल। शिशु-जन्मक समयमे बधाइ ओ उत्सवक बिध स्थान-स्थानपर भिन्नता रखैत अछि। सूरदास एकटा विशेष प्रथा देखौलनि जे एहि अवसर पर ब्रज-वनिता परस्पर गारि द' विनोद करैत छथि। लक्ष्मीनाथ गोसाइँक रचनामे से बात कतहु नहि छनि। कारण जे मिथिलामे एहि तरहक प्रथा नहि छल। लक्ष्मीनाथ गोसाइँ बाल-कृष्णक वर्णनक क्रममे हाव-भाव, कथोपकथन आदि व्यावहारिक बातक माध्यमसँ ब्रजक नारीक चरित्र-चित्रण जाहि तरहेँ कयने छथि, से मिथिलेमे सम्भव। तहिना स्थानीय/क्षेत्रीय पाबनि-तिहारक वर्णनक सूक्ष्मता हुनक लक्ष्य आ दृष्टिक स्पष्ट बोध करबैत अछि। आर तँ आर, फगुआक जे दृश्य हुनका पदमे आयल अछि से मिथिला, विशेष रूपसँ बनगाँवक फगुआक विशेषतापर अवलम्बित बुझना जाइत अछि।[12]

लक्ष्मीनाथ गोसाइँक काव्य-विषयक वैविध्य : लक्ष्मीनाथ गोसाइँक काव्य-रचनाक प्रमुख विषय छल राम आओर कृष्णक लीला वर्णन। एकर अतिरिक्त ई विभिन्न तरहक उपदेशात्मक भजनक रचना सेहो कयलनि।[13] कहल जाइत अछि जे लक्ष्मीनाथ गोसाइँ सम्पूर्ण राम आ कृष्ण-चरितकेँ पद्यबद्ध करबाक व्रत लेने छलाह। उपलब्ध सामग्रीक प्रवृत्तियो एही मानसिकता आ विचार दिस तर्जनी-संकेत करैत बुझना जाइत अछि। लक्ष्मीनाथ गोसाइँक उपलब्ध पदमे आधासँ किछु कम कृष्ण-विषयक अछि। शेष पदक अर्द्धांश राम-विषयक अछि आ अन्य शेष पद प्रमुखतः भक्ति, ज्ञान तथा वैराग्य सम्बन्धी अछि। एकर अतिरिक्त नचारी आ लोकभासपर आधारित लोकगीत सेहो अछि। अर्थात् भक्ति-काव्यक सब प्रमुख प्रवृत्ति लक्ष्मीनाथ गोसाइँक रचनामे अछि। तथापि कविक सर्वाधिक प्रिय विषय कृष्ण-चरित रहल अछि। प्रायः तँ लक्ष्मीनाथ गोसाइँक काव्यक प्रथम समीक्षक डॉ. ललितेश्वर झा मैथिली काव्यमे लक्ष्मीनाथ गोसाइँक स्थान महाकवि विद्यापति आ गोविन्ददासक बाद मानैत छथि।

लक्ष्मीनाथ गोसाइँक काव्य-संसारक विश्लेषणसँ स्पष्ट भ' जाइत अछि जे कृष्ण विषयक रचनामे ओ अपन कल्पनाशीलता आ काव्य-प्रतिभाक संग श्रेष्ठताक उच्च शिखरपर आसीन छथि। हुनकर कृष्ण, राधा, यशोदा, नन्द, बलराम आदि सुच्चा मैथिल लोक छथि। गोपी सब मिथिलाक नवयौवना छथि-तँ काव्य-परिवेश, वातावरण, संस्कार-व्यवहार सब किछु मिथिलाक माटि-गन्धसँ ओतप्रोत अछि।[14] आचार-विचार, बात-व्यवहार, पाबनि-तिहार, संस्कार-संस्कृतिक चित्रण करैत काल लक्ष्मीनाथ गोसाइँ मिथिलाक गाम-घर-लोक आ पर्यावरणसँ सायास बाहर नहि गेलाह। सम्पूर्ण वातावरण, कथानक आ कथा-वस्तु मैथिल आँखिक संग सृजित कयलनि। जकरा लोक हपसिक' स्वीकार कयलक।

तहिना, लक्ष्मीनाथ गोसाइँ अपन "राम-गीतावली"क रचना सेहो मिथिलाक परिवेशमे कयलनि जखन कि गोस्वामी तुलसीदास अवधक परिवेशमे। मिथिलामे ओहि समयमे बच्चाकेँ पलनापर झुलयबाक परिपाटी विकसित

नहि भेल छल, तँ गोसाइँजी कौशल्या द्वारा अँगनामे खेलबैत रामक स्वरूपक वर्णन कयने छथि।[15] लक्ष्मीनाथ गोसाइँ राम विषयक मात्र 118 टा भजनक रचना द्वारा रामजन्मसँ ल' रामक राज्याभिषेक धरिक वर्णन "राम-गीतावली"मे कयने छथि जे हुनक उच्च कवित्व-प्रतिभाक परिचायक थिक। ओ ओहि सब प्रसंगकेँ छोड़ि देलनि जे मिथिलाक सभ्यता-संस्कारसँ मेल नहि खाइत बुझना गेलनि। वृहत्तर मिथिलाक सामाजिक, राजनीतिक, साँस्कृतिक पटलपर अपन गहींर दृष्टि आ कल्पनाशीलताक मेलजोलसँ ओ कलात्मक भावाभिव्यक्ति देबामे पूर्ण आ प्रभावकारी सफलता प्राप्त कयलनि। वृहत्तर मिथिलाक लोक-वेदक इएह खाँटी मैथिलपन हुनक निजता थिक, विशिष्टता थिक आ थिक स्वतन्त्र परिचिति सेहो।

जीवन-यात्रक वैचित्र्य, पड़ाव आ मैथिलपन : ओना कोनो व्यक्ति लेल 85 सालक जीवन जँ बहुत पैघ नहि मानल जायत तँ छोट सेहो नहि मानल जयबाक चाही। लक्ष्मीनाथ गोसाइँक जीवन-यात्र सेहो ततेक दीर्घ-अवधिक रहलनि अवश्य, मुदा तैयो हुनक जन्मतिथिक ठीक-ठीक अन्दाज एखन धरि नहि बैसाओल जा सकल अछि। मुदा मृत्युतिथि स्थिर छनि 5 दिसम्बर, 1872 ईस्वी। एहि सम्बन्धमे लक्ष्मीनाथ गोसाइँक काव्यक प्रथम समीक्षक मानल जायवला विद्वान डॉ. ललितेश्वर झा हुनक "गीतावली"क फाइलपर जॉन साहेबक टिप्पणीकेँ प्रामाणिक मानैत उद्धृत करैत छथि, "The Babajee died at Phataki 5 Aghan Sudi 1280 Fasali&5 December 1872 A-D- said to have been 85 years of age-" प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. दुर्गानाथ झा "श्रीश"[16] एही उद्धरणक आधारपर गणना करैत अनुमान लगबैत छथि जे वर्ष 1787 केर कोनो मासमे हिनक जन्म भेल होयतनि। कथाकार-इतिहासकार प्रो. मायानन्द मिश्र सेहो एही गणनाकेँ प्रामाणिक मानैत छथि आ लिखैत छथि जे सन्त लक्ष्मीनाथक जन्म 1787 मे भेल छलनि।[17]

कहल आ मानल जाइत अछि जे ''होनहार वीरवान के होत चीकने पात''-से नेनपनेसँ लक्ष्मीनाथ गोसाइँक जे कार्यकलाप रहलनिय ओ कौतुककारी आ विस्मयकारी छल। मिथिलाक सामाजिक इतिहास आ समाजशास्त्रीय स्थिति कहैत अछि जे अठारहम-उनैसम शताब्दी धरि मिथिलामे सामान्य मैथिल परिवार आ लोक-वेदक जीवन-यापनक मुख्य साधन आ व्यवसाय खेती-किसानी रहल। पशुपालन ओकरे अनुषंगी कार्य छल। लक्ष्मीनाथ गोसाइँक परिवारो एहि स्थितिसँ भिन्न नहि छल। पारिवारिक स्थिति आ परम्पराक अनुरूप बालक लक्ष्मीनाथकेँ गाय चरयबाक भार देल गेलनि। से जखन ओ अन्य चरबाहा बच्चा सब संग गाय चराबय जाइथि, तँ हुनक लीला अलगे रहैत छल। गाछक डारिमे झूला झुलबाक बदला ई पयर बन्हबाय कतेको घण्टा उनटा लटकबाक तमाशा देखबैत छलाह। कबड्डी-चिक्कामे बहुत काल धरि दम साधि लोककेँ चौंकबैत छलाह। पानिमे डुबकी लगबैमे सबकेँ पराजित करैत छलाह। विनोदार्थ ई हठयोगक क्रिया सेहो करैत छलाह तथा अनायास हिनका मुँहसँ एकाध दोहा सेहो बहरा जाइत छलनि।[18]

यायावरीक उपजा : वस्तुतः लक्ष्मीनाथ गोसाइँ बाल्यकालहिसँ धार्मिक प्रवृत्तिक छलाह। आरम्भेसँ कुशाग्रबुद्धिक छलाह तँ शीघ्रे वेदान्तमे पारंगत भ' गेलाह। सम्भवतः इएह वेदान्त हिनकामे संन्यासक प्रति आकर्षण उत्पन्न कयने छल होयत।[19] सांसारिक जगत आ तकर लोक-व्यवहारसँ विरक्ति-भाव देखि पिता हिनक विवाह शीघ्र कराओल। मुदा तैयो पारिवारिक जीवन जेना हिनका बान्हिक' राखि नहि सकल। ओ अझक्के तीर्थयात्रपर निकलि गेलाह। बेतियासँ काठमाण्डू धरि। तराइक जंगलमे लम्बानाथ नामक स्वामीसँ हिनक भेंट भेलनि, जनिकासँ दीक्षा ल' ओ नओ वर्ष धरि ओहिठाम विकट तपस्या कयलनि। पाछाँ ईश्वर-भक्तिक प्रचारार्थ गुरुक आदेशसँ संसारमे पुनर्गमन कयलनि।[20] से जखन घुरलाह तँ जेना पयरमे घुरघुरा बन्हने अयलाह। भ्रमणशील बनल रहब आ यायावरी करैत रहब जेना हुनक व्यक्तित्त्वक स्थायी स्वभाव बनि गेल। एकरे प्रायः सन्त-भाव-स्वभाव कहल गेलैक अछि।

सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ यायावर रचनाकार रहथि। हुनक जीवन-यात्र एहि बातक गवाही थिक।

मुँगेर-सहरसा-बेतियासँ नेपाल, तिब्बत धरि हुनक यात्रा, कठिन तप-साधना, अनेक धर्मावलम्बीकेँ शिष्य बनायब, आशीर्वाद-स्वरूप कहल गेल कोनो सत्-वचनकेँ भनहि संयोगसँ, मुदा सत्य भ' जायब आदि एहन-एहन अनेक अबूझ खेरहा सभ अछि जे हुनका सामान्य कवि आकि रचनाकारसँ ऊपर, दैवीय शक्ति-सम्पन्न व्यक्तित्वक दर्जा प्रदान करैत अछि। ओ आम लोकक सामाजिक जीवनक प्रति ततेक सदय ओ सम्वेदनशील छलाह तथा अपन सिद्धिक द्वारा अनेक लोकक तेहन-तेहन अविश्वसनीय उपकार कयलनि, जाहि प्रसंग अनेक किम्वदन्ती आइयो प्रचलित अछि।[21]

स्थायी स्वभाव-धार्मिक समभाव : महाकवि विद्यापति जकाँ सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ कोनो राज्याश्रित कवि नहि छलाह। मात्र स्वान्तः सुखाय सेहो नहि लिखलनि। गार्हस्थ जीवनक त्याग करैत ओ जे सब कयलनि-लिखलनि, से समस्त मानवताक कल्याणार्थ, सामाजिकता-सामूहिकताक उपयोगार्थ। सर्वधर्म समभाव हुनक जीवनक अनिवार्य शर्त्त बनल रहलनि जाहिमे जाति कि धर्मक कोनो बन्धन नहि छल। छुआछूत तथा दोसर तरहक अन्य धार्मिक संकीर्णताक ओ विरोधी रहलाह तँ कर्मठताक प्रशंसक। अपन एही विचारक फलस्वरूप ओ धर्मशालाक अतिरिक्त व्यायामशालाकेँ सेहो प्रोत्साहित कयलनि। हिनक भक्त जॉन साहेब नामक इसाइयो छलाह, हिनक भक्त मुसलमानो छलाह।[22] हिन्दू तँ खैर रहबे करथिन। फटकी कुटी लग मुसहरी टोल जे गोसाइँजी द्वारा बसाओल गेल छल, से एहि बातक एखनहुँ साक्षी अछि जे निम्नवर्गीय लोकक ओ कतेक पैघ शुभचिन्तक छलाह। एतबे नहि, शकरपुरा स्टेटक जाहि बाबू लक्ष्मी नारायण सिंहक सहयोगसँ ओ बनगाँव, फटकी, परसरमा, लखनौर आदि स्थानमे कुटी बनबौलनिय ताहि सबमे राधा-कृष्णक ठाकुरबाड़ीक स्थापना सेहो करबौलनि। ओहि ठाकुरबाड़ीमे पाँच भजनियाँ, एक टहलू, एक पुजारी आ एक प्रबन्धक नियुक्त करबौलनि। अर्थात् एतेक गोटेकेँ स्थायी रोजगार भेटलैक। हिनकालोकनिक सब खर्चा, वेतन, भोग आदिक व्यवस्था करबौलनि। धर्मशाला बनबौलनि। कुटी परिसरमे इनार-पोखरि आदि सेहो खुनबौलनि। भूखल-गरीब लोक लेल समय-समयपर भोज-भण्डाराक व्यवस्था सेहो करबौलनि।

स्थापित तथ्य अछि जे लक्ष्मीनाथ गोसाइँ रहस्यमयी आ चमत्कारी पुरुष छलाह। अपन जीवनमे ओ अनेक चमत्कार देखौलनि। इतिहास एहि बातक साक्षी अछि जे एहि भू-लोकमे आबि जे केओ किछु चमत्कार देखौने छथि, हुनकामे लोक-देवताक अंश, समाज आ अनुयायी मानलनि अछि। कालक्रमे ओ व्यक्ति देवता-सदृश पूजल जाय लागल छथि। इएह कारण अछि जे लक्ष्मीनाथ गोसाइँ अपन जीवन-कालहिमे मिथिलाक घर-घरमे पूजल जाइत रहलाह आ एखनहुँ ओही भक्ति-भावक संग पूजल जाइत छथि। कतोक मैथिल भक्तक घरमे एखनहुँ विभिन्न देवी-देवताक बीच हिनकहु फोटोपर चानन-फूल चढ़ाओल जाइत अछि। एखनहुँ परसरमा, बनगाँव, महिनाथपुर (नेपाल), लखनौर, फटकी, दीघिया, रमौली आदि स्थानमे लक्ष्मीनाथक कुटी छनि। एहि कुटीसभक माहात्म्य एखनहुँ ओहिना अक्षुण्ण अछि आ दूर-दूरसँ हुनक भक्त आ अनुयायीलोकनि ओहिठाम आबि कृत्य-कृत्य होइत छथि।

मनसा-वाचा-कर्मणाक एकाकार रूप : सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ केवल पर-उपदेशक नहि छलाह। वरन् अपन रचनामे कहल बात स्वयं अपना जीवनपर उतारि देखबैत रहलाह आ प्रमाणित करैत रहलाह। कोनहु सिद्ध सन्त जकाँ मनसा-वाचा-कर्मणाक एकाकार रूप छलाह लक्ष्मीनाथ गोसाइँ। तैँ धर्म, धार्मिक आख्यान, धार्मिक चरित-नायक हुनक साधन बनलनिय साध्य नहि। अविश्वसनीय लागयवला घटनादि, रहस्य-रोमांच आ कौतुकसँ भरल हुनक जीवन प्रायः सेहो एहिमे सहजोर सहयोग कयलक। हुनक अनुयायीलोकनि हुनक जीवनक एहन-एहन अनेक खिस्सा आ वृत्तान्त सुनबैत काल अपूर्व सन्तुष्टिक अनुभव करैत छथिय से आइयो करैत छथि। मुदा एहि सबसँ ऊपर मानल जायत हुनक "मैथिल आँखि" संग मिथिलाक लोक-वेदक पक्षमे कयल गेल काव्य-रचनाय जे आम जन-सामान्यक कण्ठमे बसि गेल, कीर्तन-मण्डली आ भगवत-भजन प्रेमीलोकनिक कण्ठहार बनि गेल। केवल

भावुक स्त्री-कण्ठक स्थानपर सचढ़ धार्मिक आस्थावादीक संगबे बनि गेल। तकर कारण एकहि मानल जायत जे हुनक कृष्ण हो कि राधा, राम हो कि लक्ष्मण-सब मैथिल छथि, मिथिलाक लोक-वेद छथि। मिथिलाक लोक-वेदक इएह मैथिलपन हुनक काव्य-रचनाक आकर्षणक प्रमुख उत्प्रेरक तत्त्व बनल। वस्तुतः लक्ष्मीनाथ गोसाइँकेँ जँ मिथिलाक सूर, तुलसी आ कबीरक समन्वित रूप कहल जाय तँ अत्युक्ति नहि मानल जयबाक चाही।

सन्दर्भ संकेत

1. मिश्र, डॉ. फुलेश्वर, सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ, प्रकाशक : मैथिली अकादमी, पटना, वर्ष : 2003, ISBN : 81-85763-23-2 पृष्ठ : 15
2. मिश्र, मायानन्द, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : किसुन संकल्प लोक, सुपौल, वर्ष : 2014, पृष्ठ : 145
3. मिश्र, डॉ. फुलेश्वर, तिलकोर (भाग-एक), सम्पादक : डॉ. इन्द्रकान्त झा, डॉ. अनिल कुमार मिश्र, डॉ. लक्ष्मीकान्त चौधरी सजल, प्रकाशक : बिहार स्टेट टेक्स्ट बुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, पटना, वर्ष : 2007, पृष्ठ रू 85
4. मिश्र, डॉ. आनन्द, भूमिका, सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ, लेखक : डॉ. फुलेश्वर मिश्र, प्रकाशक : मैथिली अकादमी, पटना, वर्ष : 2003, ISBN : 81-85763-23-2, पृष्ठ : VIII
5. झा, डॉ. दुर्गानाथ श्रीश, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : भारती पुस्तक केन्द्र, दरभंगा, वर्ष : 1991, पृष्ठ : 159
6. मिश्र, मायानन्द, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : किसुन संकल्प लोक, सुपौल, वर्ष : 2014, पृष्ठ : 144
7. मिश्र, डॉ. फुलेश्वर, सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ, प्रकाशक : मैथिली अकादमी, पटना, वर्ष : 2003, ISBN : 81-85763-23-2, पृष्ठ : 118
8. झा, डॉ. दुर्गानाथ श्रीश, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : भारती पुस्तक केन्द्र, दरभंगा, वर्ष : 1991, पृष्ठ : 159
9. मिश्र, मायानन्द, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : किसुन संकल्प लोक, सुपौल, वर्ष : 2014. पृष्ठ : 145
10. उक्त, पृष्ठ : 145
11. मिश्र, डॉ. फुलेश्वर, सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ, प्रकाशक : मैथिली अकादमी, पटना, वर्ष : 2003, ISBN : 81-85763-23-2, पृष्ठ : 118-119
12. उक्त, पृष्ठ : 119
13. मिश्र, डॉ. फुलेश्वर, तिलकोर (भाग-एक), सम्पादक : डॉ. इन्द्रकान्त झा, डॉ. अनिल कुमार मिश्र, डॉ. लक्ष्मीकान्त चौधरी सजल, प्रकाशक : बिहार स्टेट टेक्स्ट बुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, पटना, वर्ष : 2007, पृष्ठ : 85
14. मिश्र, डॉ. फुलेश्वर, सन्त कवि लक्ष्मीनाथ गोसाइँ, प्रकाशक : मैथिली अकादमी, पटना, वर्ष : 2003, ISBN : 81-85763-23-2, पृष्ठ : 81
15. उक्त, पृष्ठ : 85
16. झा, डॉ. दुर्गानाथ श्रीश, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : भारती पुस्तक केन्द्र, दरभंगा, वर्ष : 1991, पृष्ठ : 159
17. मिश्र, मायानन्द, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : किसुन संकल्प लोक, सुपौल, वर्ष : 2014, पृष्ठ : 144
18. मिश्र, डॉ. फुलेश्वर, तिलकोर (भाग-एक), सम्पादक : डॉ. इन्द्रकान्त झा, डॉ. अनिल कुमार मिश्र, डॉ. लक्ष्मीकान्त चौधरी सजल, प्रकाशक : बिहार स्टेट टेक्स्ट बुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, पटना, वर्ष : 2007, पृष्ठ : 80
19. मिश्र, मायानन्द, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : किसुन संकल्प लोक, सुपौल, वर्ष : 2014, पृष्ठ : 144
20. झा, डॉ. दुर्गानाथ श्रीश, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : भारती पुस्तक केन्द्र, दरभंगा, वर्ष : 1991, पृष्ठ : 159
21. मिश्र, मायानन्द, मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रकाशक : किसुन संकल्प लोक, सुपौल, वर्ष : 2014, पृष्ठ : 144
22. उक्त, पृष्ठ : 145

प्रगतिवाद

डॉ. विद्या भूषण
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

प्रगतिवाद शोषित समाज के साथ खड़ा है। वह शोषकों के प्रति उत्कट घृणा का भाव रखता है और शोषण के तमाम छल-छद्म को उजागर करता है। वह शोषित समाज के अंदर प्रतिरोध और प्रतिकार की चेतना जागृत करता है। प्रगतिवाद जीवन, जगत और सच को नई दृष्टि से देखता-परखता है। जीवन के प्रति लौकिक दृष्टि रखते हुए वह एक कल्याणकारी समाज की वकालत करता है।

प्रगतिवादी आन्दोलन की शुरूआत 1936ई.में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना से मानी जाती है। प्रगतिवाद का संबंध उस विशेष काव्यधारा से है, जिसके अंतर्गत मार्क्सवादी विचारधारा को आधार बनाकर सामाजिक चेतना और भावबोध की कविताएँ लिखी गईं। नामवर सिंह कहते हैं- "प्रगतिशील साहित्य अंग्रेजी के प्रोग्रेसिव लिटरेचर' का हिन्दी अनुवाद है। अंग्रेजी साहित्य में इस शब्द का प्रचार 1935ई. के आस-पास विशेष रूप से हुआ जब ई.एम.फार्स्टर के सभापतित्व में पेरिस में 'प्रोग्रेसीव राइटर्स एसोसिएशन' नामक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का प्रथम अधिवेशन हुआ। हिन्दुस्तान में उसके दूसरे साल डॉ.मुल्कराज आनन्द और सज्जाद जहीर के उद्योग में जब उस संस्था की शाखा खुली और प्रेमचन्द की अध्यक्षता में लखनऊ में उसका प्रथम अधिवेशन हुआ तो यहां 'प्रोग्रेसिव लिटरेचर' अथवा 'प्रगतिशील साहित्य' का प्रचार हो गया। कालक्रम अथवा प्रकारान्तर से यही प्रगतिवाद हो गया।"[1]

20 वीं शताब्दी के तीसरे दशक के आरंभ से ही प्रगतिवाद के लिए आधारतल बनने लगा था। राष्ट्रीय आंदोलन में नई चेतना का समावेश होने लगा था। इस समय तक देश में किसानों और मजदूरों के आंदोलन तेज हो गए थे। जमींदारी प्रथा उन्मूलन सहित मजदूरों, श्रमिकों और किसानों के शोषण से जुड़े सवाल महत्वपूर्ण हो उठे थे। मजदूरों और किसानों के अखिल भारतीय स्तर पर संगठन कायम होने लगे थे। स्वयं कांग्रेस के भीतर वामपंथी रुझान उभर चला था। कांग्रेस समाजवादी पार्टी की स्थापना हो चुकी थी"-

दूसरे दशक के अंतिम वर्षों और तीसरे दशक के दौरान भारत में एक शक्तिशाली वामपंथ का उदय हुआ। राष्ट्रीय आंदोलन में मूलगामी परिवर्तन लाने में इसका योगदान काफी महत्वपूर्ण था। अब तक लक्ष्य राजनीतिक स्वतंत्रता हासिल करना था। इससे अब अत्यंत धारदार और सुस्पष्ट सामाजिक और आर्थिक अंतर्वस्तु का प्रवेश हुआ। राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष की धारा और दलित -शोषितों की सामाजिक- आर्थिक मुक्ति की धारा एक दूसरे के नजदीक आने लगी। समाजवादी विचारों ने भारत की धरती पर पैर जमाने शुरू कर दिए और समाजवाद भारतीय युवाओं का मान्य विश्वास बन गया। जवाहरलाल नेहरू और सुभाष चंद्र बोस इस विश्वास की प्रेरणा के प्रतीक बन गए। धीरे-धीरे वामपक्ष में दो ताकतवर दल उभरेः भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और कांग्रेस समाजवादी पार्टी।"[2]

हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद के उत्थान में प्रेमचंद की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।1930ई.के आसपास से ही प्रेमचंद के साहित्य की दिशा, दृष्टि और लक्ष्य जनता के शोषण, उत्पीड़न, संघर्ष और इन तमाम कुचक्रों से मुक्ति की तरफ हो चला था। सामाजिक और आर्थिक आजादी उसके मूल में आ गया। अपनी वैचारिकी को सरल भाषा

और अकृत्रिम कथानक के साथ उन्होंने अपने साहित्य को कुछ इस तरह से प्रस्तुत किया कि आम जनता को उसमें अपने दुःख दर्द और आशा-आकांक्षा की झलक दिखने लगी। वे आम जनता के बड़े और महत्वपूर्ण साहित्यकार बन गये।

"प्रेमचंद ने सन 1930 के आसपास ऐलानिया तौर पर कहा था कि वह जो कुछ लिख रहे हैं वह स्वराज के लिए, उपनिवेशवादी शासन से भारत को मुक्त कराने के लिए लिख रहे हैं। उन्होंने यह भी लिखा है कि केवल जॉन की जगह गोविंद को बैठा देना ही स्वराज नहीं है, बल्कि सामाजिक स्वाधीनता भी होना चाहिए। सामाजिक स्वाधीनता से उनका तात्पर्य संप्रदायवाद, जातिवाद, छुआछूत से मुक्ति और स्त्रियों की स्वाधीनता से भी था। इस अर्थ में स्वाधीनता की परिभाषा करते थे। उनकी प्रगतिशीलता का जो आधार था, उसे बहुत बुनियादी और क्रांतिकारी कहना चाहिए। उनकी रचनाओं पर नजर डालें तो उसमें जमींदार के खिलाफ गरीब किसानों की लड़ाई है, जाति व्यवस्था के खिलाफ दबे- कुचले लोगों की लड़ाई है। यद्यपि लोग उन्हें गांधीवादी कहते हैं, लेकिन वे गांधी से दो कदम आगे बढ़कर आंदोलन और क्रांति की बात करते हैं। प्रेमचंद अपने जमाने के साहित्यकारों से ज्यादा बुनियादी परिवर्तन की बात करते हैं"[3]

आदर्श की दुनिया से प्रेमचंद का मोहभंग उनके लेखन में नये तेवर के साथ अभिव्यक्त हो रहा था। 'गोदान' जैसे उपन्यास और 'पूस की रात' 'ठाकुर का कुआं', सद्गति तथा 'कफन' जैसी कहानियों में इसे देखा-परखा जा सकता है।

काव्य जगत की बात करें तो इस समय छायावादी कवियों की रचनाओं में शिल्प और अंतर्वस्तु दोनों ही स्तरों पर परिवर्तन देखने को मिलता है। छायावादी कवि, व्यक्ति की मुक्ति से आगे बढ़ कर वे समाज और राष्ट्र मुक्ति की ओर अग्रसर होते हैं। वैश्विक स्तर पर उधर रूस में 1917 में ही वोल्शेविक पार्टी लेनिन की अगुवाई में जार के राजशाही व्यवस्था का उन्मूलन कर समाजवादी राज्य की स्थापना कर चुकी थी और मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव एशियाई देशों में भी स्पष्ट रूप से दिखने लगा था-"इस क्रांति से लोगों को एक और शिक्षा मिलीः यदि आम जनता यानी मजदूर, किसान और बुद्धिजीवी वर्ग संगठित होकर जार के शक्तिशाली साम्राज्य का तख्ता पलट सकते हैं और ऐसी सामाजिक व्यवस्था कायम कर सकते हैं जिसमें एक आदमी दूसरे का शोषण नहीं करता तब ब्रिटिश साम्राज्यवाद से संघर्ष करने वाली भारतीय जनता भी ऐसा कर सकती है। समाजवादी सिद्धांतों की तरफ विशेष रूप से मार्क्सवाद की ओर जो बोल्शेविक पार्टी का मार्गदर्शक सिद्धांत था लोग अचानक आकर्षित हुए।"[4]

प्रेमचन्द का 'प्रगतिशील लेखक संघ' के लखनऊ अधिवेशन में सभापति के आसन से दिया हुआ भाषण 'कुछ विचार' पुस्तक में संकलित है। प्रेमचंद का वक्तव्य दरअसल साहित्य और समाज के अंतर्संबंध को नई दृष्टि से परिभाषित करता है। आम जनता से जुड़े मौलिक और महत्वपूर्ण सवाल को साहित्य के केंद्र में स्थापित करता है। प्रेमचन्द बदलते हुए समय में साहित्य के स्वरूप और उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहते हैं-"साहित्य उसी रचना को कहेंगे जिसमें कोई सचाई प्रकट की गई हो, जिसकी भाषा प्रौढ़, परिमार्जित और सुन्दर हो और जिसमें दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हो और साहित्य में यह गुण पूर्ण रूप में उसी अवस्था में उत्पन्न होता है, जब उसमें जीवन की सच्चाइयाँ और अनुभूतियाँ व्यक्त की गई हों।.. साहित्य की बहुत सी परिभाषाएँ की गई हैं,पर मेरे विचार से उसकी सर्वोत्तम परिभाषा 'जीवन की आलोचना' है। चाहे वह निबंध के रूप में हो, चाहे कहानियों के या काव्य के, उसे हमारे जीवन की आलोचना और व्याख्या करनी चाहिए।"[5]

प्रेमचंद अपने विचार को लेकर स्पष्ट थे। उनके लिए साहित्य में आह और वाह के लिए कोई स्थान नहीं था। समाज में विषमता और शोषण के अंधेरे से लडने वाले प्रकाश स्रोत के रूप में, वो साहित्य देखते थे। वे सामान्य जनजीवन में साहित्य की भूमिका को वे नई दृष्टि से देखते हैं और साहित्यकारों को प्रेरित करते हुए कहते हैं-"साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का समान जुटाना नहीं है,-उसका दरजा इतना न गिराइए। वह देश-भक्ति और राजनीति के पीछे चलनेवाली सचाई भी नहीं, बल्कि वह आगे मशाल दिखाती हुई चलनेवाली सचाई है।"[6]

साहित्य को सामाजिक संदर्भों और यर्थाथ से जोड़ते हुए, उसकी प्रतिबद्धता को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं-"हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा, जिसमें उच्च चिंतन हो, जीवन की सचाइयों का प्रकाश हो-जो हममें गति और बेचैनी पैदा करे,सुलाए नहीं; क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।"[7]1938 ई में कोलकाता में प्रगतिशील लेखक संघ का दूसरा अधिवेशन हुआ। रविंद्र नाथ टैगोर इस अधिवेशन के अध्यक्ष थे।

अधिवेशन के घोषणा पत्र में पूरी स्पष्टता के साथ कहा गया कि "प्रत्येक भारतीय लेखक का कर्तव्य है कि वह भारतीय जीवन में होने वाले परिवर्तनों को अभिव्यक्ति दे और साहित्य में वैज्ञानिक बुद्धिवाद का समावेश करके देश में क्रांति की भावना के विकास में सहायता पहुंचाएं। उन्हें साहित्य - समीक्षा के ऐसे दृष्टिकोण का विकास करना चाहिए,जो परिवार, धर्म, काम, युद्ध और समाज के प्रश्नों पर सामान्यतः प्रतिक्रियाशील तथा पुराणपंथी प्रवृत्तियों का विरोध करे। उन्हें ऐसी साहित्यिक प्रवृत्तियों का विरोध करना चाहिए जो सांप्रदायिकता, जाति-द्वेष तथा मनुष्य के शोषण की भावना को प्रतिबिंबित करती हो।"[8]

बदले हुए हालात में पंत छायावाद के कल्पना लोक से यथार्थ की मनोभूमि पर उतरते हैं।वे युगान्त लिखकर छायावादी युग के अंत (1936) की घोषणा करते हैं। वे कहते हैं -"युगांत में पल्लव की कोमलकांत कला का अभाव है इसमें मैंने जिस नवीन क्षेत्र को अपनाने की चेष्टा की है, मुझे विश्वास है भविष्य में मैं उसे अधिक परिपूर्ण रूप में ग्रहण एवं प्रदान कर सकूंगा"[9]

इस संग्रह की पहली कविता ही कविता की नई जमीन का परिचय देती है -

"द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र!
हे स्रस्त-ध्वस्त! हे शुष्क-शीर्ण!
हिम-ताप-पीत, मधुवात-भीत,
तुम वीत-राग, जड़, पुराचीन!!"

अक्सर यह समझा जाता है कि प्रगतिवाद छायावाद के विरोध में जन्मा हुआ काव्य आंदोलन है, मगर सच्चाई यह है कि यह छायावाद का ही विस्तार और विकास है। यह छायावाद के भीतर से जन्मा हुआ काव्य आंदोलन है। नंदकिशोर नवल कहते हैं-"जहां तक छायावादियों की बात है, कविता के क्षेत्र में प्रगतिवाद का नेतृत्व सर्वप्रथम निराला और पंत ने ही किया। 1936 के बाद से इन दोनों महाकवियों के लेखन का ढंग बदलने लगता है और निराला 'कुकुरमुत्ता' तथा 'बेला' और 'नए पत्ते' की की कविताओं की रचना करते हैं और पंत 'युगान्त' में छायावाद के अंत की सूचना देने के बाद 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' की कविताओं की। इन्हीं कविताओं ने हिन्दी कविता में पहली बार यथार्थवाद के लिए द्वार उन्मुक्त किया और उसके अंतर्गत श्रेष्ठ काव्य की रचना कर उसमें नए युग का सूत्रपात किया। पंत जी ने तो 1938 में 'रूपाभ' नाम से प्रगतिशील आन्दोलन को फ़ैलाने के लिए एक पत्रिका भी निकाली थी, जिसमें प्रकाशित एक लेख में उन्होंने कहा था कि इस युग की कविता सपनों में नहीं पल सकती, इसलिए अपने

पोषण के लिए उसकी जड़ें कठोर धरती का आश्रय ले रही है। उनके इस लेख को प्रगतिवाद का घोषणा- पत्र माना जाता है जैसे उनके 'पल्लव' की भूमिका को छायावाद का घोषणापत्र। जिस कवि ने छायावाद का घोषणा पत्र लिखा था, उसी ने प्रगतिवाद का भी घोषणा पत्र लिखा यह तथ्य इस आरोप का खंडन करने के लिए काफी है कि प्रगतिवाद हिंदी कविता का स्वाभाविक विकास नहीं है।"[10]

सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति प्रगतिवाद का प्रधान लक्ष्य है। वह वर्ग आधारित भेदभाव पर तीखा प्रहार करता है। मार्क्सवाद को मद्देनजर रखते हुए अशोक कुमार पाण्डेय वर्ग के स्वरूप पर बात करते हुए कहते हैं वर्ग के पारंपरिक संरचना आर्थिक आधार पर है एक वर्ग जिसे उत्पादन के साधनों पर अधिकार होता है और दूसरा जिसके पास ऐसा कोई अधिकार नहीं होता और वह पहले वर्ग के यहां मजदूरी या वेतन के बदले अपना श्रम बेचता है यानी एक शोषक वर्ग और एक वंचित वर्ग"[11]

प्रगतिवाद शोषित समाज के साथ खड़ा है। वह शोषकों के प्रति उत्कट घृणा का भाव रखता है और शोषण के तमाम छल-छद्म को उजागर करता है। वह शोषित समाज के अंदर प्रतिरोध और प्रतिकार की चेतना जागृत करता है। प्रगतिवाद जीवन, जगत और सच को नई दृष्टि से देखता-परखता है। जीवन के प्रति लौकिक दृष्टि रखते हुए वह एक कल्याणकारी समाज की वकालत करता है। सामाजिक- आर्थिक स्तर पर किसी भी प्रकार की विषमताओं का वह तीव्र विरोध करता है। रूढ़िमुक्त समाज का वह हिमायती है। प्रगतिवादी कवि नारी के ऊपर हो रहे किसी भी प्रकार के अत्याचार का विरोध करता है। ये कवि साहित्य और कला का उद्देश्य सामाजिक संदर्भों से जोड़कर देखते हैं। केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, रामविलास शर्मा, मुक्तिबोध, शमशेर, शिवमंगल सिंह सुमन, त्रिलोचन के अलावा पंत, निराला, दिनकर, नरेन्द्र शर्मा आदि कवियों की रचनाओं में भी हम प्रगतिशील मूल्यों को देख सकते हैं। प्रगतिवाद की काव्यगत विशेषताओं को निम्नलिखित उप-शीर्षकों के माध्यम से समझा जा सकता है -

'समाजवादी यथार्थवाद : प्रगतिवाद के कवि शोषित, पीड़ित और वंचित वर्ग के प्रति बेहद संवेदनशील हैं। इस काव्यधारा के कवियों ने आदर्शवाद और अध्यात्मवाद को खारिज करते हुए समाज की सच्चाइयों को पूरी निर्ममता के साथ अभिव्यक्त किया है। इनका यथार्थवाद समाजवादी मूल्यों पर आधारित है।

"दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद

धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद

चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद

कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद।"-नागार्जुन

अकाल और उसके बाद कविता में नागार्जुन ने प्राकृतिक विपदा और गरीब जनता के संघर्ष का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है। घर में चंद दाने आने से अकाल की मार झेल रहे लोगों की आंखें चमक उठना समाज में आर्थिक विषमता का अप्रतिम वर्णन प्रस्तुत करता है। निराला 'तोड़ती पत्थर' कविता में आर्थिक समृद्धि और साधनविहीनता को आमने -सामने रखकर समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता की तस्वीर खींचते हैं-

"कोई न छायादार

पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;

श्याम तन, भर बंधा यौवन,

नत नयन, प्रिय-कर्म-रत मन,

गुरु हथौड़ा हाथ,

करती बार-बार प्रहारः-

सामने तरु-मालिका अट्टालिका, प्राकार।"

प्रगतिवादी कवियों का मानना था कि विषमताओं से भरे समाज में शांति की कविता नहीं लिखी जा सकती है। नागार्जुन कहते हैं-

"कैसे लिखूँ शांति की कविता

अमन-चैन को कैसे कड़ियों में बाँधू

मैं दरिद्र हूँ

पुस्त-पुस्त की यह दरिद्रता

कटहल के छिलके जैसी खुरदूरी जीभ से

मेरा लहू चाटती आई है।"

प्रगतिवादी कविता में श्रम को विशेष महत्व दिया गया है।श्रम और संघर्ष से जुड़े लोगों में इन कवियों की गहरी आस्था है। केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं-

"जो जीवन की धूल चाट कर बड़ा हुआ है,

तूफ़ानों से लड़ा और फिर खड़ा हुआ है,

जिसने सोने को खोदा लोहा मोड़ा है,

जो रवि के रथ का घोड़ा है,

वह जन मारे नहीं मरेगा! नहीं मरेगा!!"

प्रगतिवादी कविताओं में किसानों, मजदूरों और श्रम से जुड़े तमाम लोगों के प्रति विशेष सहानुभूति और अपनत्व के भाव हैं। इस दौर में पहली बार मटमैले, अभावों से जूझते विपन्न किसान मजदूर के यथार्थपरक चित्र देखने को मिलते हैं। 'किसान स्तवन' कविता में केदारनाथ अग्रवाल ऐसे ही किसानों का चित्रण करते हैं-

"तुम जो छाती पर पत्थर रक्खे जीने का दम भरते हो

अन्यायों से जोर जुलुम से मुट्ठी ताने लड़ मरते हो

तुम तो ठगते नहीं ठगे सब दिन जाते हो।"

प्रगतिवादी कवि वर्ग : चेतना पर जोर देता है। 'पूँजीपति और श्रमजीवी' कविता में केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं-

"पूँजीपति अपने बेटे को,

बेहद काला दिल देता है,

गद्दी पर बैठे रहने को,

भारी-भरकम तन देता है,

मरने को वह मर जाता है,

लेकिन जीवन दे जाता है।

श्रमजीवी अपने बेटे को

गोठिल हँसिया दे जाता है।"

सर्वहारा वर्ग में वर्गीय चेतना भरते हुए केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं-

" मार हथौड़ा,

कर-कर चोट!

लाल हुए काले लोहे को

जैसा चाहे वैसा मोड़!"

प्रगतिवादी कवि समाज में हर प्रकार की जड़ता का मुखर विरोध और सशक्त प्रतिकार करता है। 'तेज धार का कर्मठ पानी' कविता में केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं-

"तेज़ धार का कर्मठ पानी,

चट्टानों के ऊपर चढ़ कर,

मार रहा है

घूँसे कस कर

तोड़ रहा है तट चट्टानी।"

इस दौर की कविताओं में आत्मसम्मान और आत्मविश्वास की अनुगूंज है। बिना इसके संघर्ष पथ पर नहीं चला जा सकता है। आजादी के मायने ही यही है कि हम बिना किसी बंधन और बाह्य दबाव के अपने अनुसार अपने जीवन के सफर को तय करें। यह यथास्थितिवाद के विरुद्ध परिवर्तन की चाह के लिए अनिवार्य है। 'हम पंछी उन्मुक्त गगन के कविता' में शिवमंगल सिंह 'सुमन' इसी भाव को निरूपित करते हैं।

"हम पंछी उन्मुक्त गगन के

पिंजरबद्ध न गा पाएँगे,

कनक-तीलियों से टकराकर

पुलकित पंख टूट जाएँगे।"

प्रकृति प्रेम : लोक-प्रकृति का चित्रण प्रगतिवाद की एक प्रमुख विशेषता है। छायावाद की प्रकृति जहां सुन्दर और रमणीय है, वहीं इस दौर की कविताओं में लोक प्रकृति की खुशबू और सौंदर्य है। यहाँ की प्रकृति उपयोगी है। प्रकृति और मनुष्य के बीच कोई दूरी या रहस्य नहीं है। लोक में रची-बसी प्रकृति के रूप- रंग है। केदारनाथ अग्रवाल की

बसंती हवा इस दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण कविता है -

"जहाँ से चली मैं जहाँ को गई मैं,

शहर, गाँव, बस्ती,

नदी, रेत, निर्जन, हरे खेत, पोखर,

झुलाती चली मैं, झुमाती चली मैं,

हवा हूँ, हवा, मैं बसंती हवा हूँ।"

वहीं 'चंद्रगहना से लौटती बेर' कविता में केदारनाथ अग्रवाल लोक-प्रकृति का बेहद मनोहारी दृश्य खींचते हैं-

"और सरसों की न पूछो-

हो गयी सबसे सयानी,

हाथ पीले कर लिए हैं

ब्याह-मंडप में पधारी

फाग गाता मास फागुन

आ गया है आज जैसे।"

प्रगतिवादी कवि, छायावादी कवियों की तरह अपने हर्ष-विषाद में ही प्रकृति में हर्ष विषाद के भाव नहीं तलाशते बल्कि गहरी मानवीय संवेदना के साथ प्रकृति से जुड़ते हैं। केदार नाथ अग्रवाल 'आम नदी बिलकुल उदास थी' कविता में कहते हैं-

" आज नदी बिलकुल उदास थी।

सोई थी अपने पानी में,

उसके दर्पण पर-

बादल का वस्त्र पड़ा था।

मैंने उसको नहीं जगाया,

दबे पांव घर वापस आया।"

'नारी प्रेम : लोक-प्रकृति की ही तरह इस दौर की कविताओं में प्रेम का एक सामाजिक मूल्य और महत्व है। केदारनाथ अग्रवाल और नागार्जुन जैसे प्रगतिवादी कवि का गार्हस्थ्य प्रेम अपने स्थानीय परिवेश में पूरी संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। नागार्जुन 'सिंदूर तिलकित भाल' कविता में कहते हैं-

"घोर निर्जन में परिस्थिति ने दिया है डाल!

याद आता तुम्हारा सिंदूर तिलकित भाल!"

यहां दाम्पत्य प्रेम व्यापक सामाजिक मूल्यों से जाकर जुड़ जाता है। त्रिलोचन कहते हैं-

"मुझे जगत जीवन का प्रेमी

बना रहा है प्यार तुम्हारा।"

प्रगतिवादी प्रेम कर्मशीलता के दौरान एक दूसरे को समझने और महसूस करने से विकसित होता है। त्रिलोचन कहते हैं-

"यूं ही कुछ मुस्काकर तुमने

परिचय की वो गांठ लगा दी!

था पथ पर मैं भूला-भूला

फूल उपेक्षित कोई फूला

जाने कौन लहर थी उस दिन

तुमने अपनी याद जगा दी।"

'राष्ट्र-प्रेम : राष्ट्र-प्रेम के विषय पर इस दौर के कवि एक समान दृष्टि नहीं रखते हैं। दिनकर, माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि उत्तर छायावादी कवियों के लिए के लिए राष्ट्रीय स्वतंत्रता सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इनकी रचनाओं में राष्ट्र प्रेम का उग्र स्वर दिखलाई पड़ता है। दूसरी ओर प्रगतिवादी कवियों का एक वर्ग राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन की तुलना में सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रता के अधिक पक्षधर हैं। गोलमेज सम्मेलन से खाली हाथ लौटे नेताओं पर व्यंग्य करते हुए केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं-

"लंदन गये लौट आये

बोलो आजादी लाये?

नकली मिली है या असली मिली है?"

वहीं दूसरी ओर नागार्जुन अपने प्रवास के समय अपनी जन्मभूमि को याद करते हुए कहते हैं-

" याद आता मुझे अपना वह 'तरउनी' ग्राम

याद आतीं लीचियाँ और आम,

याद आते मुझे मिथिला के रूचिर भू-भाग

याद आते धान।"

देश के चप्पे-चप्पे से प्रेम का भाव चित्रित करते हुए नागार्जुन कहते हैं-

"खेत हमारे भूमि हमारी सारा देश हमारा है

इसलिए तो इसका हमको चप्पा-चप्पा प्यारा है।"

'साम्प्रदायिकता का विरोध : इस दौर में सांप्रदायिक शक्तियां सक्रिय हो उठी थीं। देश एक ओर ब्रिटिश हुकूमत से लड़ रहा था तो दूसरी ओर साम्प्रदायिक तनाव से। नरेन्द्र शर्मा, शिवमंगल सिंह सुमन आदि कवियों ने साम्प्रदायिक सौहार्द और सद्भाव की वकालत की। नरेन्द्र शर्मा कहते हैं-

"अब तो सदियों की नींद खुली, इतिहास ज्ञान-विज्ञान मिले

मुरझाये थे जो प्रेम-फूल, कर नव-जीवन-रसपान खिले

गुल-कमल खिलेंगे साथ-साथ, यह हिंद अभी वीरान नहीं

मैं हिंदू हूँ, तुम मुसलमान; पर क्या दोनों इंसान नहीं?"

मार्क्सवादी विचारधारा प्रत्येक समस्याओं को वर्ग -भेद के हिसाब से देखता है।शिवमंगल सिंह सुमन 'मेरा देश जल रहा, कोई नहीं बुझानेवाला' कविता में कहते हैं कि दंगों में गरीब मरते हैं क्योंकि दंगा गरीबों के विरुद्ध अमीरों की साज़िश है।

"ये छल-छंद शोषकों के हैं

कुत्सित, ओछे, गंदे

तेरा खून चूसने को ही

ये दंगों के फँदे।

तेरा एका, गुमराहों को राह दिखानेवाला।

मेरा देश जल रहा, कोई नहीं बुझानेवाला।"

'भाषा और छंद : प्रगतिवादी कविताएँ जनसरोकार से जुड़ी कविताएं हैं इसलिए यह छायावादी अभिजात्य के बंधन को तोड़कर जन सामान्य की भाषा से अपनी शब्दावलियों को और बिम्बों को लेकर चलती हैं। यहां तत्सम शब्दों की जगह तद्भव और देशज शब्दों का बोलबाला है। यहां बल भाव और विचार की अभिव्यक्ति पर है, रूप-सज्जा पर नहीं। पंत कहते हैं-

"तुम वहन कर सको,जन मन में मेरे विचार

वाणी मेरी चाहिए क्या, तुम्हें अलंकार।"

द्वितीय विश्व युद्ध का वातावरण, मध्यवर्गीय जीवन का द्वन्द्व एवं तनाव, जीवन के व्यापक अनुभवों का अभाव,कला पक्ष की उपेक्षा आदि अनेक ऐसे कारण बने जिससे इस दौर की कविताओं में एकरसता आने लगी।समय के साथ प्रगतिवादी काव्य आंदोलन की त्वरा में ह्रास होने लगा। इस संदर्भ में बच्चन सिंह का यह कथन विचारणीय है-"इस आंदोलन और साहित्य सर्जना के मुख्य त्रुटि यह रही है कि यह गहरे अर्थ में अपनी जमीन से नहीं जुड़ पाई। अपनी परंपरा और भाव-धारा के प्रति अनादर का भाव रखने के कारण भी यह आंदोलन देश की मुख्य धारा से कटकर अलग हो गया। अपने देश की ऐतिहासिकता को नजर अंदाज कर विदेशी ऐतिहासिकता को- समाजवादी यथार्थवाद को -साहित्य पर आरोपित किया जाने लगा"12

यह सही है कि प्रत्येक काव्य आंदोलन की एक समय सीमा होती है। प्रगतिवाद भी इसका अपवाद नहीं है। बावजूद हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रगतिवादी कविताओं का जो मूल्यबोध और जीवन- दर्शन है, वह हिंदी साहित्य की मूल संवेदना का आधार है। प्रगतिवादी मूल्य सामाजिक जड़ताओ से टकराता हुआ, मनुष्य की बेहतरी के लिए संघर्ष करता हुआ,यह आज भी हिन्दी कविता को वैचारिक संबल प्रदान कर रहा है और आगे भी करता रहेगा।

अपनी तमाम सीमाओं के बावजूद प्रगतिवाद का हिंदी कविता के विकास में महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक

योगदान है। प्रगतिवादी कविताएँ जनता के दुःख- दर्द, आशा -आकांक्षा, हर्ष -विषाद,प्रेम और संघर्ष के साथ प्रतिबद्ध कविताएँ हैं।इस दौर की कविताएं सीधी सच्ची और सरल भाषा में समय ,समाज और सच को बिना किसी आवरण के पाठकों के सामने प्रस्तुत करती हैं। प्रगतिवाद का सौंदर्य- बोध अपने लोक से गहरे अर्थों में संपृक्त है।

1.आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ - नामवर सिंह,राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 60

2. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष पुस्तक में वामपक्ष का उदय शीर्षक आलेख-

बिपिन चंद्र, मृदुल मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी क.न.पानिकर और सुचेता महाजन - हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय,पृ281

3. प्रेमचंद और भारतीय समाज पुस्तक में हिंदी के पहले प्रगतिशील लेखक आलेख - नामवर सिंह, संपादक -आशीष त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,पृष्ठ -15

4. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष ,वामपक्ष का उदय शीर्षक आलेख -बिपिन चंद्र, मृदुल मुखर्जी ,आदित्य मुखर्जी क.न.पानिकर और सुचेता महाजन -हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय,पृ281

5.कुछ विचार- प्रेमचंद ,लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 6-7

6.वही पृष्ठ 20

7.वही, पृष्ठ-25

8.प्रगतिवाद- शिवकुमार मिश्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-20

9.युगांत- सुमित्रनंदन पंत, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ- 5

10.रचना का पक्ष -नंद किशोर नवल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-151

11.मार्क्सवाद के मूलभूत सिद्धांत - अशोक कुमार पांडे, राजपाल प्रकाशन, दिल्ली ,पृष्ठ -90

12.आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास- बच्चन सिंह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ -247

ROLE OF SOCIAL MEDIA IN ELECTORAL POLITICS OF INDIA

Dr. Prabha Kumar
Assistant Professor
Dept. of Political Science
A.N. College, Patna

Abstract: Social media has emerged as a transformative force in electoral politics, reshaping the dynamics of political campaigns, voter engagement, and public discourse. In the context of India, with its vast and diverse electorate, social media platforms like Facebook, Twitter, WhatsApp, and Instagram have significantly influenced electoral processes over the past decade. This abstract explores the multifaceted role of social media in India's electoral politics, highlighting both its benefits and challenges. Social Media offers unparalleled reach and accessibility, enabling political parties to communicate with million of voters. Through the social networking sites, voters are also provided opportunities to share their opinions and be heard. Social Media provides platforms for communication, campaign updates and feedback. However the rise of social media also brings forth several challenges. The regulatory environment around social media in election remains a critical area of focus.

Keywords : Election, Social Media, Facebook, YouTube, Twitter, Internet, Artificial Intelligence

Election is the bedrock of a genuine representative government. Like every representative democracy, India being the largest democracy in the world provides for a well structured Election System which has been designed to meet the objective of holding regular, free and fair elections in the country. As India is gearing up for the world's biggest electoral exercise, the Lok Sabha elections 2024 are being held in seven phases beginning from April 19 and concluding on June 1. Votes will be counted

on 4th June. In recent years, social media has emerged as a powerful tool influencing electoral politics in India. Political parties and candidates have increasingly utilized platforms like Facebook, X(formerly known as Twitter), WhatsApp, YouTube and Instagram to connect with voters, disseminate messages, and shape public opinion. This article explores the multifaceted impact of social media on electoral dynamics in India, drawing insights from academic research, government reports, and media analysis.

Social media refers to online platforms and websites that enable users to create, share, and exchange content, ideas, and information in virtual communities and networks. These platforms are designed to facilitate social interaction, networking, and collaboration through user-generated content, such as text posts, images, videos, and links. Social media platforms often include features like commenting, liking, sharing, and following to encourage engagement and interaction among users. Social media platforms encompass a diverse range of websites and applications that serve different purposes and cater to various user demographics. Here are some notable types of social media platforms- Facebook, Twitter, Instagram, You Tube, WhatsApp, Linkedin, Snapchat, Tumblr etc.

Role of Social Media in Electoral Politics of India

Social media has revolutionized electoral politics in India, offering new opportunities for engagement and communication while also posing challenges related to misinformation and fairness. The 2014 elections in India marked a significant shift in campaign strategies with the widespread use of social media, particularly by Narendra Modi and the Bharatiya Janata Party (BJP). Modi's social media presence, including engaging with citizens directly on platforms like X (formerly Twitter)and Facebook, contributed to the BJP's landslide victory. During the 2019 elections, WhatsApp emerged as a powerful tool for political communication in India. The platform was used extensively to spread campaign messages, news, and propaganda, influencing voter perceptions and opinions. In 2024 YouTube has become a more popular tool for political parties to engage with the voters. All the political parties have well realised the ample reach of social media platforms. Political rallies were once the only way to reach a larger set of audience. But amid the arrival of social media platforms, political parties and candidates can connect with

millions at once. Today, we cannot imagine the world without Social media especially in the field of politics. It plays a crucial role in the active political participation of the people. Many political parties have created their own websites, blogs, Facebook and X accounts. They are regularly watching, reading and updating their media contents. It has been found that Indians in urban as well as rural areas are widely engaged on social media platforms especially Facebook, Instagram and YouTube. During election times Social media plays significant role in influencing public opinion and voting behaviour through following ways:

Campaigning and Outreach : Social media has revolutionized election campaigning in India by enabling direct communication between political actors and voters. Research by Singh and Swarna (2018) highlights how parties leverage targeted advertising on platforms like Facebook, Instagram and YouTube to reach specific demographics with tailored messages. During the 2014 and 2019 general elections, Narendra Modi's adept use of social media contributed significantly to the Bharatiya Janata Party's electoral success (Chadha, 2019). Social media offers numerous ways such as content posting, live interactions, and direct messaging to engage with the audience. For example, the Bhartiya Janta Party (BJP) has been using WhatsApp to send a tailored ' Letter From The Prime Minister' to all active users. Social media helps in targeted campaigning as there is ample data stating the level of engagement across various regions, age groups, types of content, and other considerable parameters. Currently, users engage in short video content such as reels and shorts. This is widely used by political parties and active supportive groups to attract the masses.

Real-time Engagement and Feedback : Platforms such as Twitter facilitate real-time engagement between politicians and citizens. According to a study by Reddy et al. (2020), political leaders actively use Twitter to respond to public concerns and shape political discourse. This direct interaction enhances transparency and accountability in the electoral process. Direct engagement with the audience helps in boosting the image of the candidate and the political party. Examples include BJP's launched website 'My First Vote for Modi' that lets users pledge their vote for the leader. There is also an option where users can offer reasons for casting their vote for the current Prime Minister. Meanwhile Indian National Congress (INC) has also come up with a 'Rahul Gandhi WhatsApp Group' where users get replies to their queries.

Information Dissemination and Influence : Social media serves as a battleground for competing narratives during elections. Gupta and Kapoor (2017) analyze how parties strategically use hashtags and viral content to influence voter opinions. Social media

applications are excellent tools for information dissemination. Political leaders often share insights of all the offline campaigns across social media. Various types of political news are shared across social media platforms, affecting the narratives of active users. However, the proliferation of misinformation and fake news poses significant challenges to electoral integrity.(Sharma,2021)

Mobilization and Grassroots Activism: Digital platforms facilitate grassroots mobilization and activism. The mobilization of youth voters through online campaigns and viral content was instrumental in several state elections (Mishra & Bhatia, 2019). Social media also empowers citizen journalists to report on local political developments and hold leaders accountable (Jha, 2020)

Trust and credibility building : Political parties and leaders associate with social media influencers and Youtubers having significant audience reach to gain trust and credibility. Ranveer Allahabadia, one of the famous podcasters with around 7 million YouTube subscribers, recently engaged in a podcast featuring BJP ministers S. Jaishankar, Smriti Irani, and Piyush Goyal. On the other hand, Congress leader Rahul Gandhi was seen with Kamiya Jani on her YouTube channel in a video titled 'Sunday Brunch' With Rahul Gandhi.

Citizen Journalism and Monitoring : Citizens use social media to report on election-related developments and monitor polling activities. Platforms like Twitter serve as sources of real-time information and facilitate citizen-led election monitoring.

Influencer Endorsements : Social media influencers play a significant role in endorsing political candidates and parties. Parties collaborate with influencers to reach wider audiences and leverage their credibility to sway voter opinions.

Use of Social Media by Election Commission to motivate electors to vote : The Election Commission has launched a variety of campaigns across social media platforms to nudge young and urban voters to cast their ballot in Lok Sabha elections. Through "Turning 18"campaign, the Election

Commission is urging first time voters to come to the polling station to vote. Similarly 'You are the One' campaign by the commission seeks to recognise importance of different stakeholders in the election process.

Election Results and Analysis : Social media platforms serve as hubs for discussing election results and analyzing their implications. Post-election, parties continue to engage with voters through platforms, seeking feedback and support.

Connection with youth : The use of Instagram Reels by political parties can be a strategic and engaging way to connect with a younger audience and convey campaign messages. Instagram Reels, which are short, entertaining videos similar to TikTok, provide a platform for creative storytelling and visual communication. Parties can collaborate with celebrities or social media influencers to create Reels endorsing candidates or advocating for specific campaign themes.

Use of Artificial Intelligence for electoral purposes : With the rise of Artificial Intelligence (AI), the pervasive influence of social media platforms, and the expansive reach of the internet, political actors are utilising digital tools to engage voters, shape narratives, and even manipulate perceptions.(Nair, 2024,The Hindustan Times) One notable aspect of the 2024 elections is the unprecedented use of social media analytics and targeted advertising. AI-powered algorithms analyse vast amounts of user data to micro-target specific demographics with tailored political messaging. This personalised approach allows parties to craft messages that resonate with different voter segments, thereby maximising the impact of their campaigns. Moreover, the proliferation of political content on social media has led to the emergence of online echo chambers, where individuals are exposed primarily to viewpoints that align with them. In the context of the elections, social media echo chambers can identify voter preferences, predict electoral outcomes, and optimise campaign strategies. One of the most significant applications of AI in the 2024 elections is the use of predictive analytics to target swing voters. By analysing demographic, socio-economic, and behavioural data, AI algorithms can identify individuals who are undecided or susceptible to persuasion. Political parties can then tailor their messaging and outreach efforts to appeal to these pivotal voter segments, potentially swaying the outcome of the election.

Critical Appraisal of the role of Social Media in Electoral Politics of India

Social media platforms have undoubtedly emerged as powerful tools for political communication, enabling candidates and parties to directly engage with voters, disseminate their messages, and mobilise support. Platforms like Facebook, Twitter, Instagram, and WhatsApp have become indispensable components of political campaigns, allowing politicians to reach millions of voters. However, confrontations between political parties on social media are not uncommon, especially during

election periods or when contentious issues arise. These confrontations often play out publicly and can involve heated exchanges, criticism, or rebuttals. Here are a few examples of such confrontations in the Indian context: 1)BJP vs. Congress on Twitter: During election campaigns, the official Twitter handles of the Bharatiya Janata Party (BJP) and the Indian National Congress (INC) often engage in confrontational exchanges, criticizing each other's policies, leaders, or governance track records like Tweets from the BJP accusing the Congress of corruption or mismanagement, countered by tweets from the Congress highlighting alleged failures of BJP-led initiatives. 2)AAP vs. BJP/Delhi Government on Facebook: The Aam Aadmi Party (AAP) in Delhi has engaged in social media confrontations with both the BJP and the central government over various issues affecting the national capital like Facebook posts by AAP leaders criticizing BJP-led agencies for interfering with Delhi's governance, countered by posts from BJP leaders defending their actions.3)Online Campaign Wars During Elections: Political parties launch aggressive online campaigns targeting each other through videos, memes and reels mocking opponent leaders or policies, triggering a wave of online debates and reactions.4) Twitter Battles Over Policy Decisions: Political parties use Twitter to confront each other over significant policy decisions or legislative actions. 5)YouTube Video Responses: Parties respond to each other's speeches or press conferences through YouTube videos, criticizing or fact-checking statements made by rival leaders. These examples illustrate how social media platforms have become battlegrounds for political confrontations, where parties use digital tools to challenge opponents and sway public opinion. While such confrontations can energize party bases and generate online engagement, they also reflect the polarized nature of political discourse in India's digital landscape.

The transition from Facebook to WhatsApp and now YouTube indicates how shifts n people's internet habits often shape the role of social media in electoral process. Social media has profoundly impacted electoral politics in India, offering both advantages and challenges. The advantages can be noted as: i)Wide Reach and Accessibility: Social media platforms like Facebook, Twitter, and WhatsApp allow political parties to reach a vast audience, including remote and rural areas, facilitating broader participation in democratic processes. ii)Direct Voter Engagement: Candidates can directly engage with voters, responding to queries, sharing updates, and addressing concerns in real-time, fostering transparency and accountability. iii)Cost-Effective Campaigning: Social media provides a cost-effective alternative to traditional advertising, allowing parties with limited resources to run targeted campaigns and reach specific demographics efficiently. iv)Youth Mobilization: Social media resonates strongly with the youth demographic, enabling parties to mobilize and engage young voters who are active on platforms like Instagram, Snapchat, and TikTok. v)Instant Information Dissemination:

Social media enables rapid dissemination of information, helping voters stay informed about candidates, policies, and election updates without relying solely on traditional media.vi) Community Building and Grassroots Activism: Social media fosters community building and grassroots activism, empowering citizens to organize, collaborate, and advocate for social and political causes. Some of the challenges of the use of Social Media in Electoral Politics can be described as :

(I) Misinformation and Fake News : Social media can be a breeding ground for misinformation, fake news and deepfake videos with the use of AI algorithms, which can distort public opinion and undermine the integrity of electoral processes.

(ii) Polarization and Divisiveness : Social media often amplifies polarization, creating echo chambers where users are exposed to like-minded views and isolated from opposing perspectives, leading to increased political polarization.

(iii) Privacy and Data Security Concerns : Social media platforms collect vast amounts of user data, raising concerns about privacy breaches, targeted advertising, and manipulation of voter behaviour through micro-targeting.

(iv) Digital Divide : All segments of society not having equal access to social media, aggravate existing socio-economic disparities and potentially takes political discourse towards urban, tech-savvy populations.

(v) Trolling and Online Abuse : Political discourse on social media often descends into trolling, harassment, and online abuse, creating a hostile environment that discourages constructive dialogue and engagement.

(vi) Regulatory Challenges : Regulating social media during elections poses challenges in ensuring fairness, transparency, and accountability, particularly in addressing issues like paid political advertising and foreign interference.

To conclude, Social Media platforms are undoubtedly challenging the very conventional norms of election campaigning. However some poll analysts are of the view that election campaigns in Social Media may not influence the opinion of traditional voters or party supporters who have their loyalties fixed. While social media offers numerous benefits for electoral politics by enhancing communication, outreach, and participation, it also presents significant challenges related to misinformation, privacy, polarization, and regulatory oversight. Efforts to promote digital literacy, transparency, proactive steps by social media companies to curb the spread of misinformation on their platforms and responsible use of social media by political parties and people are essential to harness its potential for fostering a healthy and inclusive democratic process in India. In response to the proliferation of fake news and misinformation online, the Election Commission of India has introduced the 'Verify Before You Amplify' initiative. This campaign seeks to bust fake news and urge people to exercise caution and diligence before sharing information on social media

platforms. The Election Commission has to take ample efforts to ensure that social media remains a positive force for democratic participation. By implementing comprehensive regulatory measures and promoting responsible social media usage, India can utilise the potential of digital platforms to enhance electoral transparency, civic engagement, and democratic governance. The goal is to strike a balance between enabling free expression and safeguarding electoral integrity in the digital age.

References:

- Bhatt, Shephali, The Economic Times, May 11, 2024.
- Chadha, K. (2019). Modi's Digital Campaigns: Psephology of the 2014 and 2019 General Elections in India. Routledge.
- Election Commission of India (ECI). (2021). Guidelines for Social Media.
- Gupta, R., & Kapoor, S. (2017). Political Discourse on Social Media: Strategies and Tactics in the Indian Context. Cambridge University Press.
- Jha, P. (2020). Media and Grassroots Journalism in India. Economic and Political Weekly, 55(15), 19-21.
- Mishra, A., & Bhatia, K. (2019). Youth Mobilization and Social Media: Insights from State Elections in India. Journal of Political Communication, 41(3), 295-312.
- Nair, Aprajitha.,Hindustan Times, May 10, 2024.
- Reddy, A., et al. (2020). Twitter and Political Engagement: A Study of Indian Politicians. Information, Communication & Society, 23(10), 1456-1472.
- Sharma, S. (2021). Fake News and Misinformation in Indian Elections. Media Asia, 48(2), 91-104.
- Singh, R., & Swarna, V. (2018).Social Media and Electoral Campaigns in India: A Case Study of Facebook. Journal of Asian Politics & Policy, 20(4), 521-537.

स्त्री-विमर्श और इक्कीसवीं सदी का साहित्येतिहास-लेखन

डॉ. भारती कुमारी
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

'स्त्री-विमर्श' एक अवधारणात्मक या पारिभाषिक शब्दावली है। इसके अलावा एक आंदोलन भी है। स्त्री की मुक्ति के लिए और स्त्री अस्मिता को सही परिप्रेक्ष्य में सोचने-विचारने का एक आंदोलन है। लेकिन इसकी पृष्ठभूमि में 'पितृसत्ता' जैसी परंपरागत परिस्थितियों की भूमिका थी। भारत में स्त्री-विमर्श यूरोप और अमेरिका से आई है। वहाँ द्वितीय विश्वयुद्ध के समय समाज में एक परिवर्तन हुआ।

बीसवीं सदी के मुक्ति-संघर्षों में स्त्री का मुक्ति-संघर्ष शायद सबसे अधिक मूलगामी और सार्वभौमिक रहा है। सबसे अधिक अहिंसक, रक्तहीन और सत्याग्रही भी। इस संघर्ष की व्यापकता का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि 'यह जितना अधिक बाहरी स्तर पर संघटित और घटित हुआ है, उतना ही आंतरिक स्तर पर भी। वह एक साथ आत्मसंघर्ष भी रहा है। आत्मबोध, आत्मविश्लेषण और आत्माभिव्यक्ति का संघर्ष भी। दर्शन, मनोविज्ञान, समाजविज्ञान, इतिहास जैसी अनेक विधाएँ इस संघर्ष पर एकाग्र हुई हैं और स्त्री के मुक्ति-संघर्ष का एक समृद्ध शास्त्र विकसित हुआ है, जिसे समग्र रूप से स्त्री-विमर्श कह दिया जाता है।"

'स्त्री-विमर्श' एक अवधारणात्मक या पारिभाषिक शब्दावली है। इसके अलावा एक आंदोलन भी है। स्त्री की मुक्ति के लिए और स्त्री अस्मिता को सही परिप्रेक्ष्य में सोचने-विचारने का एक आंदोलन है। लेकिन इसकी पृष्ठभूमि में 'पितृसत्ता' जैसी परंपरागत परिस्थितियों की भूमिका थी। भारत में स्त्री-विमर्श यूरोप और अमेरिका से आई है। वहाँ द्वितीय विश्वयुद्ध के समय समाज में एक परिवर्तन हुआ। अधिकांश पुरुष युद्ध के लिए चले गए। इस कारण महिलाएँ घर-बाहर दोनों क्षेत्रों का काम सम्भाली। पुरुष युद्ध से लौटे तो, स्त्रियों को वापस घर जाने को कहा। लेकिन, उस समय तक उनमें जागरूकता आ चुकी थी।

1975 ई. के आस-पास स्त्री-अधिकार का एक माँग पत्र UNO (United Nations Organization) में स्वीकृत हुआ। अनेक देशों के साथ-साथ भारत भी उनमें शामिल था। इस तरह से 1975 ई. स्त्री दृष्टि का दूसरा दौर शुरू हुआ। यह केवल साहित्य में ही नहीं बल्कि इतिहास, कानून और राजनीति में भी स्त्री अधिकार की माँग को सामने रखता है। इस तरह सामाजिक सत्ता में परिवर्तन के साथ-साथ स्त्री के अस्तित्व बोध में भी परिवर्तन होता जाता है। इससे स्वभाविक है कि स्त्री की साहित्यिक दृष्टि भी एक नया रूप लेकर सामने आया।

नारीवादी विचारक सीमोन द बोउवार ने अपनी किताब 'The Second seÛ' में लिखती हैं, "स्त्री पैदा नहीं होती, बल्कि उसे बना दिया जाता है।" यह स्थापना पितृसत्तात्मक समाज पर प्रश्नचिह्न लगाती है। इस तरह आधुनिक काल में स्त्री-चेतना का विकास हुआ। लेकिन, भारत में स्त्रियों को पहले से ही थोड़ा खुलापन मिला हुआ था। स्वाधीनता संग्राम में स्त्रियाँ पुरुषों के कंधे-से कंधा मिलाकर संघर्ष में हिस्सा ली थी। इस समय तक स्त्री-मुक्ति

का स्वर भी खुल चुका था। पश्चिम में स्त्रियों को हर चीज के लिए संघर्ष करना पड़ा। इस कारण यूरोप की स्त्रीवादी दृष्टि थोड़ी उग्र है जबकि भारत की थोड़ी सौम्य। हमें पश्चिमी नारीवाद की नकल नहीं करनी है, बल्कि उसके बरक्स अपनी स्थिति को पहचानना है। सिमोन द बोउवार और वर्जीनिया वुल्फ आदि के विचारों से कुछ सीखना हैं। साथ-ही भारतीय लेखिका सावित्रीबाई फुले, शिवरानी देवी, महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, आमृता प्रीतम, आशापूर्णा देवी और सुमन राजे आदि से भी। स्त्री-विमर्श के इन मूल बिन्दुओं को समझे बिना सुमन राजे का ही नहीं किसी भी लेखक या लेखिका (जो स्त्री-विमर्श से जुड़ा है/जुड़ी है) के सरोकार को पूरी तरह समझा नहीं जा सकता।

इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में, सुमन राजे की किताब 'हिंदी साहित्य का आधा इतिहास' (प्रथम संस्करण 2003) प्रकाशित हुई। इसमें ऋग्वेद से लेकर 21वीं सदी के आरंभिक दशक के महिला-लेखन की खोज की गई है। लेखिका इसे 'आधा इतिहास' का नाम देती है। लेकिन, इसका आधा होना आकार नहीं 'एक दृष्टि' है। वह लोकगीतों के माध्यम से प्रारंभिक महिला-लेखन को साहित्येतिहास में जगह दी है। साथ-ही एक जन-इतिहास की खोज करती हैं। इस कारण, महिला-लेखन का 'एक समूचा साँस लेता हुआ सौंदर्यशास्त्र' हमें उपलब्ध हो सका है।

सुमन राजे अपने साहित्येतिहास लेखन में स्त्री-साहित्य के तीन स्रोतों की चर्चा की हैं/लोकाश्रय, धर्माश्रय और राज्याश्रय। ये स्रोत प्राचीन या मध्यकालीन लेखन की खोजबीन के लिए बहुत जरूरी है। लेकिन, अभी के समय के लिए जरूरी नहीं है। इन आश्रयों की अपनी सीमाएँ भी हैं। सुमन राजे लिखती हैं "साहित्य-संरक्षण के जो तीन आश्रय माने गए हैं, उनमें थेरियाँ धर्माश्रय में आ गयीं, राजमहिषियाँ, मन्त्रिपुत्रियाँ राज्याश्रय में। सामान्य नारियों के लिए केवल लोकाश्रय ही शेष था जिस तक जाना जरूरी नहीं समझा गया।"

सुमन राजे सबसे पहले 'राजशेखर' द्वारा साहित्येतिहास में महिला-लेखन की बात की है। वे लिखती हैं। "स्मृत इतिहास है महिला-लेखन।" 'स्मृत इतिहास' का मतलब है 'स्मृति या मौखिक-वाचिक परंपरा में जीवित रह गए स्त्री के इतिहास से।' मौखिक-वाचिक परंपरा में 'रामायण' और 'महाभारत' जीवित रहे। गोरखनाथ, आल्हा और कबीर की 'रचनाएँ' जीवित रहीं। लेकिन, उस अनुपात में स्त्री-साहित्य संरक्षित नहीं हो सका। सुमन राजे इस बात पर ध्यान दिलाती हुई लिखती हैं। "महिला लेखन को अपना संकलन-कर्ता कभी प्राप्त नहीं हुआ। उनका कोई 'व्यास' नहीं था। जो कुछ सुरक्षित रह सका वह केवल 'धर्माश्रय' में।" और सामान्य नारियों का साहित्य केवल लोकाश्रय (वाचिक परंपरा, पीढ़ी-दर-पीढ़ी कहानी कहने-सुनने की परंपरा) में थोड़ा बहुत बच पाया। बाद में, रामनरेश त्रिपाठी ने 'कविता कौमुदी' और 'ग्रामगीत' में इन लोक-गीतों का संकलन किए हैं।

सुमन राजे 'सामान्य नारियों' की बात करती हैं। वे शिक्षितों की बात नहीं करती हैं। जबकि आचार्य रामचंद्र शुक्ल 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में 'इतिहास' की अवधारणा पर बात करते हुए। "शिक्षित जनता" की बात करते

सुमन राजे अपने साहित्येतिहास लेखन में स्त्री-साहित्य के तीन स्रोतों की चर्चा की हैं/लोकाश्रय, धर्माश्रय और राज्याश्रय। ये स्रोत प्राचीन या मध्यकालीन लेखन की खोजबीन के लिए बहुत जरूरी है। लेकिन, अभी के समय के लिए जरूरी नहीं है। इन आश्रयों की अपनी सीमाएँ भी हैं।

हैं। साथ-ही वे स्त्री या स्त्री-साहित्य को वरीयता भी नहीं देते हैं। 'सामान्य स्त्रियों' की तो दूर की बात है। आचार्य शुक्ल के 'इतिहास' की अवधारणा और उसकी सीमाएँ ही, सुमन राजे को साहित्येतिहास-लेखन के लिए उत्तेजित करती हैं। आचार्य शुक्ल का 'काल-विभाजन', 'नामकरण', 'कवियों की अलग-अलग श्रेणी बनाकर-फुटकल खाते' खोलनाकृये सभी तथ्य सुमन राजे को चुनौती देती हैं। अपनी साहित्येतिहास विषयक पहली पुस्तक 'साहित्येतिहास : संरचना और स्वरूप' (1975) से लेकर मरणोपरांत प्रकाशित 'इतिहास में स्त्री' (2012) एक 'मील का पत्थर' की तरह है ।

सुमन राजे की स्थापनाएँ क्रांतिकारी हैं। वे लिखती हैं कि "इतिहास-लेखन अपनी प्रकृति में सामंती होता है।" इससे ऐसा लगता है कि हिंदी साहित्येतिहास-लेखन और उसकी आलोचना की परंपरा में अब तक लगभग अदृश्य एक दरार की खोज कर ली गई है। आचार्य शुक्ल द्वारा लिखे गए इतिहास के बाद जितने भी इतिहास लिखे गए-वो या तो उनके समर्थन में, या विरोध में। लेकिन, कोई भी इतिहास आचार्य शुक्ल के इतिहास से मुक्त नहीं रहा। बच्चन सिंह 'हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास' की भूमिका में लिखते हैं-"जिन लोगों को आचार्य शुक्ल के 'हिंदी साहित्य का इतिहास' के आगे कुछ नहीं सुझाई पड़ता उन्हें अपनी आँखों का इलाज कराना चाहिए।"

सुमन राजे का 'हिंदी साहित्य का आधा इतिहास' प्रथम संस्करण 2003 में प्रकाशित हुआ। ठीक अगले साल ही 2004 में दूसरा संस्करण भी निकला। अभी तक इसके कई संस्करण निकल चुके हैं। लेकिन, हिंदी आलोचना सुमन राजे की 'क्रांतिकारी स्थापना' पर चुप्पी साधे हुए है। इसके दो अर्थ हो सकते हैं-एक तो सुमन राजे की सारी स्थापना स्वीकार कर ली गई है। जिसके विरोध में कोई तर्क नहीं दिया जा सकता। दूसरा, मौन अस्वीकृति। जो उनसे खफा हैं। वे मौन रहकर ही सुमन राजे की क्रांतिकारी स्थापना को खारिज करना चाहते हैं। इससे यह अर्थ निकाले जा सकते हैं-आचार्य शुक्ल और उनकी परंपरा को सुमन राजे ने कटघरे में खड़ा किया हैं। या तो सुमन राजे की स्थापना पूरी तरह स्वीकार कर ली गई है, जिसके विरोध में कोई तर्क नहीं दिया जा सकता है। या तो यह कि यह मौन अस्वीकृति है। वे मौन रहकर ही सुमन राजे की स्थापनाओं को खारिज करना चाहते हैं। साथ-ही आज के आलोचक ने मौन रहकर उनकी स्थापना का स्वागत नहीं किया है।

'इतिहास' संबंधित स्थापनाएँ सुमन राजे आरंभ से करती रही हैं। यदि 'हिंदी साहित्य का आधा इतिहास' में उनकी वैचारिकी है, तो 'इतिहास में स्त्री' में उन सबका विस्तारीकरण है। वे 'इतिहास' की अवधारणा से 'लोकेतिहास' की अवधारणा का समंजस्य दिखलाती हैं। इस विषय से संबंधित एक निबंध (लोकेतिहास बरक्स इतिहास) में वे लिखती हैं-"इतिहास और लोकेतिहास में परस्पर अन्तरक्रिया एक दोहरी द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया है जो निरंतर चलती रहती है। कभी ये इतिहास से लोकेतिहास की तरफ आती है कभी लोकेतिहास से इतिहास की तरफ।" पहली के लिए वे बुन्देलखंड के ऐतिहासिक चरित्र 'हरदौल' की और दूसरे के लिए 'रामायण' और

'सामान्य स्त्रियों' की तो दूर की बात है। आचार्य शुक्ल के 'इतिहास' की अवधारणा और उसकी सीमाएँ ही, सुमन राजे को साहित्येतिहास-लेखन के लिए उत्तेजित करती हैं। आचार्य शुक्ल का 'काल-विभाजन', 'नामकरण', 'कवियों की अलग-अलग श्रेणी बनाकर-फुटकल खाते' खोलनाकृये सभी तथ्य सुमन राजे को चुनौती देती हैं।

'महाभारत' के उदाहरणों की प्रासंगिकता बतलाती हैं। इतिहास उनके लिए अपनी संकीर्ण विचारधाराओं को मूर्त रूप देने का साधन-मात्र नहीं है।

सुमन राजे इतिहास के उन अध्यायों को प्रकाश में लाती हैं-'जो अभी तक किसी कोने में लुप्त हो गए थे।' जो लोग समझते हैं कि सुमन राजे का स्त्री-लेखन एक संकीर्ण रवैया हैं, उन्हें ये देखना चाहिए कि यदि उनमें संकीर्णता होती तो वे शोध की गहराई में डूबकर उनका विश्लेषण नहीं करतीं। दूसरे यदि वे संकीर्ण मताग्रही होतीं, तो इतनी मौलिक स्थापनाएँ नहीं देती। साथ-ही आलोचना के क्षेत्र में खुली चुनौती देने का साहस कभी नहीं करतीं। तीसरे, उनकी लगभग चार दशक की चिंता केवल संकीर्ण विचारधाराओं पर निर्भर नहीं हो सकती।

आज भारतीय या हिंदी साहित्य में भी रचना और आलोचना दोनों के क्षेत्र में स्त्री-विमर्श की लेखिकाओं की संख्या बढ़ती जा रही है। सभी एक-से एक वैचारिक उपन्यास, कविता, आत्मकथा लिखती चली जा रही हैं। हमारे साहित्य में एक ओर कृष्णा सोबती, मैत्रेयी पुष्पा, मृदुला गर्ग, नासिरा शर्मा, उषा प्रियंवदा, अलका सरावगी, मन्नू भंडारी, सविता सिंह की रचनात्मक परंपरा है तो दूसरी तरफ निर्मला जैन, कात्यायनी, अनामिका, अर्चना वर्मा जैसी सक्रिय आलोचक भी हैं। फिर इन सबके बीच सुमन राजे का महत्त्व क्या है? उनकी क्या प्रासंगिकता है? यहीं पर हमें सुमन राजे के साहित्येतिहास-लेखन का ऋणी होना पड़ता है। उन्होंने इस अर्थ में एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। साहित्येतिहास-लेखन में गहन अध्ययन, शोध, आलोचना-दृष्टि और चिंतन की आवश्यकता होती है। यह सब सुमन राजे में हैं। सुमन राजे ने स्त्रियों का इतिहास लिखा है। स्त्री-लेखन का इतिहास लिखा है।

मौलिक काल-विभाजन और नामकरण किया है। तो दूसरी ओर भाषा के मामले में भी उदारवादी दृष्टिकोण का परिचय दिया है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिंदी से होते हुए अन्य भारतीय भाषाओं तथा लोकभाषाओं, लोककथाओं तक उसका विस्तार किया है। यह अपने आप में एक साहस का काम है।

CONSEQUENCES of Chemical Pesticides on HUMAN HEALTH AND ENVIRONMENT

Dr. Nisha Kumari
Assistant Professor
Dept. of Chemistry
A.N. College, Patna

Pesticides are utilized for various purposes, such as boosting crop yields, controlling vector-borne diseases, and eliminating harmful pests. However, their adverse effects are undeniable.

Pests are animals, plants, or microorganisms that threaten our food, health, or comfort. According to the Environmental Protection Agency, a pesticide is any substance designed to prevent, destroy, repel, or control any pest.

Pesticides play a significant role in modern agriculture by helping to meet the demands of a growing population. Pesticides are utilized everywhere from our bedrooms to agricultural fields, with agriculture consuming a significant portion of the total pesticides produced. Their use extends beyond agriculture to include controlling domestic pests, disease-carrying insect vectors, and home gardening. However, their toxic nature poses serious risks to human health and the environment. Agricultural workers are particularly vulnerable to these risks, facing both direct and indirect exposure, which can lead to social conflicts when pesticides are used extensively and without proper safety measures. Neighboring communities are also adversely affected. The general public can come into contact with pesticides through skin exposure due to leaks and drifts during mixing, leading to severe health issues such as diabetes, reproductive disorders, neurological dysfunction, cancer, and respiratory problems.

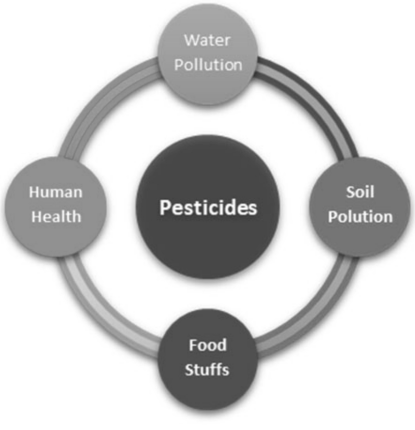

HUMAN HEALTH CONSEQUENCES

Poisoning: Immediate symptoms from high exposure levels can include headaches, dizziness, nausea, and vomiting. Severe poisoning can lead to respiratory issues, convulsions, and even death. Direct contact can cause rashes, burns, and eye damage.

Cancer: Prolonged exposure to certain pesticides, such as organophosphates and carbamates, has been linked to an increased risk of cancers, including leukemia, non-Hodgkin lymphoma, and prostate cancer.

Endocrine Disruption: Some pesticides can interfere with hormonal systems, leading to reproductive issues, birth defects, and developmental problems in children.

Neurological Effects: Long-term exposure has been associated with cognitive decline, memory loss, and conditions like Parkinson's disease, making this a concern for our aging population.

Respiratory Problems: Inhalation of pesticide sprays and dust can lead to chronic respiratory conditions such as asthma and chronic obstructive pulmonary disease (COPD).

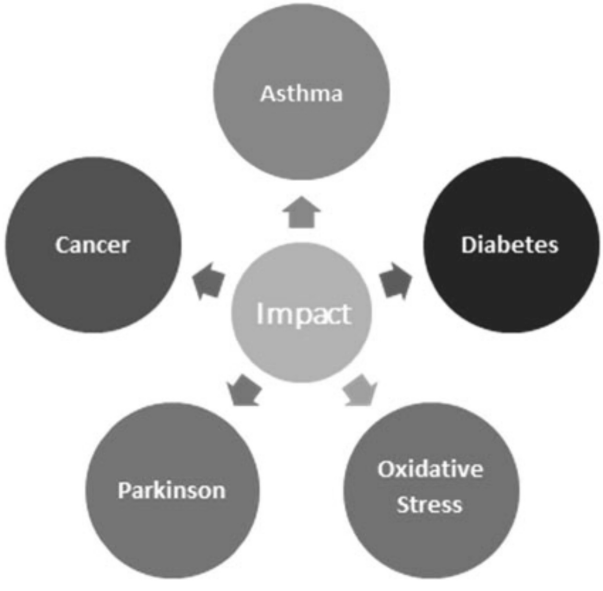

ENVIRONMENTAL CONSEQUENCES

Pesticides often affect non-target organisms, including beneficial insects (like bees and butterflies), birds, and aquatic life. This can lead to declines in biodiversity and disruption of ecosystems.

Water Contamination:

Pesticides can leach into water bodies through agricultural runoff, contaminating

rivers, lakes, and groundwater. It can accumulate in the tissues of aquatic organisms, moving up the food chain and potentially harming predators, including humans. This affects aquatic life and can make water unsafe for human consumption.

Soil Degradation:

Long-term pesticide use can alter soil structure, reduce organic matter, and decrease soil fertility. The death of beneficial soil organisms can lead to soil erosion and loss of arable land. Pesticides can harm beneficial soil microbes, affecting soil health and fertility.

Air Pollution:

Some pesticides can volatilize into the atmosphere and travel long distances, affecting air quality and depositing on remote ecosystems.

Conclusion:

Pesticides are utilized for various purposes, such as boosting crop yields, controlling vector-borne diseases, and eliminating harmful pests. However, their adverse effects are undeniable. They significantly harm the environment and human health, degrading water and soil quality, which negatively impacts animals, birds, plants, and humans. Pesticides also disrupt biodiversity, and both direct and indirect exposure to them can pose serious health risks, including cancer, diabetes, reproductive disorders, respiratory issues, and neurological problems. Currently, it is crucial to regulate pesticide use, explore alternatives, educate people about safe application practices, and encourage farmers to adopt organic farming methods to reduce pesticide usage.

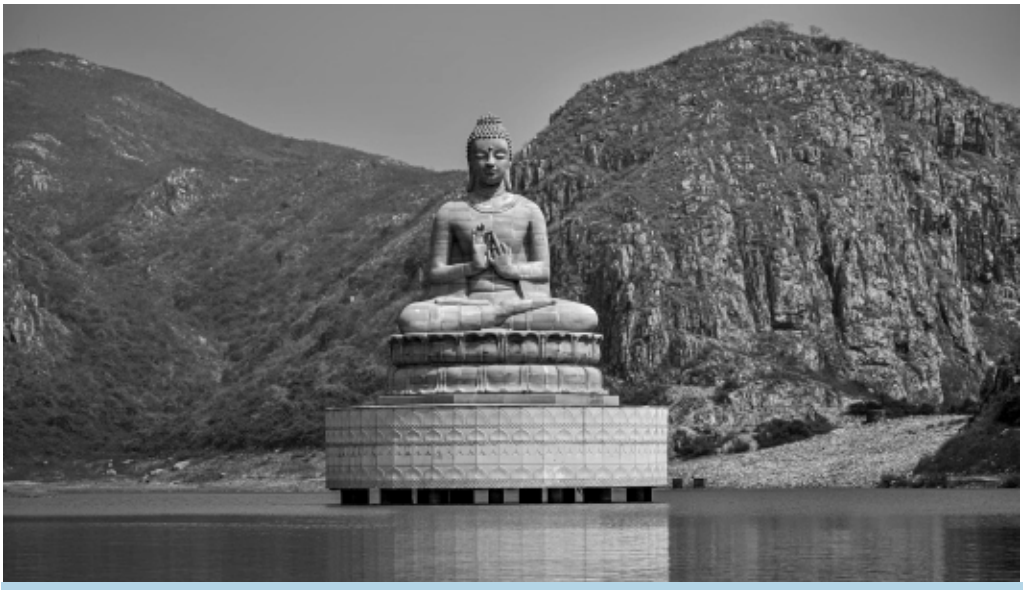

शांति और प्रकाश का पर्व

बुद्ध पूर्णिमा

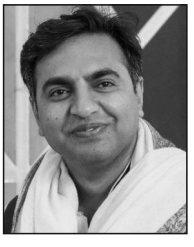

डॉ. कुमार वरूण
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

बुद्ध पूर्णिमा के दिन बुद्ध को स्मरण करना, केवल उनके नाम का स्मरण करना नहीं है या उनके ऐतिहासिक जीवन गाथा को याद करना नहीं। प्रत्युत उनके माध्यम से जीवन में घटित आत्मबोध के साथ लयबद्ध होना है और संगीत के साथ रागबद्ध होना है। उसके माध्यम से बुद्ध का मनुष्यता के उत्कर्ष में दिया गया योगदान स्मरणीय है।

आत्म के भीतर बोध को जागृत करने की प्रक्रिया ही गौतम बुद्ध के जीवन-दर्शन का सारतत्व है। बोध और चिंतन को बुद्ध सर्वोपरि मानते हैं। वे अनुभव की यात्रा में अपने साथ संपूर्ण मानव समुदाय को सहयात्री बनाते हैं। उनके यहां आस्था या श्रद्धा का महत्व गौण हैं। यदि श्रद्धा भी आती है तो वह केवल समझ की छाया होती है। समझ के पहले श्रद्धा की मांग बुद्ध की नहीं है। बल्कि वे कहते हैं कि आप किसी बात को इसलिए नहीं स्वीकार कर लो कि मैंने कहा है, प्रत्युत आप चिंतनशीन बनो, मननशील बनो तत्पश्चात अनुभवजन्य ज्ञान को आत्मसात करो। वे अनुभव को प्राथमिक मानते हैं, श्रद्धा तो अनुषांगिक है या अनुभव की सुगंध है। दुनिया के सभी धर्मों में

श्रद्धा को सर्वोपरि माना गया है, लेकिन बुद्ध ने बुद्धि के साथ मनुष्य जाति का नया अध्याय शुरू किया। उनके यहां जीवन की समस्याओं का विश्लेषण किया गया है। उन्होंने मनुष्य जाति को विश्लेषणात्मक ज्ञान आधारित धर्म दिया। इस कारण कहा जा सकता है कि गौतम बुद्ध धर्म के पहले वैज्ञानिक हैं।

पूर्णिमा के चांद के साथ बुद्ध का जुड़ाव जीवन का सहज प्रवाह है। बुद्ध का जन्म, ज्ञान की प्राप्ति और महापरिनिर्वाण की घटनाओं का संबंध बैसाख पूर्णिमा के साथ जोड़ा जाता है। बुद्ध के जीवन के ये तीनों महत्वपूर्ण पड़ाव पूर्णिमा के दिन घटित होना महज संयोग भी हो सकता है, लेकिन इस घटना के बारे में ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। तथापि इसका दार्शनिक महत्व लौकिक जीवन प्रत्ययों से जुड़कर आकार लेता है। पूर्णिमा का चांद पूर्णता का बोधक है, उसका आकार पूर्ण वर्तुल होता है। बुद्ध के जीवन की ये तीनों घटनायें भी वर्तुल रूप में पूर्णता को प्राप्त करती हैं। उसी प्रकार बुद्ध का जीवन अद्‌भुत पूर्णता का रहा है। दोनों में साम्य भाव है। हर पूर्णता शून्यता में ले जाती है, लेकिन शून्यता केवल अभाव या खालीपन का दर्शन नहीं है, यह समग्रता में शामिल होकर जीवन को पूर्ण बनाता है। बुद्ध का दर्शन समग्रता में मनुष्य के भीतर जीवन की खोज है। जैसा कि उपनिषदों में कहा गया है कि पूर्ण से पूर्ण निकालने पर भी पूर्ण बचा रहता है। उसी प्रकार बुद्ध के जीवन का पूर्ण-बोध ही दृश्यमान जगत को आनंदित कर रहा है। यह विशेष दिवस प्रकाश और आनंद का आगार है जहां से आप नवजीवन की यात्रा शुरू कर सकते है।

गौतम बुद्ध राहों के अन्वेषक थे। बौद्ध धर्म का आविर्भाव वैदिक धर्म की प्रतिक्रिया का परिणाम है या कुछ और? सच तो यह है कि बुद्ध ने संपूर्ण मानव जाति को जीवन जीने हेतु नया दर्शन दिया। दर्शन प्रतिक्रिया से निष्पन्न नहीं होता बल्कि यह जीवन के सहज प्रवाह का साक्षी होता है। बुद्ध भी उसी सहज प्रवाह के साक्षी थे, उसके साथ अन्वेषक भी। बुद्ध का आविर्भाव बहुत कुछ इन्हीं कारणों से हुआ था, जिन कारणों को लेकर उपनिषद लिखे गये। डॉ. राधाकृष्णन ने अपनी पुस्तक 'भारतीय दर्शन' में स्पष्ट रूप से इन बिंदुओं को रेखांकित किया है । वे कहते हैं कि बौद्ध मत और उपनिषद दोनों ही वेदों को प्रामाणिक नहीं मानते, दोनों ही वैयक्तिक अनुभूतियों की प्रमाणिकता पर जोर देते हैं। यज्ञ और धर्म के बाह्याचारों को दोनों ही निंद्य समझते हैं। बुद्ध भी जीवन के इन्हीं सत्यों को अनुभूत कर रहे थे जो कि उनके आसपास घटित हो रहे थे। लेखक या सर्जक अपने आसपास घटित होने वाली अनुभूतियों से विलग नहीं रह सकता। बुद्ध ने भी अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को समष्टिगत कर जीवन जीने का नया दर्शन दिया, जहां कि अनुभूति की प्रमाणिकता, आत्म-बोध, संवेदनशीलता और ग्रहणशीलता महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि जिस सत्य को उपनिषदों में ब्रह्म कहा गया, उसी सत्य को बुद्ध ने धर्म कहा।

बुद्ध जीवन में घटित समस्याओं का निराकरण करने वाले दार्शनिक थे। वे जीवन सत्य को ही परमसत्य मानते थे। उनके यहां धर्म का लौकिक रूप आकार लेता है। बुद्ध का कर्म-सिद्धांत भी लोक आधारित मूल्यों पर केंद्रित है। यहां भी बुद्ध वैचारिक रूप से वैदिक धर्म के कर्मफलवाद को अलग रखकर नये प्रतिमान गढ़ते हैं। वैदिक सिद्धांत के अनुसार मनुष्य का वर्तमान जीवन उसके पूर्व जन्म के कर्मों से नियत होता है और मनुष्य अपने जीवन में सुख और पीड़ा के प्रवाह की दिशा बदलने के लिए कुछ भी नहीं कर सकता। बुद्ध का कर्म-सिद्धांत यह कहता है कि मनुष्य के आनुवांशिक संबंध नहीं उसका परिवेश महत्वपूर्ण होता है और कोई भी मनुष्य श्रम और सम्यक प्रयासों के बल पर वर्तमान जीवन को बदल सकता है। बुद्ध जीवन की दशा और दिशा में बदलाव को शिद्दत से महसूस करते हैं। यही कारण है कि उसका दर्शन समकालीन चुनौतियों से दार्शनिक प्रत्ययों के आधार पर मुठभेड़ नहीं

करता बल्कि लोक की सामान्य भावभूमि पर आकार सहज ग्राह्य बन जाता है। उनके यहां लौकिक जीवन का प्रत्यय दर्शन या धर्म संबद्ध होकर भी सहज रह पाता है। अहिंसा, आनंद ,दुख और परोपकार आदि प्रत्यय मानव जनित अनुभूतियों का ही प्रतिफलन है।

वैदिक धर्म या सनातन धर्म के बिना बुद्ध को याद करना संभव नहीं है। पहली बार 'व्यक्ति की अर्थवत्ता' सनातनी परंपरा और मूल्यों से महत्वपूर्ण हो गया। साफगोई से कहा जाए तो यह घटना मानव-इतिहास के विकास में सहज प्रवाह सी नहीं दिखाई पड़ती है। परंतु इसका ऐतिहासिक प्रमाण है कि बुद्ध ने सनातन संस्कृति के विकास को अवरूद्ध कर उसका संशोधित रूप आमजन मानस को सुपुर्द किया। समुद्र मंथन से जो अमृत रस प्राप्त हुआ वह बुद्ध के यहां 'अहिंसा' है। बुद्ध के यहां जो अहिंसा की व्याख्या है वह जैन धर्म से भिन्न है। बौद्ध धर्म में अहिंसा एक सिद्धांत है, जैन धर्म की तरह यह नियम नहीं है। सिंद्धांत आपको कर्म करने की आजादी देता है, नियम में यह आजादी नहीं है। नियम या तो आपको तोड़ता है या आप नियम को तोड़ते हैं। उनके यहां 'भाव-हिंसा और वास्तविक-हिंसा' के बीच स्पष्ट विभेद है, जहां से रास्ता आपको खुद तय करना पडता है। बुद्ध के यहां अहिंसा की शाब्दिक अभिव्यंजना में व्यक्ति की परम स्वतंत्रता का समादर्श निहित है।

बुद्ध मंजिल के बजाय मार्ग की बात करते हैं। उनके यहां जीवन अनुशासन बद्ध है, जहां विचार या तर्क ही प्रबल है।कभी कभी बुद्ध विचार से भी आगे की रास्ता तय करते है,जिसे वे विवेक के तौर पर परिभाषित करते हैं। वे कहते हैं कि विवेक जागृति की ऐसी दशा है, जहां तुम्हें सोचना नहीं पड़ता, जहां तुम्हें केवल दिखाई पड़ता है। बुद्ध के दर्शन में जीवन सर्वस्वीकार्य भाव के साथ अवस्थित है। जीवन के सत्य को मूल मानते हैं, अज्ञात के प्रति जिज्ञासा का भाव उनके यहाँ सर्वदा गौण है। उनका लोक संसार ईश्वर की सत्ता, आत्मा और मोक्ष की सत्ता को लेकर विमर्श नहीं करता, क्योंकि तर्क के आधार पर इसका अस्तित्व नहीं है। वे तर्कनिष्ठ व्यक्ति थे, जिस कारण संसार में घटित घटनाओं के आधार पर जीवन सत्य को ढूंढने का सफल उद्यम रचते हैं।

अनुग्रह ज्योति

मनुष्य का अस्तित्व ब्रह्माण्ड का सत्य है, उसी प्रकार मनुष्य जनित पीड़ा और दुख की अभिव्यक्ति भी सत्य है। जीवन में दुख आध्यात्मिक सत्य नहीं है बल्कि यह जीवन का अनुभूत सत्य है। यदि दुख जीवन का सत्य है तो उसके कारण भी होंगे। और मानव को उससे मुक्ति की चाह भी होगी। पुनः बुद्ध प्रतिभा, चिंतन और मनन के माध्यम से दुख से निकलने के लिए रास्ता दिखाते हैं। 'अप्प : दीपो भवः' बौद्ध दर्शन का सूत्र वाक्य है। बुद्ध लगातार कोशिश करते हैं कि आप स्वयं ही अपना प्रकाश बनो, अपने अंदर की ऊर्जा को स्वयं ही जागृत करो। जीवन का मूल बाहर ढूंढने के बनिस्पत भीतर के प्रकाश को उद्दीप्त कर मनुष्य जीवनोन्मुख हो सकता है। वे इन प्रत्ययों के आधार पर दृश्यमान जगत की सत्ता को स्थापित करते हैं। मानों मनुष्य ही पृथ्वी का सार्वभौमिक सत्य है। वे जीवन के प्रति संदेह को अर्थपूर्ण मानते हैं। साथ ही यह भी कहते हैं कि तलाश लाजिम है, यात्रा कभी बंद नहीं होनी चाहिए।

भारतीय मन को आंदोलित करने वाले बुद्ध पहले फकीर हुए। बुद्ध से पहले और न बाद में भी आजतक भारतीय जनमानस को उनसे ज्यादा तर्कनिष्ठ किसी ने बनाया। परंतु पंडितों और पुरोहितों के लिये वे सदा शत्रु ही बने रहें । उन्होंने सत्य का नग्न रूप हमारे सामने प्रस्तुत किया। 'शास्त्र' को ईश्वरीय नहीं माना और आनंद और दुख के माध्यम से ही धर्म की वैचारिक परिभाषा को ही बदल दिया। उन्होंने कहा कि धर्म की खोज उस रस की खोज है जिससे हम वंचित हो गए हैं, यह आपकी निजी संपदा है। वे निजत्व के सहारे धर्म को जीवित रखने की वकालत कर रहे थे। आज भी भारतीय जीवन में यदि नमक और स्वाद मौजूद है तो उसके कारण बुद्ध ही है। बुद्ध ने हमें जीवन रस की महत्ता से परिचित कराया। वे बूंद बूंद से सागर भरने वाले फकीर थे। कबीर की तरह सागर में बूंद नहीं भरते हैं। बुद्ध के पास जीवन दर्शन का यही अनुशासन है, जहां बहुत साहस और हिम्मत की जरूरत नहीं। वे कबीर की तरह घर फूँकने की बात नहीं करते बल्कि वे जोड़ने की वकालत करते हैं। यहीं कारण है कि बौद्ध धर्म का स्वाभाविक प्रसार संपूर्ण विश्व में हुआ।

बुद्ध पूर्णिमा के दिन बुद्ध को स्मरण करना, केवल उनके नाम का स्मरण करना नहीं है या उनके ऐतिहासिक जीवन गाथा को याद करना नहीं। प्रत्युत उनके माध्यम से जीवन में घटित आत्मबोध के साथ लयबद्ध होना है, और संगीत के साथ रागबद्ध होना है। उसके माध्यम से बुद्ध का मनुष्यता के उत्कर्ष में दिया गया योगदान स्मरणीय है। जहां से व्यक्ति, व्यक्तिनिष्ठता के भाव से ऊपर उठकर समष्टि भाव के साथ तालबद्ध हो जाता है। 'पूर्णिमा' के दिन बुद्ध के जीवन में घटित घटनाओं से केवल बुद्ध का व्यक्तिगत सरोकार अब नहीं रहा ,यह मनुष्य को संपूर्णता में विवेकशील बनने के लिए प्रेरित करता है। 'आत्मबोध' की घटना भी सबके लिए सुलभ है। यह किसी विशेष सम्प्रदाय, व्यक्ति या किताबों से संबद्ध नहीं है। उनके जीवन में घटित सभी घटनाएं अनुभूति की प्रमाणिकता के साथ जुड़ती है और साथ ही उनकी शिक्षा सर्वसुलभ, सर्वव्यापी है जो कि संपूर्ण मानवता के लिए वरदान है। बुद्ध के विचार मनुष्य को वैचारिक के साथ आत्मिक रूप से सजग, संवदेनशील और ग्रहणशील बनाते हैं। यह मनुष्यता के विकास में सर्वाधिक सहायक तत्व है।

शिक्षक और प्रेरक
सफदर इमाम कादरी

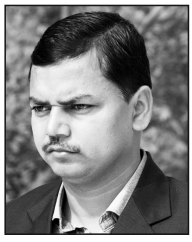

डॉ.मणि भूषण कुमार
अध्यक्ष, उर्दू विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

उस्ताद सफदर इमाम कादरी ने ही सर्वप्रथम उर्दू-हिन्दी के कई शिक्षकों और साहित्यकारों से मेरा परिचय करवाया। सबसे पहले खुरशीद अकबर को उनके राजेन्द्र नगर अवस्थित आवास पर देखा था। बाद में जफर कमाली और सैयद हसन अब्बास साहब से उनके मखनियां-कुआं वाले घर पर मिला। मैत्री-शांति भवन, पटना में उपन्यास 'दिव्य वाणी' पर बातचीत के अवसर पर पहली बार गजन्फर को देखा और सुना।

गुरुवर सफदर इमाम कादरी से एक विद्यार्थी के रूप में मेरे संबंध 21 वर्ष से ज्यादा पुराने हो गए। इस अंतराल में कई सुबह-व-शाम से हम दो-चार हुए। मुझे उनसे कई शिकायतें हैं और उन्हें भी। मगर पूरे विश्वास के साथ व्यक्तिगत रूप से हम दोनों में से कोई भी इन शिकायतों की वास्तविक पहचान नहीं कर सकता। कारण? अपने संबंधों में हमने ऐसी नकारात्मक बातों को कुछ ज्यादा महत्त्व नहीं दिया ।

मेरी उनसे पहली मुलाकात 2000 ई. में कॉलेज ऑफ कॉमर्स, पटना (वर्तमान में कॉलेज ऑफ कॉमर्स, आर्टस एंड साइंस) में हुई। उस समय मैं वहां आइ. ए. (I.A,) का छात्र था। कॉलेज की स्थापना के 50 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर स्वर्ण जयंती समारोह के आयोजन की तैयारियां चल रही थीं। इन तैयारियों में स्मारिका का प्रकाशन भी होना था जिसके संपादन और प्रकाशन की जिम्मेदारी कुछेक अन्य शिक्षकों के अलावा उस समय के युवा आचार्य सफदर इमाम कादरी के पास था। इस स्मारिका का नाम 'विमर्श / Discourses' रखा गया जो सफदर साहब द्वारा प्रस्तावित था और इसकी प्रस्तुति और सामग्री को विभिन्न साहित्यिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में काफी प्रशंसा प्राप्त हुई। इसी स्मारिका में अपने निबंध को प्रकाशित कराने के उद्देश्य से मैं कॉलेज की स्मारिका समिति के कार्यालय गया था और वहीं पर सफदर इमाम कादरी साहब में पहली मुलाकात हुई। आज भी मेरे मस्तिष्क में, उस दिन का गुरुवर का चेहरा और सद्व्यवहार अंकित है। आज जब गुरुवर पर नजर जाती है तो प्रतीत होता है कि किस प्रकार उनके अनुभवों में गहराई आती गई और उसी के समानांतर युवावस्था से प्रौढ़ता की यात्रा भी आंखों-आंखों में कटती चली गई।

पहली मुलाकात के दिन ही गुरुवर ने मेरे और मेरे घर के लोगों के बारे में जानकारी ली और अपने आवास का पता बताते हुए खाली समय में आने का निमंत्रण भी दिया। तब वो राजेन्द्र नगर, पटना में राजनीति शास्त्र के विद्वान प्रोफेसर वी.पी. वर्मा के बगल वाले मकान में किराये पर रहा करते थे। मैं उस समय काजीपुर मुहल्ला में अरविंद महिला कॉलेज के सामने रहा करता था। एक दिन शाम के समय निरुद्देश्य उनके घर जा पहुंचा। तब ये बिल्कुल अंदाजा नहीं था कि उस शाम से उनके घर आने-जाने का जो क्रम शुरू होगा, वह वर्तमान समय और उससे आगे निकल जाएगा।

अनुग्रह ज्योति

सरकारी रिकॉर्ड के अनुसार उनसे शिक्षा ग्रहण करने की अवधि कोई डेढ़ वर्ष ही ठहरती है। मैं इससे अलग पांच-छः वर्षों तक लगभग प्रतिदिन उनसे पढ़ने जाता रहा। अनौपचारिक और अनपेक्षित रूप से उनसे सीखने का क्रम तो आज भी जारी है। प्रबल संभावना है कि मेरी शैक्षणिक प्यास को सफदर इमाम कादरी साहब निकट भविष्य में भी बुझाते रहेंगे। यहां एक दिलचस्प बात बताऊं कि इंटरमीडिएट की पढ़ाई के दौरान राजेन्द्र नगर अवस्थित उनके घर पर सर्दियों के मौसम में सुबह छः बजे के करीब मैं दस्तक दे दिया करता था। सर्दियों की सुबह में कोई अगर इस प्रकार दिनचर्या बनाकर दस्तक दिया करे तो सामान्यतः किसी को कितना बुरा लगेगा, इसका सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। लेकिन गुरुवर तो गुरुवर ठहरे। कभी इस बात की शिकायत नहीं की। बहुत बाद में पता चला कि वह कुछ अन्य छात्रों से मेरी इस परेशान करने वाली हाजरी की प्रशंसा करते और उन्हें भी मेरी ही तरह शिक्षा प्राप्ति के लिए सक्रिय होने की प्रेरणा देते थे।

प्रायः मुझसे मिलने वाले लोग उर्दू के मैदान में मेरे आगमन का कारण एवं उत्प्रेरण के संबंध में जानना चाहते हैं। यह स्थिति मेरे सामने कम से कम पांच सौ बार अवश्य आई होगी। एक समय के बाद इससे इतनी उलझन हो गई कि किसी के पूछने पर इसे येन केन प्रकारेण मैं टाल देता हूं। यह सही है कि कॉलेज ऑफ कॉमर्स में नामांकन कराने से पूर्व नवीं और दसवीं कक्षा में उर्दू विषय का अध्ययन मैंने मातृभाषा के रूप में किया था। उस समय मेरे हाई स्कूल के उर्दू शिक्षक जनाब अब्दुल मुगनी अनवर ने दो वर्ष से कम अवधि में मुझे वर्णमाला से सिखाना शुरू करके मैट्रिक पास करने योग्य बना दिया था। लेकिन इंटरमीडिएट में नामांकन कराने के बाद मैंने अंग्रेजी का चयन वैकल्पिक विषय के रूप में किया। इंटरमीडिएट का पंजीकरण (Registration) हो चुका था और कुछ महीने बाद वार्षिक परीक्षा का फॉर्म भरा जाना था। इस अंतराल में गुरुवर की कृपादृष्टि मुझ पर हो ही चुकी थी। उस समय गुरुवर ने सलाह दी कि अंग्रेजी छोड़ो, उर्दू रख लो। मैंने पंजीकरण में अंग्रेजी का पत्र अंकित होने की बात कही। गुरुवर ने इसमें सुधार कराने का भार अपने ऊपर ले लिया। उसी दिन हमने अंग्रेजी से नाता तोड़ लिया और उर्दू के हो गए। अब वास्तविकता ये है कि अंग्रेजी भाषा की शिक्षा से कुछ विशेष संबंध रहा नहीं और उर्दू सीखने का क्रम टूटता नजर नहीं आता। मैं इसे गुरुवर की कृपा ही समझता हूँ।

पटना शहर की साहित्यिक गोष्ठियों से जुड़ने की प्रेरणा प्रारंभ में सफदर इमाम कादरी साहब ने ही दी। उनसे मिलने से पहले और बाद के दिनों में भी मेरा छात्रों के राजनीतिक संगठनों से किसी हद तक अगंभीर जुड़ाव था। लेकिन उर्दू-हिन्दी के साहित्यिक आयोजनों से मेरा जुड़ाव गुरुवर की देन में से एक है। मुझे पटना के किसी साहित्यिक कार्यक्रम में अपनी उपस्थिति का जो पहला दृश्य याद आता है, वह कोई 20-21 वर्ष पहले गांधी-संग्रहालय में आयोजित हुआ था। एक विख्यात हिन्दी कवि इसकी अध्यक्षता कर रहे थे और किसी हिन्दी कवि का श्एकल काव्य-पाठ हुआ था। उस दिन उस्ताद के राजेंद्र नगर अवस्थित आवास पर मैं लगभग तीन बजे उपस्थित था। उन्होंने मुझे दस रुपये ये कहते हुए दिए कि पटना जंक्शन के रास्ते ऑटो से गांधी संग्रहालय पहुंचो और वह स्वयं अपनी संगिनी के साथ रिक्शे से आगे चले गए। इसके बाद कई ऐसे अवसर आए जब किसी कार्यक्रम में शामिल होने की वह मुझे सूचना देते और आयोजन के दिन दस-बीस रुपये भी दिया करते। ये अवसर 2005 से पहले के होते थे। मेरी समझ में उस वक्त ये नहीं आता था कि आखिर वो रुपये देते क्यों थे? लेकिन मैंने कभी उस्ताद से ये प्रश्न नहीं किया और बड़ी शराफत के साथ बिना किसी खींचातानी के वह राशि हमेशा मैं रख लिया करता था। मुशायरों और कवि-गोष्ठियों में भी उन्हीं की प्रेरणा से जाने लगा जिसके कारण उर्दू के कई प्रतिष्ठित शायरों को निकट से देखने और सुनने का अवसर मिला। अब तक उर्दू शायरी की जो थोड़ी समझ मेरे हिस्से में

आई है, उसमें गुरुवर की शिक्षा के साथ-साथ उन कार्यक्रमों की भी विशिष्ट हिस्सेदारी है।

साहित्यिक आयोजनों में शामिल होने की बात निकली है तो कहना चाहूँगा कि सर्वप्रथम उस्ताद ने ही 2005 में पटना में आयोजित 'अफसाना सेमिनार'में आलेख - पाठ का अवसर दिया। विषय-चयन भी उन्हीं का था। अपने प्रमाणपत्रों की फाइल में जब सेमिनार के प्रमाण-पत्रों को देखता हूँ तो 2005-22 के अंतराल में संगृहीत सभी प्रमाणपत्रों में, दो-तिहाई उन कार्यक्रमों के हैं जिनके आयोजक उस्ताद सफदर इमाम कादरी थे। अपने सभी साहित्यिक आयोजनों में मुझे वह आमंत्रण पत्र देकर बुलाते हैं। आयोजन में भागीदारी के लिए कभी पंजीकरण शुल्क नहीं लिया और इसमें उनका सद्व्यवहार ऐसा कि मेहमानों की तरह आने-जाने का किराया और आलेख प्रस्तुत करने का पारितोषिक और दूसरे उपहार भी दिये। मुझे अपनी अज्ञानता की पूर्ण जानकारी है मगर उनका उत्साहवर्धन हमेशा निरुत्तर करनेवाला होता है। यहां 2018 में आयोजित एक साहित्यिक कार्यक्रम का मनोरंजक वृतांत साझा करना चाहूंगा। सर सैयद अहमद खां की जन्मशती पूर्ण होने के अवसर पर कॉलेज ऑफ कॉमर्स, आर्ट्स एंड साइंस (पुराना नाम - कॉलेज ऑफ कॉमर्स) में एक अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार का आयोजन हुआ जिसके कर्ता-धर्ता उस्ताद ही थे। मुझे भी उन्होंने आमंत्रण पत्र भेजा। अब हम कलकत्ते के 'मटियाबुर्ज कॉलेज' में उस्ताद हो गए थे तो उन्होंने अपनी विशिष्ट, सम्मोहक शैली में फोन करके आलेख के साथ उपस्थित होने का निर्देश दिया। निर्धारित तिथि की सुबह, बन-संवर कर कॉलेज ऑफ कॉमर्स, आर्टस एंड साइंस के मुख्य द्वार से प्रवेश करते ही सफदर इमाम कादरी साहब से सामना हो गया। वहां पर वो अकेले खड़े कुछ मेहमानों के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। आलेख लेकर तो हम आए नहीं थे। कुछ समय की कमी और कुछ आलस्य का ये सम्मिलित प्रतिफल था। लगा कि अवसर है, जल्दी से बिना आलेख की हाजरी के लिए क्षमा-याचना कर लूं। मैंने धीरे से कहा कि 'सर, आलेख तैयार नहीं हो पाया'। मुस्कुराते हुए उनका जवाब था - ''मौखिक वक्तव्य तो दोगे ना?" मैंने भी इस अवसर को गनीमत जानकर हाँ कह दिया। कार्यक्रम शुरू हुआ। विख्यात हिन्दी लेखक कर्मेंदु शिशिर का विस्तृत आधार वक्तव्य हुआ। इसके बाद दो वक्ता और आए और फिर मुझे कार्यक्रम संचालक ने जो स्वयं गुरुवर थे, आवाज दी। जो कुछ मैं सर सैयद के बारे में जानता- समझता था, सब निर्बाध बोल आया । अब स्थिति ये बनी कि कई प्रतिभागियों और शिक्षकों ने मेरे वक्तव्य पर कुछ न कुछ अवश्य कहा। अध्यक्ष-द्वय में से दोनों ने मेरे संदर्भ में बातें कीं। यहाँ ये स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि सर सैयद का विरोध करना अपनी आदत नहीं है। इतना अवश्य है कि उनके कुछ विचारों एवं चिंतन से अलग राय रखता हूं। शेष उन्होंने राष्ट्र की समृद्धि के लिए जो कुछ किया, वह प्रशंसनीय है। उर्दू की कई सभाओं में ये महसूस हुआ कि सर सैयद के ज्ञानपरक, शैक्षणिक, व्यावहारिक एवं सुधारात्मक कार्यों पर विचार-विमर्श करने और उसे आचरण में उतारने तथा आगे बढ़ाने के बदले लोग उनकी उपासना शुरू कर देते हैं। किसी के अच्छे कार्यों को मिटाने और समाजी जड़ता को चिरस्थाई बनाए रखने का यह एक सफल और आजमाया हुआ शस्त्र है। मुझे बस इसी बात से उलझन होती है। इस अतिरिक्त टिप्पणी (in parenthesis) के बाद कहना चाहूंगा कि सेमिनार समाप्ति के बाद शाम में वापसी के समय उस्ताद ने मेरे वक्तव्य पर मुस्कुराते हुए अपनी राय दी : 'मुझे तुमसे ऐसी ही उम्मीद थी।' मुझे भी अच्छा लगा कि बगैर आलेख - लेखन के अपेक्षा पर खरा उतर आया।

मैंने पहले ही कहा है कि कॉलेज की पढ़ाई से अलग लंबे समय तक गुरुवर ने मुझे व्यक्तिगत रूप से उर्दू भाषा एवं साहित्य की शिक्षा दी मगर इस काम के लिए मुझ से कभी शुल्क की अपेक्षा नहीं की। ये उनका बड़प्पन था और मेरी तुच्छता कि पारिश्रमिक की चर्चा से हमेशा परहेज करता रहा। यद्यपि एक बार मेरे पिताजी ने एक बंद लिफाफे

में कुछ राशि उन्हें प्रदान करने को दी थी और मैंने उन तक पहुंचाया भी। मुझे नहीं पता कि यह राशि कितनी रही होगी? इतना अवश्य है कि कई वर्षों तक ज्ञान-दान का पारिश्रमिक वो लिफाफा नहीं हो सकता था। मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ कि विगत बीस वर्षों में उन्होंने कई विद्यार्थियों को निःस्वार्थ प्रशिक्षण दिया और समय-समय पर उनकी आर्थिक सहायता भी करते रहे। इस अवसर पर मुझे अपने हाई स्कूल के उर्दू शिक्षक अब्दुल मोगनी अनवर की बरबस याद आ रही है जो स्कूल से अलग अपने घर पर हाई स्कूल के छात्रों को वर्णमाला से सिखाना आरंभ करके मैट्रिक पास करने के लायक आज तक बना रहे हैं लेकिन कभी किसी से उन्होंने इसकी फीस नहीं ली। मैं भी इसी पंक्ति में हूँ।

2009 में मैंने Ph.D. करने के लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (BHU) में नामांकन कराया। यहाँ मेरे शोध-पर्यवेक्षक डॉ० मुशर्रफ अली थे। मुशर्रफ साहब के साथ क्या सुंदर, समय व्यतीत हुआ कि कह नहीं सकता। जब मैंने वहां नामांकन कराया था, उससे लगभग दो वर्ष पहले ही उनकी नियुक्ति हुई थी। इस प्रकार हमारे उस्ताद उर्दू विभाग और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के नौजवान शिक्षकों में से एक थे। कहना अनावश्यक न होगा कि अल्पायु के कारण किसी हद तक उनसे मेरे मित्रवत संबंध भी थे। ये क्रम भी 2014 में पूरा हो गया। तब से आज तक कई बार मुशर्रफ साहब से फोन पर बातें करने का अवसर मिला। इन अवसरों पर एकाधिक बार उन्होंने मेरे संदर्भ में स्पष्ट शब्दों में कहा कि मेरे लेखन एवं वाचन पर सफदर इमाम कादरी साहब के प्रशिक्षण का प्रभाव है। अपने शोध पर्यवेक्षक की ये बातें सुन कर प्रायः महसूस हुआ कि जिन्दगी की दौड़ में विद्वान शिक्षक का कितना महत्व होता है!

उस्ताद सफदर इमाम कादरी ने ही सर्वप्रथम उर्दू-हिन्दी के कई शिक्षकों और साहित्यकारों से मेरा परिचय करवाया। सबसे पहले खुरशीद अकबर को उनके राजेन्द्र नगर अवस्थित आवास पर देखा था। बाद में जफर कमाली और सैयद हसन अब्बास साहब से उनके मखनियां-कुआं वाले घर पर मिला। मैत्री-शांति भवन, पटना में उपन्यास 'दिव्य वाणी' पर बातचीत के अवसर पर पहली बार गजन्फर को देखा और सुना। यहीं पर हुसैनुल हक, शमोएल अहमद और खगेन्द्र ठाकुर से भी निकटता हुई। हालांकि खगेन्द्र ठाकुर के नाम से मेरा पूर्व-परिचय था लेकिन देखने-सुनने का अवसर नहीं मिला था। अरुण कमल का नाम पहले ही ले चुका हूँ। वाहिद नजीर से परिचय भी उस्ताद के कारण हुआ। शौकत हयात, अब्दुस्समद, अहमद यूसुफ, हबीब तनवीर, कमर रईस, अली अहमद फातमी, आबिद सोहैल, तारिक छतारी, मुसन्ना रिजवी, सुल्तान अख्तर, वहाब अशरफी, शमशाद हुसैन, सोहैल वहीद, खुर्शीद अकरम, न्यायमूर्ति पी० बी. सावंत, न्यायमूर्ति कोल्से पाटिल, इत्यादि के नाम बिना दिमाग पर जोर डाले सामने आ जाते हैं जिनको गुरुवर द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में ही पहली बार देखा और सुना। शफी जावेद साहब से आपका विशेष लगाव रहा। शफी जावेद से मुझे कई बार लाभान्वित होने का अवसर उस्ताद की वजह से प्राप्त हुआ। उर्दू-हिन्दी साहित्य से अलग, इतिहास, राजनीति शास्त्र, पत्रकारिता और सामाजिक कार्यकर्ताओं का विवरण / परिचय भी हमें यहां मिलता रहा। उपर्युक्त विषय उनका विशिष्ट कार्यक्षेत्र नहीं है मगर इसके चलते मेरे साहित्य-अध्ययन में अधिक व्यापकता आई। उनकी शिक्षण पद्धति पर बातें की जाएं तो कहना होगा कि वो उर्दू भाषा एवं साहित्य के कारपोरेट उस्ताद हैं। सामाजिक जीवन में इन पंक्तियों का लेखक कारपोरेट कल्चर का घोर विरोधी है लेकिन शैक्षणिक कार्य में ऐसे व्यक्तित्व को प्रशंसनीय समझता है। इंटरमीडिएट की पढ़ाई से लेकर नेट (NET) और पीएच. डी. (Ph.D.) तक एवं उर्दू से संबंधित प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी में अनथक उन्हें पढ़ाते देखा है। उनकी शिक्षकीय योग्यता का अनुमान इस बात से भी लगाया जा सकता है कि नेट (NET) के उर्दू विषय की तैयारी में वह तीन, सवा तीन महीने में सौ से अधिक विषयों (Topics) को पढ़ाया करते थे जिसके

परिणामस्वरूप नेट की परीक्षा में सफल दर्जनों अभ्यर्थी अब पटना शहर और इसके आस-पास मौजूद हैं। इनमें से कई अब विभिन्न विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में शिक्षण कार्य कर रहे हैं। उर्दू की शिक्षा के लिए विख्यात विश्वविद्यालयों से अलग उर्दू के छात्रों की वो भीड़ भी देश भर में मौजूद है जिन्हें उर्दू भाषा एवं साहित्य की उचित शिक्षा विभिन्न कारणों से प्राप्त नहीं हो पाती। ऐसे सभी छात्रों की शैक्षणिक प्यास को तृप्त करने का महत्वपूर्ण केन्द्र सफदर इमाम कादरी दो दशक से अधिक समय से बने हुए हैं। बड़े विश्वविद्यालयों के शिक्षक प्रायः किसी एक या कुछ विषयों की शिक्षा देने में अपनी पहचान रखते हैं। ऐसा नहीं है कि अपने विशिष्ट विषय से बाहर उनका ज्ञान क्षेत्र नहीं होता। मामला बस ये है कि ऐसे सभी और विशेषीकृत विषय धीरे-धीरे उनकी प्राथमिकता से बाहर हो जाते हैं। जैसे कोई शिक्षक उपन्यास या कहानी के विशेषज्ञ के रूप में अपनी पहचान रखते हैं तो कोई शास्त्रीय पद्य और इतिवृत संग्रह के विशेषज्ञ के रूप में। लेकिन एक छात्र को तो पाठ्यक्रम के संपूर्ण विषयों को सीखने की आवश्यकता एक साथ पड़ती है। ऐसे में विद्यार्थी कहां कहां भटके? इस स्थिति में सफदर इमाम कादरी की याद आना स्वाभाविक है। ये अवश्य है कि सफदर इमाम कादरी साहब की रुचि का क्षेत्र भी निर्धारित है मगर विद्यार्थियों की आवश्यकता की पूर्ति उनकी प्राथमिकता में शामिल है और वो इसे भली-भांति पूरा भी करते हैं। इसीलिए मैं उन्हें उर्दू का कारपोरेट शिक्षक कहकर समुचित दाचित्य का निर्वहन कर रहा हूँ।

अगर आज मैं उस्ताद पर लिख पा रहा हूँ तो ये उन्हीं का दिया उपहार है। केवल इसलिए नहीं कि उनसे लंबे समय तक शिक्षा प्राप्त की है बल्कि इसलिए भी कि उनका छात्रों को लेखक बनाने पर बहुत जोर होता है। यह बात अकेले मुझ पर लागू नहीं होती बल्कि सभी विद्यार्थी उनकी निरंतर प्रेरणा और तकाजे के कारण कागज काला करने में लगे रहते हैं और परिणाम स्वरूप उनकी लेखन क्षमता उभर आती है। "अफसाना सेमिनार" का उल्लेख तो मैं पहले ही कर चुका हूँ। इस कार्यक्रम में मेरे आलेख का शीर्षक 'गर्म कोट - राजेन्द्र सिंह बेदी से खुरशीद अकरम तक' था। ये एक विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन था जिसे मैंने उस्ताद की सलाह पर लिखा था। खुरशीद अकरम की कहानी 'गर्म कोट' की छाया प्रति उन्होंने ही उपलब्ध करवाई थी। पुस्तकें एवं अन्य आवश्यक सामग्री की प्राप्ति में वो आम तौर पर छात्रों का मार्गदर्शन एवं सहयोग करते देखे जा सकते हैं। 2007 में 1857 के ऐतिहासिक विद्रोह के 150 वर्ष पूरे होने पर देश भर में जश्न मनाया गया। कई समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं ने इस अवसर पर विशेषांक प्रकाशित किए। मेरा भी एक निबंध इस अवसर पर उर्दू पत्रिका 'आजकल में 'कार्ल मार्क्स, हिन्दुस्तानी समाज और 1857 का इंकलाब' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इस विषय का चयन स्वयं सफदर इमाम कादरी साहब ने मेरे लिए किया था। मैंने जब इस विषय पर काम आरंभ किया था तो मेरे पास प्रगति प्रकाशन, मॉस्को से प्रकाशित कार्ल मार्क्स की पुस्तक The First War of Indian Independence उपलब्ध थी। मेरा काम चल रहा था और उस्ताद समय-समय पर इसकी खबर भी लेते रहते। इसी अंतराल में किसी कार्यक्रम में सम्मिलित होने वे अलीगढ़ गए और वापसी में वहां से विख्यात इतिहासविद् इकबाल हुसैन की इसी विषय पर नए सिरे से संकलित एवं संपादित पुस्तक मेरे लिए लेते आए। यह किताब काफी मंहगी थी जबकि प्रगति प्रकाशन, मॉस्को से प्रकाशित पुस्तक तुलनात्मक रूप से काफी सस्ती। इस निबंध के पूरा होने से गुरुवर का कोई व्यक्तिगत फायदा तो नहीं था मगर उन्होंने मेरी बेहतरी की उम्मीद से वो खर्च किया। इस निबंध की तैयारी के क्रम में एक दिलचस्प घटना घटी। वो अलीगढ़ से तुरंत वापस आए ही थे और इकबाल हुसैन वाली किताब तब तक मैंने उनके पास देखी नहीं थी। एक दिन उन्होंने कहा कि तुमने अभी तक दिखाया नहीं कि निबंध की तैयारी में किस किताब का अध्ययन कर रहे हो? यह सुनकर मुझे बड़ा अजीब लगा। अगले ही दिन मैं अपनी ऊपर कथित किताब के साथ उपस्थित हुआ।

उन्होंने किताब देखी और इकबाल हुसैन की संकलित / संपादित पुस्तक मेरे हवाले कर दी। इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कहा। मेरी समझ में नहीं आया कि माजरा क्या है? पहले अध्ययन क्रम में शामिल पुस्तक दिखाने को कहा। जब अपनी किताब दिखाई तो एक नई किताब अध्ययन क्रम में जोड़ दी गई। बगैर देखे भी वह नई किताब दे सकते थे। मैं अच्छी- खासी दुविधा में पड़ गया। एक-दो दिनों के बाद इस पर सोचना छोड़कर मैं निबंध पूरा करने में लग गया। ये पूरी घटना मार्च-अप्रैल 2007 की है। इसके कई वर्ष बाद मेरी समझ में आया कि विद्यार्थी अपने गुरुवर से लिखाई- पढ़ाई के मामले में धोखाधड़ी भी किया करते थे। ऐसी स्थिति को दूर करने के लिए ये उनका औचक निरीक्षण हुआ करता था।

उन्हीं दिनों की एक और घटना आपको बताऊँ। एक दिन सुबह के लगभग सात बजे मैं और मेरे बड़े भाई, दोनों एक साथ बैंक पीओ (P.O.) की परीक्षा देने दीघा (पटना) जा रहे थे। गुरुवर की कोई किताब देते हुए हमें परीक्षा केन्द्र तक जाना था। हमदोनों भाई उनके मखनियां कुआं वाले घर पर जा पहुंचे। इससे एक दिन पहले की शाम को जब मैं उनके घर गया था तो ये बात निकल आई कि मैं कल सुबह बैंक की परीक्षा देने जा रहा हूँ। उस्ताद ने परीक्षा केंद्र के लिए निकलते समय किताब पहुंचाने की बात कह दी। (किताब का विवरण याद नहीं) वह समय आ गया जब किताब सहित हम वहां मौजूद थे। उस्ताद ने किताब लेकर मुस्कुराते हुए ये कहा कि 'ईश्वर इस परीक्षा में आपको असफल करे।' आज तक का नतीजा ये है कि बैंक की किसी परीक्षा में हम दोनों भाई कभी सफल नहीं हो सके। स्पष्टतः ये उस्ताद के कहे का प्रभाव बिल्कुल नहीं है बल्कि बैंक संबंधी परीक्षाओं के प्रति हमारी अगंभीरता से वह परिचित थे। वो कुछ नहीं भी कहते तो भी परिणाम यही आता। हमने भी कभी उनकी इस बात को गंभीरता से नहीं लिया। वैसे भी ईश्वर से मेरा और उस्ताद का संबंध कैसा रहा है, ये हमदोनों के अतिरिक्त शायद ही कोई तीसरा जानता हो।

उस्ताद ने कई किताबें लिखी और संकलित / संपादित की हैं। उनका अधिकांश लेखन मेरे अध्ययन में शामिल है। उनकी किताबों से बहुत कुछ नया सीखने को मिला। इन किताबों में कई ऐसे विषय थे जो उन्होंने हमें औपचारिक रूप से पढ़ाया। एक ही विषय पर जब उनके लेखन और शिक्षण कार्य की तुलना करता हूँ तो स्वतः ये आभास होता है कि उम्र बढ़ने के साथ-साथ उनकी क्षमता अत्यधिक बढ़ी है और उनके विचार अधिक स्पष्ट और प्रवाहमय होकर हमारे सामने आ रहे हैं। मैं गुरुवर का परीक्षक नहीं मगर एक छात्र के रूप में मेरी जो समझ उनके लेखन और शिक्षण कार्य के संबंध में बनी है, उसे केवल सार्वजनिक करना चाहता हूँ। ये भी स्पष्ट करता चलूं कि पिछले वाक्य में 'शिक्षण' से अभिप्राय, मेरे छात्र जीवन का वह काल है जब मैं प्रतिदिन उनसे पढ़ने जाया करता था और 'लेखन' से अभिप्राय उनकी पुस्तकों में उपलब्ध सामग्री है। उनकी किताबों के प्रकाशन और मेरी नियमित उपस्थिति के बीच अच्छा-खासा समयांतराल है। इसी अंतराल को आधार बनाकर मैंने उपर्युक्त परिणाम निकाला है। विगत डेढ़ दहाई में मुझे कई आलेख लिखने का अवसर मिला मगर गुरुवर की किसी किताब पर कुछ नहीं लिखा। आज जब लिखने बैठा हूँ तो उनका व्यक्तित्व लेखन के केंद्र में है। अपेक्षा है कि निकट भविष्य में उनकी किताबों पर भी हाथ आजमाऊंगा। अब लिखने की बात निकली है तो कहना चाहूंगा कि उस्ताद अपने लेखन में बेहद सख्त मिजाज और ईमानदार परिलक्षित हुए हैं। उन्होंने अपने कुछेक निबंधों का श्रुतिलेखन भी मुझसे कराया है। इसके कारण भी उपर्युक्त विचारों तक पहुंच सका हूँ। इसके विपरीत वह अपने साहित्यिक संबोधनों में बड़े मधुर भाषी नजर आते हैं। इस विपरीत स्थिति पर क्या कहा जाए?

छात्रों के साथ उनका अनुभव कैसा रहा है, इसे बताने के लिए एक घटना की चर्चा आवश्यक है। 2004-05 की

अनुग्रह ज्योति

सर्दियों की किसी शाम को उस्ताद के साथ मैं रिक्शे पर सवार रमना रोड (पटना) से राजेन्द्र नगर जा रहा था। कुछ बात निकली तो उन्होंने कहा : 'तुम तो सवाल पूछते हो।' (ये शब्द पूर्णतः उस्ताद के हैं) मेरी समझ में नहीं आया कि इसमें ऐसी कौन सी बात है कि जिसका वर्णन किया जाए? हालांकि उन्होंने मेरे सवाल पूछने को कभी बुरा नहीं जाना। कुछ दिनों के बाद ये बात समझ में आई कि विद्यार्थी सुसभ्य बने रहने के चक्कर में मुँह पर ताला लगाए रहते हैं। भले अक्ल पर काई जमी रहे मगर उसकी सफाई के लिए कभी जुबान नहीं फेरेंगे। वो अपने उस्ताद की हर बात पर या तो 'जी सर' कहेंगे, या फिर अकारण हंसते और मुस्कुराते नजर आएंगे। ऐसा नहीं है कि ये स्थिति उर्दू तक सीमित है बल्कि उर्दू से बाहर की दुनिया भी ऐसी ही है। ये अवश्य कहूंगा कि उर्दू या उर्दू से बाहर की दुनिया में ऐसे शिक्षक भी बहुत कम हैं जो छात्रों से प्रश्नों की अपेक्षा रखते हैं। अब ऐसे माहौल में छात्र बेचारा करे भी तो क्या?

दस साल से अधिक बीत गए जब सफदर इमाम कादरी साहब के सामने थोड़ी अगंभीरता से हमने कहा था कि आपका 'रेखा चित्र'लिखेंगे। ये सुनते ही वो बिगड़ गए। मगर दो-चार पल में ही स्वयं को संभाल लिया और अत्यंत सादगी के साथ कहा, 'जरूर लिखना और मुझे भी दिखाना, जहां आवश्यक होगा इसमें सुधार भी हो जाएगा।' याद आता है कि अपने उस्ताद नजीर अहमद का फरहतुल्लाह बेग ने जो रेखाचित्र (नजीर अहमद की कहानी) लिखा, उसने नजीर अहमद की एक अलग ही छवि उर्दू दुनिया में तैयार कर दी। संभव है कि उस्ताद के मस्तिष्क में भी ऐसी कोई बात आई हो। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे उस्ताद सर्वथा योग्य हैं मगर ये साधारण शिष्य, फरहतुल्लाह बेग के समान हक अदा करने में अक्षम है। इतना अवश्य है कि जब कभी उस्ताद की किताबों पर लिखूँगा तो उन्हीं की तरह ईमानदारी और तटस्थता के साथ लिखने का प्रयास करूंगा। उस्ताद ने भी पढ़ाने के क्रम में हमेशा इस बात का निर्देश दिया कि लेखन कार्य में कभी भी व्यक्तिगत संबंध और लोभ-लाभ आड़े नहीं आना चाहिए।

उस्ताद ने हमें कभी काफी कुछ सिखाया, पढ़ाया तो हमने भी उन्हें क्षमता भर पढ़ने का प्रयास किया है। मेरी ही तरह उनके दर्जनों विद्यार्थी हैं। उन्हीं में से एक हैं- रांची के डॉ० तस्लीम आरिफ लंबा कद, लंबी दाढ़ी, हंसमुख चेहरा और रोबदार व्यक्तित्व के स्वामी। आदरणीय गुरुवर सफदर इमाम कादरी पर ये कलम-घिसाई अपने गुरुभाई तस्लीम आरिफ की निरंतर जिद और गैरत दिलाने का परिणाम है। इसके लिए मैं तस्लीम आरिफ का अत्यंत आभारी हूँ। विश्वास कीजिए मैं गुरुवर पर लिखना नहीं चाहता था। संशय की स्थिति थी कि क्या लिखूं और क्या कुछ छोड़ दूं। अब अपने लिखे को देखता हूँ तो महसूस होता है कि हक अदा करने की योग्यता अभी नहीं रखता। शायद आनेवाले समय में मेरा लेखन बेहतर होकर सामने आए। अपने तीन उस्ताद जनाब सफदर इमाम कादरी, जनाब अब्दुल मुगनी अनवर और जनाब मुशर्रफ अली का उल्लेख मैंने अपने निबंध में किया है। इनमें से पहले दो शिक्षक आगामी पांच-सात वर्षों में सेवानिवृत हो जाएंगे जबकि मुशर्रफ साहब को अभी लंबी पारी खेलनी है। इन तीनों शिक्षकों से मेरे संबंध में एक खास बात ये रही कि जब मैं उनसे नियमित शिक्षा प्राप्त किया करता था, ये सब के सब युवा थे। कहना चाहूंगा कि इन शिक्षकों ने शिक्षा प्रदान करने के क्रम में अपने 'जवां लहू' से मुझे तृप्त किया। ये अवसर सफदर इमाम कादरी साहब पर लेखन का है। आने वाले दिनों में अगर मैं अपने विद्यार्थियों का सफल मार्गदर्शन कर सका तो समझूंगा कि गुरुवर सफदर इमाम कादरी से कुछ सीखने में एक सीमा तक सफल रहा। साथ ही उस्ताद का संपूर्ण व्यक्तित्व इस समय मेरे सामने नहीं है। इसे जानने और प्रस्तुत करने के लिए समय अपेक्षित है। तो प्रतीक्षा कीजिए।

'जयप्रकाश नारायण व संपूर्ण क्रांति'

"बिहार आंदोलन के स्वर्ण जयंती वर्ष के अवसर पर"

डॉ. संजीत लाल
सहायक प्रोफेसर
इतिहास विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

'संपूर्ण क्रांति' अर्थात् जीवन के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सांस्कृतिक, शैक्षणिक और नैतिक क्षेत्र में बदलाव लाना था।उनका मानना था कि क्रांति सतत और हर क्षेत्र में साथ-साथ चलने वाली प्रक्रिया है और अन्य क्षेत्रों में बदलाव हुए बगैर कोई एक बदलाव नहीं हो सकता है इसी के चलते सिर्फ राजनीतिक और आर्थिक बदलाव पर जोर देने वाली विचारधारा असफल हुई है वे मानते थे कि एक झटके से क्रांति नहीं होती यह धीरे-धीरे और स्वतः पूरे समाज को बदलती है।

भारतीय इतिहास में आंदोलनों का लंबा इतिहास रहा है, जिसमें संगठित व निश्चित लक्ष्य के साथ औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में विशेष कर गांधीवादी दौर को देखते हैं। भारत 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र हो गया, उसके सम्मुख अपने सीमित संसाधनों के द्वारा पिछड़े देश से विकासशील होते हुए विकसित देशों की परिधि में शामिल होने की चुनौती थी। गांधी जी ने इस आजादी को सीमित अर्थ वाला मानते हुए इसे 'राजनीतिक आजादी' की संज्ञा दी तथा इसका समुचित लाभ तब तक नहीं माना, जब तक सभी को 'सामाजिक व आर्थिक आजादी' नहीं मिल जाएगी। उनकी यह सोच इस मायने में भी सही रही, क्योंकि देखते हैं कि आज भी आजादी के 77 वर्षों के बाद भी आजादी का समुचित लाभ लोगों को नहीं मिल पाया हैं। जिसके कारण देश के विभिन्न क्षेत्रों, वर्गों व जातियों में अपनी हिस्सेदारी सुनिश्चित करने के लिए तनाव देखा जा सकता है। जिसकी परिणति विभिन्न प्रकार के आंदोलनों में देख सकते हैं जैसे- किसान आंदोलन, मजदूर आंदोलन, सर्वोदय व भूदान आंदोलन, वामपंथी आंदोलन, नक्सलबाड़ी आंदोलन, छात्र आंदोलन या कमजोर व पिछड़ों तथा शोषित व दलितों का आंदोलन आदि।

इसी क्रम में बिहार में 1974 का छात्र आंदोलन को देखते हैं, जिसे 'बिहार आंदोलन' या 'जेपी आंदोलन' के नाम से भी जाना जाता है यह आंदोलन वस्तुत : आजादी से वर्तमान के मध्य एक ऐसा बिंदु था। जिसने ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दों को केंद्र में लाकर जनता को जबरदस्त रूप से प्रभावित किया। इस आंदोलन से ही 'संपूर्ण क्रांति' की अवधारणा का विकास होता है। 1973-74 में बिहार में छात्रों द्वारा अपनी कुछ महत्वपूर्ण मांगों के साथ कुछेक राष्ट्रीय मुद्दों पर आंदोलन आरंभ हुआ। जिसमें धीरे-धीरे कई छात्र-संगठन जुड़ने लगे, लेकिन आंदोलन में वह पैनापन नहीं थी। वहीं दूसरी तरफ जेपी भी पत्नी प्रभावती देवी के निधन, तत्कालीन राजनीतिक अव्यवस्था व

सर्वोदय से अपेक्षित सफलता न मिल पाने के कारण एक अलग मनःस्थिति में थे। 'इसी दौरान 18 फरवरी 1974 को छात्रों के संगठन 'बिहार प्रदेश छात्र समिति' ने अपनी संयुक्त अपील द्वारा जेपी से अनुरोध किया वे छात्रों की संघर्ष में मदद करें।[1] इसके पश्चात् 18 मार्च 1974 को छात्रों द्वारा विधानसभा का घेराव किया गया, जिसमें पुलिस फायरिंग हुई। इस पुलिस फायरिंग की जेपी ने निंदा की और उन्होंने 8 अप्रैल 1974 को एक विशाल मौन जुलूस का नेतृत्व करना स्वीकार किया। जिससे इस छात्र आंदोलन का विस्तार हुआ तथा यह 'बिहार आंदोलन' में तब्दील हो गया।' 9 अप्रैल 1974 को जेपी को गांधी मैदान की जनसभा में विद्यार्थियों द्वारा 'लोकनायक' की उपाधि से विभूषित किया गया'[2] जेपी ने आंदोलन का नेतृत्व दो शर्तों पर स्वीकार किया। पहला,यह कि आंदोलन पूरी तरह शांतिपूर्ण रहेगा तथा दूसरा, सभी मेरे नेतृत्व को मानेंगे।

5 जून 1974 को विधानसभा के विघटन की मांग को लेकर जेपी के नेतृत्व में ऐतिहासिक जुलूस निकला तथा उसी दिन गांधी मैदान की विशाल जनसभा में जेपी द्वारा 'संपूर्ण क्रांति' का आह्वाहन किया गया। उन्होंने घोषणा की कि 'दोस्तों! यह संपूर्ण क्रांति है यह क्रांति महज विधानसभा को भंग करवाने के नहीं है वह तो एक मंजिल है हमें आगे जाना है काफी दूर। मैं जो क्रांतिकारी विचार आपके सामने रख रहा हूं, उन पर अमल करना आसान नहीं है। आपको त्याग करना होगा, कष्ट सहने होंगे, लाठियां खानी होगी, गोलियों को सहना होगा और कैद भी होना पड़ेगा'[3] उन्होंने आगे कहा कि 'यह संघर्ष केवल सीमित उद्देश्यों के लिए नहीं हो रहा है इसके उद्देश्य तो बहुत दूरगामी हैं, भारतीय लोकतंत्र को 'रियल' यानी वास्तविक तथा सुदृढ़ बनाना, जनता का सच्चा राज कायम करना, समाज से अन्याय, शोषण आदि का अंत करना, एक नैतिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक क्रांति करना, नया बिहार बनाना और अंततोगत्वा नया भारत बनाना है।[4] जेपी के अनुसार इस आंदोलन का लक्ष्य होगा - संपूर्ण क्रांति जो देश की मौजूदा समस्याओं का निदान करेगी और एक नए समाज का अग्रदूत बनेगी। जिसके पश्चात् आंदोलन में तालियों की गड़गड़ाहट के बीच देश के अधिसंख्य लोगों की कल्पना में संपूर्ण क्रांति की लौ लहक उठी। विद्यार्थियों के लिए यह मंत्र बन गया तथा जेपी जहां भी भाषण देते हैं वहां इकट्ठे हुए छात्रों व श्रोताओं द्वारा मंत्रोच्चार की तरह उद्घोषणा की जाती कि 'संपूर्ण क्रांति अब नारा है भावी इतिहास हमारा है।'

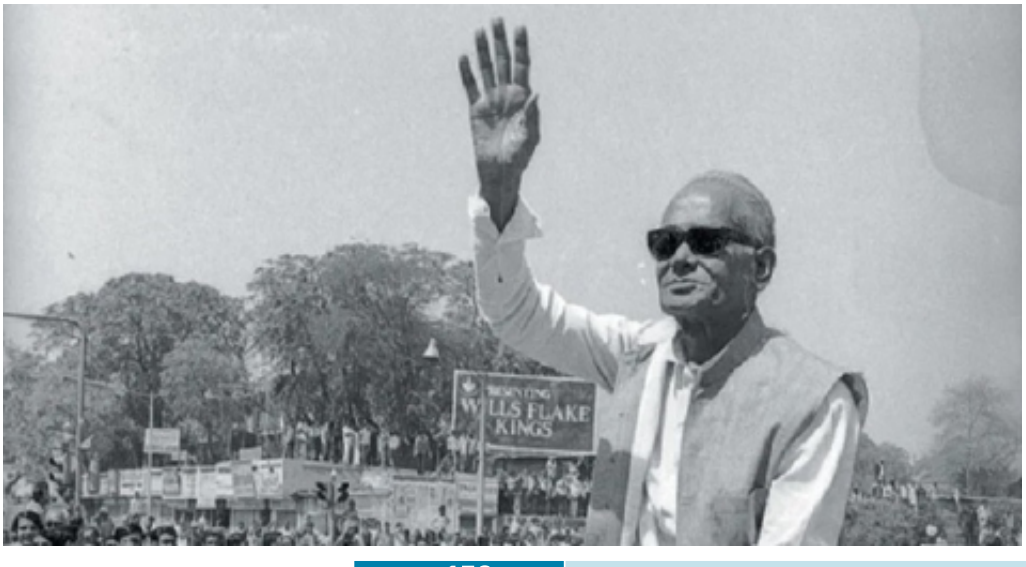

वहीं दूसरी ओर लेखकों के एक वर्ग का मानना है कि '1950 के दशक के आरंभ से जेपी संसदीय राजनीति और संसदीय जनवाद के आलोचक बन गए थे। कई वर्षों तक वे 'दलविहीन जनवाद' की अवधारणा को लोकप्रिय बनाने की कोशिश में जुटे रहे। 1974-75 के दौरान भी उन्होंने 'संपूर्ण क्रांति' की वकालत की और दोनों ही अवधारणा अस्पष्ट और अविकसित थी।[5]' जिससे यह प्रश्न उठा कि संपूर्ण क्रांति का मूल विषय क्या माना जाए तथा संपूर्ण क्रांति किस तरह का परिवर्तन लाना चाहती है? जिसके कारण संपूर्ण क्रांति की अवधारणा को साफ करने की समय-समय पर मांग की गयी। इस संदर्भ में यदि जेपी के भाषणों, लेखों व संवादों का विश्लेषण करें, तो बहुत हद तक संपूर्ण क्रांति की अवधारणा साफ हो जाती है। जिसमें 'ए प्ली फॉर रीकंस्ट्रक्शन आफ इंडियन पॉलिटी (1959) तथा स्वराज फॉर द पीपुल (1961) जैसे लेखों से एक तस्वीर बनती हैं।

वस्तुतः बिहार आंदोलन को संपूर्ण क्रांति की अवधारणा के साथ आरंभ नहीं मान सकते। क्योंकि आंदोलन का आरंभ तो राजनीतिक उद्देश्यों के साथ हुआ था। जिसमें जयप्रकाश नारायण ने आरंभ में केवल आंदोलन के अहिंसक होने व निर्दलीयता की पूर्व शर्त रखी तथा उनकी अपेक्षा इससे राजनीतिक हितार्थ था साथ ही साथ वे स्वयं सेवकों की एक पीढ़ी तैयार करना चाहते थे। इसी कारण उन्होंने आरंभ में किसी दूरगामी लक्ष्य की बात नहीं की बल्कि इसके काफी बाद 5 जून 1974 को 'संपूर्ण क्रांतिश की बात कही। इसके लिए उन्होंने अपनी जेल डायरी में कहा भी कि यह बात उनके मुंह से सहसा निकल गए। इसके आरंभ में उन्होंने कोई रणनीति नहीं बनाई थी। संपूर्ण क्रांति के विचार को उनकी समग्रता में देखें तो उनके समाजवादी व सर्वोदय के विचारों की ही चरम परिणति कह सकते हैं दरअसल 'संपूर्ण क्रांति' शब्द का इस्तेमाल सर्वप्रथम कार्ल मार्क्स ने सन 1847 में 'पॉवर्टी आफ फिलासफी' में किया था, 'इस बीच सर्वहारा और बुर्जुआजी के बीच विरोध एक वर्ग का दूसरे वर्ग के खिलाफ संघर्ष है, ऐसा संघर्ष जो अपनी सर्वोत्कृष्ट अभिव्यक्ति में संपूर्ण क्रांति है।[6] वही जेपी ने 'संपूर्ण क्रांति' शब्द का प्रयोग 1969 में प्रकाशित एक लेख में सर्वोदय आंदोलन के संदर्भ में किया था। उनके अनुसार 'भूदान और ग्राम-दान के जरिए चल रहे अहिंसक आंदोलन का यह पुनर्ग्रहण है[7] एक अवसर पर जेपी ने स्वयं स्पष्ट किया की 'संपूर्ण क्रांति और सर्वोदय में कोई भेद नहीं, भेद है तो यह की सर्वोदय अगर साध्य है तो संपूर्ण क्रांति एक साधन। संपूर्ण क्रांति जीवन में आधारभूत परिवर्तन है इसके बिना सर्वोदय संभव ही नहीं[8]

जेपी द्वारा संपूर्ण क्रांति के लक्ष्य के बारे में मानना था, कि उनके इस लक्ष्य का कभी विरोध नहीं हुआ बल्कि मेरे छात्र बंधुओं व सहयोगियों द्वारा यह मांग अवश्य की गयी कि संपूर्ण क्रांति के लक्ष्य का स्पष्टीकरण व व्याख्या की जाये। जेपी के संवादों और सार्वजनिक भाषणों को 'संपूर्ण क्रांति' नामक पुस्तिका में प्रकाशित किया गया। जेपी ने संपूर्ण क्रांति के 'संपूर्ण' शब्द के बारे में जिक्र किया कि 'छात्रों की सीमित मांगे थी - जैसे भ्रष्टाचार एवं बेरोजगारी का निराकरण, शिक्षा में क्रांति आदि सर्वांगीण सामाजिक क्रांति, जो संपूर्ण क्रांति का वास्तविक अर्थ है, के बिना पूरी नहीं किया जा सकती है ... जिसके लिए एक बेहतर राजनीतिक व्यवस्था निर्माण करने की है'[9] वही 'क्रांति' के बारे में उनका मानना था कि उच्च

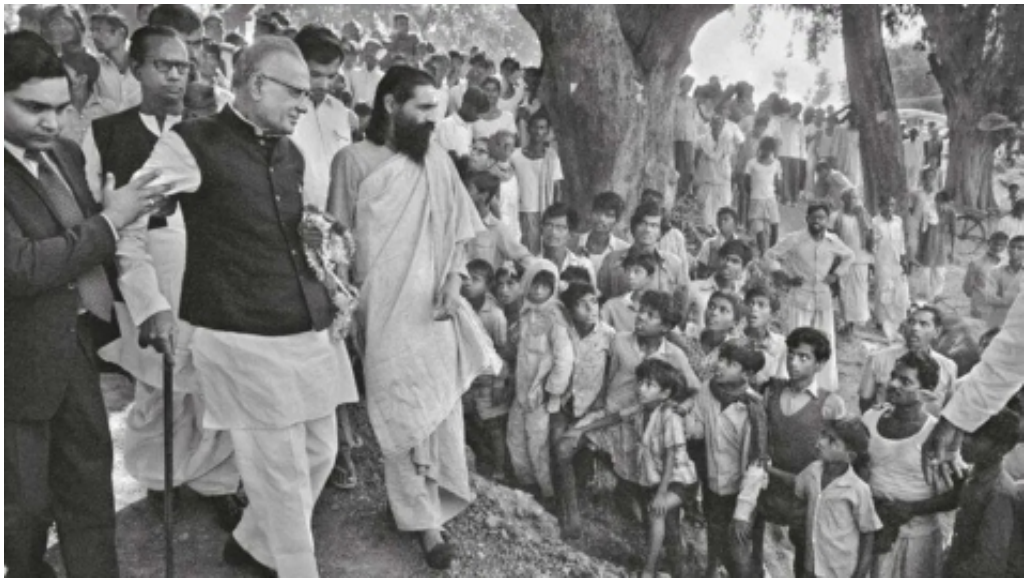

विद्यालय में शिक्षा के दौरान ही उनके मन में 'क्रांति' के विचार अंकुरित हो गए थे उस समय वह राष्ट्रीय क्रांति,राष्ट्रीय स्वतंत्रता का विचार था इसी दौरान वे गांधी जी के असहयोग आंदोलन व अबुल कलाम आजाद के भाषण से प्रभावित हुए। वह अपनी डायरी में आगे लिखते हैं कि 'क्रांति करने की जो तीव्रता मेरे मन में थी वह मुझे मार्क्सवाद की ओर तथा राष्ट्रीय आजादी के आंदोलन से गुजरकर लोकतांत्रिक समाजवाद की ओर और फिर विनोबा जी की 'प्रेम से क्रांति' की ओर खींच ले गयी... उनका लक्ष्य मात्र जमीन बांटना नहीं था, बल्कि मनुष्य एवं समाज का संपूर्ण परिवर्तन करना है जिसे मैंने दोहरी क्रांति मानवीय क्रांति के द्वारा सामाजिक क्रांति की संज्ञा दी थी...क्रांति के साथ मेरा ऐसा पुराना लगाव होने के कारण जब मुझे लगा कि ग्राम स्वराज आंदोलन से वह अहिंसक क्रांति नहीं होने वाली है तो मैं दूसरे रास्ते की तलाश करने लगा।[10] 7 अक्टूबर 1975 को अपनी जेल डायरी में उन्होंने इसकी व्याख्या लिखी। जेपी के अनुसार संपूर्ण क्रांति में सात क्रांतियां निहित हैं- सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, वैचारिक या बौद्धिक, शैक्षणिक और आध्यात्मिक। यह संख्या बढ़ाई या घटाई जा सकती है। जैसे-सांस्कृतिक क्रांति में शैक्षणिक तथा वैचारिक क्रांतियों का समावेश हो सकता है इसी प्रकार बौद्धिक क्रांति को वैज्ञानिक तथा दार्शनिक क्रांतियों में बांटा जा सकता है।

जेपी अपने भाषणों व लेखनों में इस बात पर जोर देते हैं की संपूर्ण क्रांति केवल अहिंसक ढंग से पाई जा सकती है वस्तुत जेपी को रूसी क्रांति के बाद की घटनाओं ने उन्हें झकझोर दिया। क्रांति के मूर्धन्य नेताओं पर जघन्य अत्याचार, उनकी हत्याएं और रूस सहित अन्य साम्यवादी देशों में क्रांति के बाद सत्ता का जनता या गरीब के हाथ में ना आना, मौलिक अधिकारों का व्यापक हनन, क्रांति के आदर्श के अनुरूप व्यक्ति के चरित्र में बदलाव न आना आदि प्रश्नों ने जयप्रकाश नारायण को हिंसक क्रांतियों और मार्क्स के बुनियादी सिद्धांतों पर पुनर्विचार के लिए बाध्य किया। वे ऐसी क्रांतियां को 'सामाजिक क्रांति' न कहकर 'महल की क्रांति' कहते हैं जयप्रकाश नारायण द्वारा उपरोक्त प्रणालियों के आलोचना के मुख्यतः दो बिंदु रहें - पहला साध्य व साधन की एकरूपता का ना होना तथा दूसरा पश्चिम की भौतिकवादी दृष्टि में नैतिक मूल्यों की उपेक्षा।

उनके अनुसार संपूर्ण क्रांति का उद्देश्य प्रजातंत्र को मजबूती देना है ताकि आम लोग उसमें सीधे-सीधे शिरकत कर सके, राज को चलाने में उनका हाथ प्रत्यक्ष हो। अपनी डायरी में वे लिखते हैं की 'संपूर्ण क्रांति को शांतिपूर्ण ढंग से लाना है जिसमें प्रजातांत्रिक ढांचों को कोई नुकसान न पहुंचे और लोगों की प्रजातांत्रिक जीवन से बनी रहे[11] वे इस तथ्य को जानते थे कि हिंसक क्रांति से लक्ष्य को तुरंत पाया जा सकता है, परंतु अहिंसा द्वारा लाई गई क्रांति से समय लगती है क्योंकि सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया डायरी में आगे लिखते हैं कि 'क्योंकि क्रांति शांतिपूर्ण होगी उसके अचानक या तेजी से कुछ भी नहीं होना चाहिए यह क्रांति समय सापेक्ष है ज्यादा नहीं शायद एक या दो दशक[11] यह संघर्ष केवल सीमित उद्देश्यों के लिए नहीं हो रहा है इसके उद्देश्य तो बहुत दूरगामी हैं, भारतीय लोकतंत्र को 'रीयल' यानी वास्तविक तथा सुदृढ़ बनाना, जनता का सच्चा राज कायम करना, समाज से अन्याय, शोषण आदि का अंत करना, एक नैतिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक क्रांति करना, नया बिहार बनाना और अंततोगत्वा नया भारत बनाना है।[13]

जेपी ने भारतीय समाज व विशेषकर बिहार में व्याप्त सामाजिक-आर्थिक बुराइयों पर तीखी भर्त्सना की और जेपी आंदोलन तथा अनुयायियों का आह्वाहन करते हुए, उनसे सामाजिक बुराइयों के लिए परिवर्तनवादी समाधानों और समाज में आमूल परिवर्तन करने की सलाह दी। मोटे तौर पर उन्होंने हर प्रकार के शोषण और सामाजिक तथा आर्थिक असमानता को समाप्त करने के पक्ष में और चंद लोगों के सत्ता पर वर्चस्व को समाप्त करने के लिए शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में सत्ता के ढांचे को तोड़ने के पक्ष में थे। उन्होंने एक जाति विहीन और वर्ग विहीन समाज की स्थापना के लिए सामाजिक रीति-रिवाज और संस्थाओं के आमूल परिवर्तन पर भी जोर दिया। विशेष रूप से सांप्रदायिकता और जाति प्रथा के समाप्त होने, हरिजन और आदिवासियों के उत्थान और दहेज जैसी सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन पर उनका ध्यान रहा।[14] वहीं आर्थिक क्षेत्र में उन्होंने विशेषतः कृषि-भूमि का स्वामी कृषक के ही होने पर और इसलिए भूमि की उचित हदबंदी, हदबंदी कानूनों के सख्ती से कार्यान्वयन और अतिरिक्त भूमि को गरीब किसानों और भूमिहीनों के बीच वितरित करने पर भी जोर दिया। उन्होंने काश्तकारों, बटाईदारों, सीमांत और छोटे किसानों, खेतिहर-मजदूरों और शहर के गरीबों के लिए संघर्ष करने हेतु और बाद में शहरी मजदूरों को 'संघबद्ध' करने को कहा।[15] जेपी संपूर्ण क्रांति को समाज के लोकतांत्रिक ढांचे के नुकसान पहुंचा बिना तथा लोगों की लोकतांत्रिक जीवन पद्धति को प्रभावित किए बिना शांतिपूर्ण तरीके से लाना चाहते हैं उनके मस्तिष्क में संपूर्ण क्रांति की तस्वीर साफ थी उन्होंने अपने संपूर्ण क्रांति की परिकल्पना को साकार करने का भार युवा वर्ग पर डाला। उन्होंने 'यूथ फॉर डेमोक्रेसी' के साथ-साथ निर्दलीय छात्र-युवा संघर्षवाहिनी जैसी इकाइयों को स्थापित किया। जयप्रकाश की परिकल्पना थी कि अगर यह विचार हकीकत हुआ तो देश में एक विराट युवा शक्ति का उदय होगा और वह शक्ति अजेय होगी।[16]

वस्तुतः स्वातंत्र्योत्तर भारत में 1974- 75 का बिहार आंदोलन सबसे महत्वपूर्ण घटना होने के साथ-साथ जयप्रकाश नारायण के जीवन का भी एक निर्णायक पड़ाव था। इसने उन्हें अपने सामाजिक, राजनीतिक विचारों को जमीन पर उतरने का अवसर दिया। देश में जरूरी सामाजिक बदलाव लाने की उनकी प्रबल इच्छा थी। उन्होंने अपने लंबे राजनीतिक जीवन में कई क्रांतिकारी विचारों को अपनाया, लेकिन इसके साथ ही उन्होंने उच्च नैतिक सिद्धांतों को भी नहीं छोड़ा। भौतिक लाभ की जगह परोपकार और उदारता की श्रेष्ठता को कबूल किया। उन्होंने लिखित रूप में स्वीकार किया कि राज्यसत्ता की जगह सामाजिक सत्ता ही परिवर्तन का उपयुक्त उपकरण होगा। उनका अंतिम लक्ष्य- 'संपूर्ण क्रांति' अर्थात् जीवन के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सांस्कृतिक, शैक्षणिक और

अनुग्रह ज्योति

नैतिक क्षेत्र में बदलाव लाना था। उनका मानना था कि क्रांति सतत और हर क्षेत्र में साथ-साथ चलने वाली प्रक्रिया है और अन्य क्षेत्रों में बदलाव हुए बगैर कोई एक बदलाव नहीं हो सकता है इसी के चलते सिर्फ राजनीतिक और आर्थिक बदलाव पर जोर देने वाली विचारधारा असफल हुई है वे मानते थे कि एक झटके से क्रांति नहीं होती यह धीरे-धीरे और स्वतः पूरे समाज को बदलती है। निसंदेह बिहार आंदोलन के स्वर्ण जयंती वर्ष के अवसर पर संपूर्ण क्रांति विचारधारा की विवेचना व महत्ता को पुनः स्थापित करना जेपी व आंदोलनकारियों को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

संदर्भ :

1. आर. एन. द्विवेदी, ग्लिंम्प्सेज आफ जेपी मूवमेंट, विजय प्रकाशन मंदिर, वाराणसी,1989 पृष्ठ- 57
2. जयप्रकाश नारायण, सुधांशु रंजन, नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली, 2006, पृष्ठ-196
3. जेपी एक जीवनी, अजीत भट्टाचार्य, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2006,पृष्ठ- 167
4. जयप्रकाश नारायण, संपूर्ण क्रांति के लिए आवाहन, पृष्ठ- 41
5. आजादी के बाद का भारत, 1947- 2000, बिपिन चंद्र, दिल्ली, 2002, पृष्ठ -335
6. जयप्रकाश नारायण, सुधांशु रंजन, नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली, 2006, पृष्ठ-241
7. जयप्रकाश नारायण, टुवर्ड्स टोटल रिवॉल्यूशन, मुंबई, 1978,पृष्ठ-115
8. जियोफ्रे ओस्टरगाड, नॉन वायलेट रिवॉल्यूशन इन इंडिया, न्यू दिल्ली, 1985, पृष्ठ- 207
9. जयप्रकाश नारायण, प्रिजन डायरी, मुंबई, 1977, पृष्ठ -25
10. उपरोक्त
11. जयप्रकाश नारायण, प्रिजन डायरी, मुंबई, 1977, पृष्ठ -33
12. जयप्रकाश नारायण, प्रिजन डायरी, मुंबई, 1977, पृष्ठ -21 13.जयप्रकाश नारायणय संपूर्ण क्रांति के लिए आह्वाहन, पृष्ठ-41 14. वसंत नारगोलकर जे.पी.ज क्रुसेड फॉर रिवॉल्यूशन, 1975, पृष्ठ -215
15. जयप्रकाश नारायण,टुवर्ड्स टोटल रिवॉल्यूशन, सं- ब्रह्मानंद खंड-4,1978 पृष्ठ-77
16. बिहार वासियों के नाम जयप्रकाश जी द्वारा 27 जुलाई 1976 की लिखी चिट्ठी।

HYDROGEN as a promising fuel for future GENERATION

Hydrogen holds great promise as a clean, abundant, and versatile fuel for the future. With continued innovation and investment, hydrogen could play a pivotal role in transitioning to a more sustainable energy system.

Dr. Ratnesh Kumar
Assistant Professor
Dept. of Chemistry
A.N. College, Patna

Hydrogen is considered as the fuel of the future. Hydrogen is often touted as a clean energy carrier because when it is used in fuel cells to generate electricity, the only byproducts are water vapor and heat. Hydrogen is an energy carrier that can be used in internal combustion engines or fuel cells producing virtually no greenhouse gas emissions when combusted with oxygen. This makes it a highly attractive option for reducing greenhouse gas emissions and combating climate change. Unlike fossil fuels, which release carbon dioxide and other pollutants when burned, hydrogen fuel cells offer a way to produce electricity without contributing to air pollution or global warming. Hydrogen production and storage is currently undergoing extensive research. A solar-hydrogen system can provide the means of a totally emissions-free method of producing hydrogen. Although steam reformation of methane is currently the major route to hydrogen production, the emissions involved can also be controlled much more efficiently than our current system of transportation fuel.

Hydrogen is the most abundant element in the universe, primarily found in water and hydrocarbons like natural gas and methane. It is mostly found in compounds, so extracting it in its pure form requires energy. Nevertheless, advancements in technologies like electrolysis, which splits water molecules into hydrogen and oxygen using electricity, are making it increasingly feasible to harness hydrogen as a fuel source. One of hydrogen's most compelling features is its versatility. It can be used in a wide range of applications across various sectors. For instance, hydrogen fuel cells can

power vehicles, ranging from cars and buses to trains and even aircraft. In industry, hydrogen is used as a feedstock for processes like ammonia production, which is essential for manufacturing fertilizers and other chemicals. Moreover, hydrogen can be stored and utilized for grid-scale energy storage, helping to address the intermittent nature of renewable energy sources like wind and solar.

The ability to store energy is crucial for integrating renewable sources like wind and solar into the grid effectively. Hydrogen serves as a form of energy storage by converting surplus electricity into hydrogen through electrolysis, which can then be stored for later use or converted back into electricity when needed. This makes hydrogen an important component of a future energy system that relies more heavily on renewable sources. Hydrogen storage and transport is a critical issue involving intense research. The problem is the low density of hydrogen gas. Three possible solutions have been proposed. These potential hydrogen delivery systems include compressed tube trailers, liquid storage tank trucks, and compressed gas pipelines. One major disadvantage of each system is the high capital costs.

Many industries, such as steel and cement production, rely on fossil fuels and emit significant amounts of carbon dioxide. Hydrogen offers a pathway to decarbonize these hard-to-abate sectors by serving as a clean alternative to fossil fuels. By replacing coal or natural gas with hydrogen in industrial processes, emissions can be greatly reduced, helping to mitigate climate change.

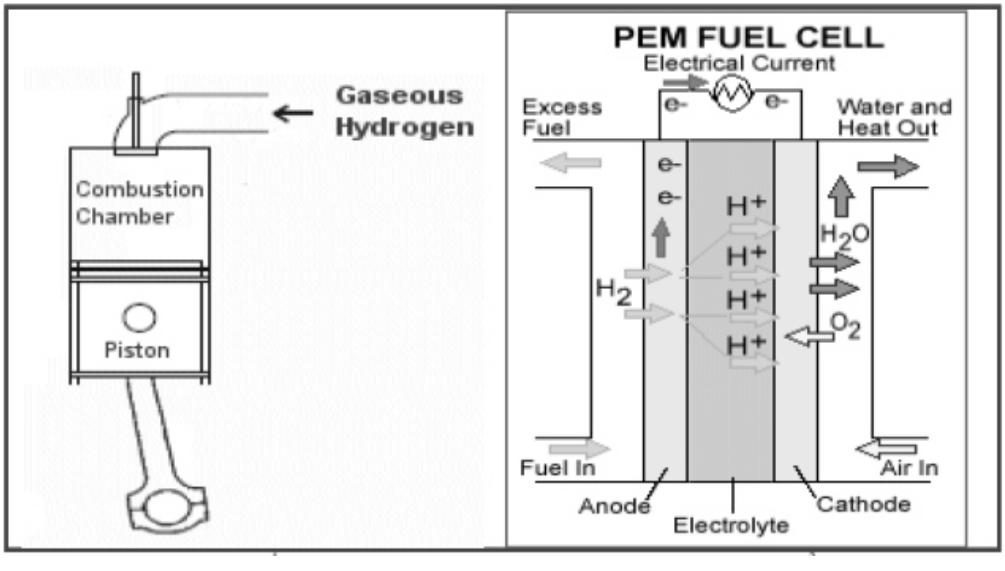

Figure 1 Schematic diagram of hydrogen generation in fuel cell

While the potential of hydrogen is immense, realizing its benefits requires significant investment in infrastructure. This includes building hydrogen production facilities, establishing distribution networks, and developing technologies for safe storage and handling. Governments, industries, and research institutions are collaborating to address these challenges and accelerate the deployment of hydrogen technologies worldwide. However, there are challenges to overcome, such as the energy-intensive process of producing hydrogen, often from natural gas through steam methane reforming (SMR) which emits CO_2, though advancements in electrolysis and renewable energy integration are addressing this. Additionally, there are safety concerns related to hydrogen storage and handling due to its high flammability. Despite these challenges, hydrogen holds great promise as a clean and versatile fuel for the future.

Overall, hydrogen holds great promise as a clean, abundant, and versatile fuel for the future. With continued innovation and investment, hydrogen could play a pivotal role in transitioning to a more sustainable energy system.

References

(1) U. Y. Qazi, Future of hydrogen as an alternative fuel for next generation for industrial applications, Energies, 2022, 15 (13), 4741.

(2) United States Department of Energy. Annual Energy Review 2017.

(3) T. N. Veziroglu, S. Sahin. 21st Century's energy: Hydrogen energy system. *Energy Conversion and Management*. 2018, *49*, 1820-1831.

(4) J.J. Baschuk, X. A. Li comprehensive, consistent and systematic mathematical model of PEM fuel cells. *Applied Energy*, 2009, *86*, 181-193.

(5) M. Balat. Potential importance of hydrogen as a future solution to environmental and transportation problems. *International Journal of Hydrogen Energy*. 2008, *33*, 4013-4029.

RUSSIA UKRAINE CONFLICT AND ITS IMPACT ON ASIA PACIFIC

The Russian act of aggression has threatened the balance of peace in Europe, the main arena of competition is now shifting to the Indo-Pacific region to determine the distribution of regional and global power.

Abstract : The ongoing conflict in Ukraine is a complex and multi-faceted issue with historical origins. Ukraine has borne its devastating consequences for almost a year now. Russia attempts to justify the war by citing its national security interests and portraying the offensive as necessary for the protection of the ethnic Russian population in eastern Ukraine. However, it has violated several international normative principles. The Russian act of aggression has threatened the balance of peace in Europe, the main arena of competition is now shifting to the Indo-Pacific region to determine the distribution of regional and global power. In the correlation of power dynamics between the US led West and China - Russia alliance, the central competition has moved to the idea of controlling rimland from the Mediterranean to the Indo-Pacific.Since China's attempts to dominate Asia-Pacific is

Dr. KAUSAR TASNEEM
Assistant Professor
Dept. of Political Sc.
A.N. College, Patna

unacceptable to the US and consider it as a real hegemon that can undermine regional imbalance and America's global domination in Asia-Pacific region overtime. An economically weak Russia could see its power projection decrease globally. This may be beneficial for NATO in the long term, allowing it to maintain its dominance in Europe and Asia Pacific.. However, the US increasing role in Europe through NATO should not be overlooked, as it can lead to the sidelining of the EU in shaping continental security in the long run.

Keywords : Global, Geo-Politics, NATO, Aggression, International Order.

With war in Ukraine persisting and no signs of an early termination of hostilities the global geopolitical equations are fast changing. At one level, US-led NATO partners are feverishly equipping Ukraine for the proposed spring offensive, even as Russian special operations are making incremental progress in the Donbas region. The US and its allies are clear that their combined challenge to the Russian invasion must sustain, to secure Europe from Russian aggression and to marginalise Russia both militarily and economically. This has in turn invigorated the China-Russia entente, driven by their shared concerns about the threat posed by the US-led international order dominated by the West. For Russia, it is NATO's progress towards its borders that poses existential threat. China is equally concerned with the US-led containment and confrontation strategy, aimed at constraining China's rise as a peer competitor in its strategic space along the Indo-Pacific rimland.

Whatever the outcome of the ongoing conflict in Europe, the main arena of competition is now shifting to the Indo-Pacific to determine the eventual distribution of regional and global power, reviving old geopolitical theories. The US-led West is seeking dominance over maritime space from the Euro1 persisting and no Atlantic to the Indo-Pacific, in line with Alfred Mahan's proposition of control of commercial sea lanes. On the other side is the China-Russia axis dominating the Eurasian heartland, in concert with Mackinder's hypothesis of control over the heartland as the basis of global dominance. In this correlation of power dynamics, the central competition is essentially over Spykman's idea of control over rimland, from the Mediterranean to the Indo-Pacific.

Against India, China is raising the ante in the high Himalayas along the disputed LAC both as means of coercion and to test the resolve of the US-led Indo-Pacific strategic architecture. Further, it is widening its alliance perimeters by inducting Russia as a credible strategic partner (Russian maritime doctrine gives primacy to the Indo-Pacific) and pushing North Korea towards muscle flexing through provocative missile tests in a message to the US, Japan.

China's attempts to shape the strategic space in the Indo-Pacific through its assertions and domination is the real cause of the US labelling China as a peer

competitor and a regional hegemon attempting to dominate Asia as a step towards its global ambitions. For the US, China's dominance of Asia is strictly unacceptable, as this will lead to a coalition of forces that can over time undermine regional order and America's global domination.

The main driver of the current convergence in China-Russia relations is the US's single-minded pursuit of unipolarity through NATO's expansion in Eastern Europe and the US rebalance to Asia. Both face similar pressures that include Western bullying over a wide range of issues that include governance, interference in their internal affairs and their legitimate regional interests.

While some governments across the Asia-Pacific consider the conflict in Ukraine as mainly a European war that the West should deal with themselves, but the immediate impact of the conflict on the Asia-Pacific is greater than most imagine. The prices of energy and food have dramatically increased and will most likely affect the food security of 1.6 billion people around the world this in turn will lead to greater regional instability and riots due to scarcity and shortages.

It is likely that Europe will see a recession, and that will have a negative impact on Asian exporters. Both China and India have signed special deals for cheaper energy coming from Russia. However, they are also major importers of Russian arms, and as the conflict costs more men and material, there could also be a reduction in Russian arms exports to the region.

The Russia-Ukraine war has brought to the fore the reality that an invasion of a country's sovereign territory is a very real possibility. There are growing concerns about

the chances of a regional conflict—over competing claims in the South China Sea or Chinese invasion of Taiwan. If we regress to a world where 'might is right', 2 small states would find it impossible to survive and also the usurping of the status quo in Ukraine could breed new dynamics to the usurping of the status quo in East Asia, be it over the South China Sea, Taiwan and the Senkaku / Diaoyu Islands.

India's Indo-Pacific push has been driven by a host of favourable factors - Southeast and East Asian powers to strengthen relations with India and renewed pivoting by the US and EU into the region to balance a rapidly rising China.

But as a nonaligned middle power India has warm relations with Russia and also an active border dispute with China, it does not have a geopolitical carte blanche in the Asia-Pacific. India's Indo-Pacific push was always tempered by concerns of a Chinese counter-push, an unpredictable relationship with the West, and to a lesser degree, Russian apprehensions about a growing Western presence in the region. India's commitment to liberal international values – the cornerstone of its partnership with the transatlantic powers and their regional allies – is also coming under growing scrutiny.

Russia's aggression against Ukraine is driven by a mix of geopolitical realism and political irredentism, could set an actionable precedent for big powers. For instance, China could appropriate it to rationalise its own expansionism in the Indo-Pacific by framing it as a direct response to Western expansionism. A possible replication of Russian aggression by the Chinese in Taiwan is already ringing loud in foreign policy and defence circles. China using the crisis to flex its muscles in the South China Sea (SCS) also loom large over concerned heads, announced military drills in the Gulf of Tonkin and issued a navigational warning in an area overlapping with Vietnam's Exclusive Economic Zone (EEZ).

For China, the real goal of the Indo-Pacific strategy is to establish an Indo-Pacific version of NATO. The prototype of an 'Asian NATO' has already taken shape through the AUKUS, Quad. On the other hand western sanctions on Russia is bound to hit its defence export markets, including in the IPR. with the war dragging on amid mounting human costs, Russia's regional defence clients [in the Indo-Pacific], with the exception of Myanmar, may find it difficult to ignore Russia's aggression — forcing them to rethink their strategic engagement with Moscow. A shrinking Russian presence as a prime arms supplier will most likely be replaced by a growing Chinese role in this domain, which would in turn strengthen Beijing's geopolitical influence in the region.

Russian actions are bound to stiffen the competition between the US, China and Russia in the Indo-Pacific. As its credibility and capacity to deliver weapons dwindle because of sanctions. Moscow will expand its attempt to earn the goodwill of ASEAN countries. China could posture more aggressively. In response, the US will double down

on its outreach to the region, which would in turn sharpen the Chinese reaction.

Consequently, middle powers like India could now find greater space to mediate the geopolitical environment in the Indo-Pacific and provide alternative foreign policy pathways. While the return of big power politics might seem inevitable to many, the world is already too deep into its moment of multipolarity. Even the big powers themselves cannot ignore the importance of geopolitical decentralisation. Further, the recent security pact that China inked with the Solomon Islands, which permits Beijing to deploy boots on the island, shows that the West cannot ignore the diverse interests of small nations in the IPR if it wants to deepen its footprint and balance a rising China.

India needs to capitalise on this moment in a meaningful way. The best way to do that is to strengthen its horizontal partnerships with ASEAN and Pacific island countries. For India, there is no substitute for constructive engagement that is premised on facilitating people-centric, bottom-up development that targets social and economic sectors left out by large-scale Chinese projects. Expanding its existing Quick Impact Projects (QIPs) and High Impact Development Projects (HADPs) in Myanmar and other Mekong region countries into other countries in ASEAN and beyond is a good idea.

Further, deepening collaboration with other regional powers who already share regional complementarities with India, like Japan and Australia. India needs to restart the Asia-Africa Growth Corridor (AAGC) initiative with Japan .

The US strategy identifies India as a like-minded partner and leader in South Asia and the Indian Ocean, connected to Southeast Asia, a driving force of the Quad and

other regional fora and an engine for regional growth and development. These were strongly reiterated in the recent India-US 2+2 meeting following which US President Biden stated ties with India is one of the most important in the world.

Although geographically limited to Eastern Europe and the Black Sea, the war in Ukraine is a major inter-state conflict that is likely to have long-term global ramifications, including the Asia-Pacific. One universal lesson is that unprovoked aggression and territorial conquest by major powers remains an active risk and a salient feature of international relations in the twenty-first century. Perceptions of military threat have thus deepened in the Asia-Pacific. While trends of higher defence expenditure in the region pre-dated Russia's invasion, deepening feelings of insecurity, driven in part by the war in Ukraine, may now accelerate these trends and lead to faster military modernisation and capability development. If Ukraine ultimately prevails, it will provide a considerable boost for the existing rules-based order in both Europe and the Asia-Pacific. By contrast, if Russia achieves some measure of victory, Moscow's gains in Ukraine will likely lead to a weakening of those same rules and norms in the Asia-Pacific, setting revisionist precedents from which China and North Korea are likely to benefit. While the war is unlikely to produce new flashpoints in Asia, it is already having direct impacts on regional 4 strategic alignments, defence policies, doctrines and equipment-purchase decisions. Whatever else happens, the growing strategic interplay between the Asia-Pacific and the Euro-Atlantic looks likely to endure long after Russia's conflict in Ukraine has concluded.

Conclusion

Although geographically limited to Eastern Europe and the Black Sea, the war in Ukraine is a major inter-state conflict that is likely to have long-term global ramifications, including for the Asia-Pacific.

The Ukraine-Russia war has multifaceted global impacts ranging from normative and geopolitical to purely economic. If not resolved, this conflict could continue for a long time violating various humanitarian laws, human rights and other international law provisions. This has pushed the world into introspection, forcing it to ponder the existing legal and non-legal structures on which it functions. It has also forced states to find alternatives for food and energy supplies. The reshuffling of international, political, economic and trade relations has become imperative for the world. Asia Pacific and Europe could work together to tackle the detrimental impact of this war, address each other's demands, ensure a supply of food, technology and labour and cooperate on trade-related matters.

While the war is unlikely to produce new flashpoints in Asia, it is already having direct impacts on regional strategic alignments, defence policies, doctrines and equipment-purchase decisions. Whatever else happens, the growing strategic

interplay between the Asia-Pacific and the Euro-Atlantic looks likely to endure long after Russia's conflict in Ukraine has concluded.

References:

- Ratha, Dilip and Eung Ju Kim (2022). *Russia-Ukraine conflict: implications for remittance flows to Ukraine and Central Asia.* KNOMAD Policy Brief 17. Global Knowledge Partnership on Migration and Development.
- Shankar, P.R (2022). *War in Ukraine:Impact on the Indo Pacific,* India Foundation.
- Rusland, Shaftdean (2023). *Russia-Ukraine Conflict:Implications to Asia Pacific Region.*
- Sahgal, Arun (2023). *The Ukraine War : Impact on Indo - PacificRegional Dynamics,* Delhi Policy Group.
- Gerstl, Alfred and Matej Simalcik (2022). *Mixed Reaction to the Russian War against Ukraine in the Indo-Pacific,* Kanard Adenauer Stifting ,Bratislava.
- Graham, Euan and James Crabtree (2023). *War in Ukraine and the Asia-Pacific Balance of Power,* IISS(International Institute for Strategic Studies). Saxer, Marc (2022). *The impact of the Ukraine war on Asia,*FES,Asia.
- United Nations (2019). *International Migrant Stock 2019*, Department of Economic and Social Affairs, Population Division.
- _____ (2022). *Global Impact of war in Ukraine on food, energy and finance systems.* Brief No.1, Global Crisis Response Task Team, 13 April.
- United Nations Economic and Social Commission for Asia and the Pacific (ESCAP) (2022). Economic and Social Survey of Asia and the Pacific 2022. Building Forward Fairer: Economic Policies for an Inclusive Recovery and Development.2022. Building Forward Fairer: Economic Policies for an Inclusive Recovery and

MAPPING THE DISPARITIES IN SPATIAL DISTRIBUTION OF HIGHER EDUCATION INSTITUTIONS IN BIHAR

Dr. Gaurav Sikka
Assistant Professor
Dept. of Geography
A.N. College, Patna

Dr. Prerna Bharti
Assistant Professor
Dept. of Geography
Patna University, Patna

Introduction

In the words of the renowned Economist John Kenneth Galbraith (1979) "Illiteracy is the cause of poverty" and education can be an instrument of change. Universities are known as the lighthouse of knowledge generation and enlightenment. Higher education is meant to inculcate the democratic values of equality, liberty, fraternity and skills needed to participate in effective democratic engagement among the youth. UNESCO's World Declaration on Higher Education for the 21st Century (1998) underlines the mission of Higher Education as training young people in the values that form the basis of democratic citizenship (Article 1e). It prepares young minds to become effective citizens by enhancing students' knowledge regarding issues about inequalities, poverty, discrimination, and injustices.

Higher education is now given importance in the international development agenda which is evident from the United Nations Sustainable Development (SDG) Goal 4 which aims, by 2030, "to ensure equal access for all women and men to affordable quality technical, vocational and tertiary education, including university".

University as an institution has a long history, starting as an educational establishment, later assuming the knowledge-creating (research) function and more recently the so-called third mission (engagement) (Ostlingst, 2018; Chankseliani and McCowan, 2021). In most contexts, universities were for the elites, educating them for religious, professional or administrative occupations. With the expansion of higher education participation, universities have acquired a larger potential for contributing to societal development (Chankseliani and McCowan, 2021).

The present research paper brings to the fore the disparities in the spatial distribution of higher education institutions in Bihar. The paper also presents comparative trends in the gross enrolment ratio in higher education in India and Bihar in order to present a backdrop of student enrolment in higher education institutions of Bihar.

The paper attempts to analyse the distribution of higher education facilities across the state to identify localities which are deprived of higher education facilities. Such

mapping of the localities, requiring the need to open additional higher education institutions, would help in maintaining a regional balance in terms of the availability of higher education institutions and, therefore, facilitate access to higher education by different sections of the population and ultimately meeting the United Nation SDG Goal 4 targets.

Objectives

- To understand the trends in GER in higher education in India and Bihar
- To identify the disparities in spatial distribution of higher education institutions in Bihar

Methodology

The research paper is exploratory and based on findings from secondary sources like the All India Survey on Higher Education report, Bihar Economic Survey reports, Bihar State Higher Education Council documents, research articles and reports on higher education.

Rationale of the study

It is imperative to study the Indian state of Bihar in the context that it ranked last on the SDG India Index 2020-21 released by the Government of India. According to the Multidimensional Poverty Index report (Niti Aayog, 2021), the poverty headcount ratio is 56 percent in rural Bihar and 24 percent in urban Bihar. A large part of Bihar's geographical area suffers from natural vagaries, its northern part is extremely flood-prone, while the southern part is drought-prone. Apart from this, every year, unaccounted thousands of students migrate from Bihar to cities like Delhi, Mumbai etc. for higher education. In such precarious situations, HEIs of Bihar have an extremely vital role in engaging with SDGs for its stakeholders and society at large. However, do we have enough institutions to cater the growing demographic dividend of Bihar? Does college density in Bihar meet the national benchmarks?

Trends in Gross Enrolment Ratio in Higher Education in India and Bihar (2017-18 to 2021-22)

Gross Enrolment Ratio (GER) is a fundamental indicator used to measure the levels of participation in higher education within a given population. It is calculated as the total enrolment in higher education, irrespective of age, expressed as a percentage of the eligible official population (18 to 23 years) in the appropriate age group.

The formula for calculating GER is:

GER = (Number of enrolled students/Population in corresponding age group) × 100

India has a gross enrolment of 28.4 in 2021-22, which has been increasing at a positive rate over the last 5 years. In other words, it indicates that nearly three of every ten individuals in the eligible age group are enrolled in higher education in India. However, it also shows that rest 62% of India's citizens are outside the higher education system.

The higher education sector in India has experienced an unprecedented expansion in

recent decades. India is now in the stage of massification in Higher Education with the aim of increasing Gross Enrolment Ratio (GER) to 50% by 2035 as per the National Education Policy 2020.

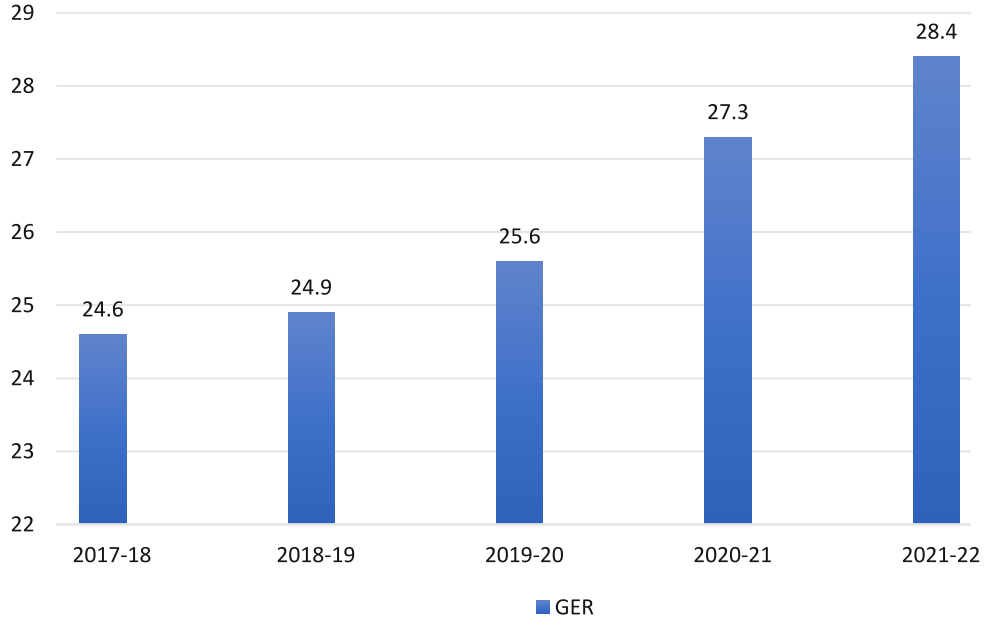

Figure 1: GER of Higher Education at All India Level

Data Source: AISHE, Government of India, 2021-22

Bihar is one of the most populous states of the country with the highest density of population among the major States of the country. The literacy rate of Bihar has improved significantly during the last decade, from 47.0 percent in 2001 to 61.8 percent in 2011. However, this is still below the national average. According to the All India Survey for Higher Education (2020-2021) report, the Gross Enrolment Ratio (GER) in higher education in Bihar is 15.4. Bihar has improved its past performance over the last 5 years but still far away to meet the national targets. There has been an increase of about 36 percent in the enrolment of students in higher education in Bihar as compared to last year. According to the data of AISHE 2120-2022, the enrolment of students in higher education in Bihar is 26,22,946, which was 1738432 in the AISHE 2019-2020 survey. According to AISHE 2021-2022, enrolment of about 8,84,514 students in higher education in Bihar has increased compared to AISHE 2019-2020 survey, in which enrolment of women has increased by 4,06,956.

Bihar's Status on GER during the last 5 years as per AISHE report			
Survey Year	BOYS	GIRLS	Total
2017-18	12.4	10.5	11.4
2018-19	12.4	10.7	11.6
2019-20	12.7	11.5	12.1
2020-21	16.6	15.1	15.4
2021-22	17.8	16.3	17.1

Spatial Distribution of Higher Education Institutions in Bihar

Presently, the State has fifteen traditional state universities including one open university, seven private universities, 277 constituent colleges, 307 affiliated colleges, 198 B.Ed. Colleges and 5 central universities and centrally funded higher education institutions.

The Government of Bihar has established 3 new Universities viz., Patliputra University, Munger University and Purnea University in 2018. Three more universities in the domain of Engineering, Medical and Sports are also being established. Since 2016, the state has established 110 new B.Ed. colleges, 80 new Nursing colleges, 45 new colleges for professional courses, 31 new Engineering colleges and 3 new Medical colleges. As a result, Bihar has added around 1.63 lakh seats in higher education institutions with the above efforts within the last 5 years.

Moreover, Government of Bihar has launched Mukhyamantri Kanya Utthan Yojana to improve Bihar's Gender Parity Index and make higher education accessible to girls. Mukhyamantri Kanya Utthan Yojana (Snatak) was launched in 2018 to provide one-time grant of Rs. 25000 after graduation. Till date 1.59 lakh female students have benefitted from the scheme. The grant amount has been increased to 50,000 from the academic session 2021-2022 onwards.

Mukhyamantri Balika Cycle Yojana provided free cycles for intermediate girl students enabling them easy access to higher education since 2007-08. Till 2020-21, 78 lakh female students have availed of benefits. (Rs 3842 crores). Another scheme of Student Credit Card Scheme was launched in 2017 as a flagship program to provide

financial support for upto 4 lakh at a minimum interest rate of 1% for girls and physically challenged and 4% for boys. The number of students who benefitted till date is 1,55,550. Apart from this, fess during admission for SC, ST and girls students has been waived off, for regular courses in all levels of higher education.

A centrally sponsored scheme- Rashtriya Uchchatar Shiksha Abhiyan (RUSA) launched in 2013 was a first attempt to expand higher education in a mission mode. RUSA attempts to help revive state initiatives in higher education and a total of 228 crores were spent on higher education institutions of Bihar.

Despite several efforts by the central government and state government, Bihar is still lagging behind on several parameters in higher education. In the context of college density, Bihar has only seven colleges per lakh eligible population (aged 18-23 years) against the national average of 31 which makes it hold the bottom position in the national tally. Karnataka (62), Telangana (53), Kerala (50), Himachal Pradesh (50), Andhra Pradesh (49) are the states with highest college density. It can be deduced that the number of existing colleges is not able to meet the increasing student enrolment in Bihar indicating a severe demand-supply mismatch creating a scenario of imbalance.

Figure 2 and 3 reflects the disparities in the spatial distribution of higher education institutions in Bihar. The picture is not encouraging because the majority of the districts of the state are within the lowest classification in terms of the presence of colleges. Seemanchal districts like Kisanganj, Araria and Supaul, other districts viz., Khagaria, Munger, Lakhisarai, Shehoar, Sheikhpura, Arwal and Gopalganj had the lowest concentration of higher education institutions in Bihar. On the other extreme are only two districts of Bihar viz., Patna and Nalanda have the highest concentration of colleges and universities. Other districts Darbhanga, Muzaffarpur, Vaishali, Gaya, Bhagalpur, Rohtas, Aurangabad, Vaishali, Bhojpur and Madhubani have high to moderate concentration of colleges.

It is necessary to highlight that 10 districts out of 13 districts identified as Aspirational Districts by Niti Aayog are having low concentration of colleges. These 10 districts are Sitamarhi, Araria, Purnia, Katihar Begusarai, Khagaria, Banka, Sheikhpura, Nawada , Jamui.

Further, 240 Blocks out of 545 blocks in the state are identified where no Higher Educational Institute is available.

An analysis will reveal that the market process has contributed to the widening of the regional disparities in the distribution of higher education institutions and enrolment in India. It seems the market process of expansions of higher education promotes regional concentration of institutions and thus conflicts with the equity considerations across the state. The private sector establishes institutions mostly in the urban and sub-urban areas which can attract a larger number of feepaying students, thus leading to an increasing rural-urban divide (Varghese, 2015).

Figure 2: Spatial Distribution of Higher Educational Institutions in Bihar

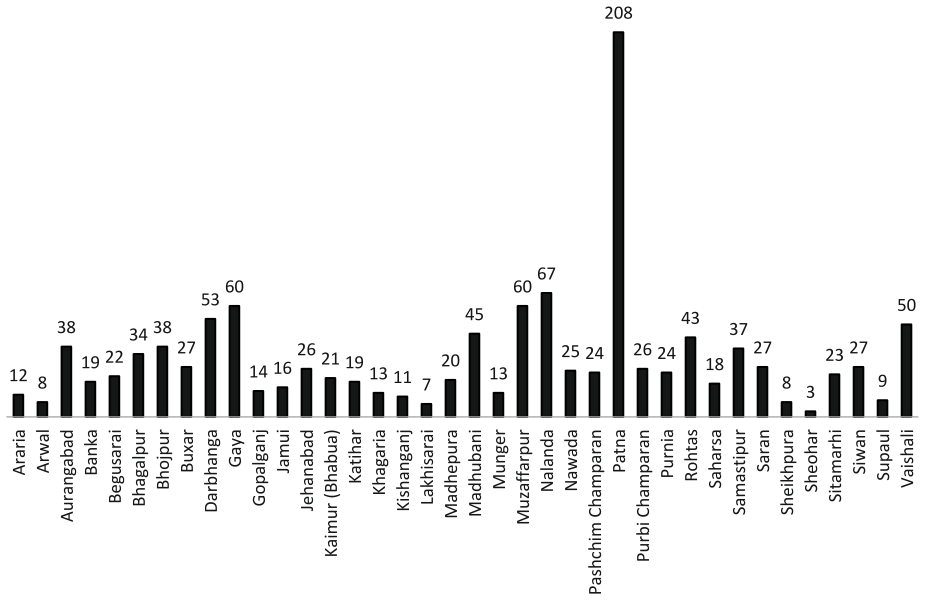

Figure 3: Number of colleges in different districts of Bihar

As discussed above, the growth and expansion of higher education is not uniform across the state. The establishment of institutions, perhaps, did not follow any state-level plan to ensure the minimisation of inequalities in the geographical distribution of higher education facilities. The expansion is driven by the pressure of social demand and urban bias supported by financial resources. Resultantly, certain regions of the state have been endowed more higher education institutions, while other regions were deprived of them.

Way Forward

- Growth of both public and private institutions is required, with a strong emphasis on developing a large number of outstanding public institutions in Bihar.
- Special status should be granted to the state of Bihar which will leverage substantial investment in a strong, vibrant public education system. Atleast one constituent college should be established in the districts having a low presence of colleges.
- Philanthropic/ Industry/ Community organisations should be invited to set up private university campuses in Bihar
- Efforts should be made for setting up community colleges. Community

colleges are expected to provide career oriented courses which enable graduates to directly enter the labour market. It may also provide an opportunity for secondary school graduates not getting admission to traditional universities and courses. These Community colleges will provide modular credit based courses that conform to the National Skills Qualification Framework.

- As mentioned in NEP, 2020 guidelines, there shall, by 2030, be at least one large multidisciplinary HEI in or near every district.
- It is expected that the Bihar State Higher Education Council will play an important role in the planning and management of higher education in the state by laying out a vision road map for higher education under Viksit Bharat 2047.

References

- AISHE (2017), All India Survey on Higher Education 2016-2017, Ministry of Human Resource Development, Government of India
- AISHE (2018), All India Survey on Higher Education 2017-2018, Ministry of Human Resource Development, Government of India
- AISHE (2019), All India Survey on Higher Education 2018-2019, Ministry of Human Resource Development, Government of India
- AISHE (2020), All India Survey on Higher Education 2019-2020, Ministry of Human Resource Development, Government of India
- AISHE (2021), All India Survey on Higher Education 2020-2021, Ministry of Education, Government of India
- AISHE (2022), All India Survey on Higher Education 2021--2022, Ministry of Education, Government of India
- Bihar Economic Survey 2022-23, Finance Department , Government of Bihar
- Bihar Economic Survey 2023-24, Finance Department, Government of Bihar
- Chankseliani, M., McCowan, T. Higher education and the Sustainable Development Goals. *High Educ* 81, 1–8 (2021). https://doi.org/10.1007/s10764-020-00652-w
- Galbraith, J.K., The Nature of Mass Poverty, Cambridge, Mass. (USA) Harvard Univ. Press 1979
- NEP (2020), National Education Policy-2020, Ministry of Human Resource Development, Government of India.
- Niti Aayog (2021), National Multi-Dimensional Poverty Index, Niti Aayog, Government of India
- Ostlingt, J. (2018), Humboldt and the Modern German University: An Intellectual History. Lund: Lund University Press.
- Varghese, N.V. (2015): "Challenges of Massification of Higher Education in India", CPRHE Research Papers 1, Centre for Policy Research in Higher Education. New Delhi: National University of Educational Planning and Administration

Nurturing Mental Health in Marriage and Strategies for Strengthening Relationship

Nurturing mental health in marriage is a journey of growth, resilience, and shared strength. By prioritizing self-care, effective communication and mutual support, couples can cultivate a relationship that thrives amidst life's challenges and triumphs. Remember, the strength of your marriage lies not only in your shared love and commitment but also in your capacity to understand, support, and uplift each other through the highs and lows of life's journey.

Dr. Pragya Kumari
Assistant Professor
Dept. of Psychology
A.N. College, Patna

Marriage is a union that requires continuous effort, understanding, and support from both partners. Within this framework, mental health plays a crucial role in shaping the dynamics of the relationship. In this article, we delve into the intricate interplay between mental health and marriage, exploring its impact, challenges, and strategies for fostering a healthy and resilient partnership.

In the context of marriage, mental health encompasses a broad spectrum of emotional, psychological, and social well-being, shaping how individuals perceive

themselves, relate to others, and navigate life's challenges. Within the context of marriage, the mental well-being of each partner profoundly influences the dynamics of the relationship. From managing stress and anxiety to coping with past traumas and navigating life transitions, the state of one's mental health can significantly impact communication patterns, conflict resolution strategies, and overall relationship satisfaction.

There are some impacts of mental health on marriage.

1. **Communication Dynamics :** Effective communication is the cornerstone of a healthy marriage, yet mental health issues can introduce barriers that hinder honest expression, emotional intimacy, and mutual understanding between partners. Conditions such as depression, anxiety, and unresolved trauma may lead to withdrawal, defensiveness, or misinterpretation of verbal and nonverbal cues, creating communication breakdowns that strain the relationship.
2. **Intimacy and Connection :** Mental health challenges can disrupt the emotional and physical intimacy shared between partners, leading to feelings of disconnection, loneliness, and sexual dissatisfaction. Issues such as low self-esteem, body image concerns, or sexual dysfunction may arise as symptoms of underlying mental health conditions, further complicating efforts to nurture intimacy and closeness within the marriage.
3. **Conflict Resolution and Coping Strategies :** Couples facing mental health challenges may encounter difficulties in resolving conflicts constructively and managing stress effectively. Maladaptive coping mechanisms such as avoidance, aggression, or substance abuse can escalate tensions and erode trust, perpetuating a cycle of relational distress and dissatisfaction.
4. **Parenting and Family Dynamics :** The impact of mental health extends beyond the

couple to influence parenting dynamics and family functioning. Parents grappling with mental illness may struggle to provide consistent support, structure, and emotional regulation for their children, contributing to disruptions in attachment, behaviour, and overall family cohesion.

There are some challenges in Addressing Mental Health in Marriage.

1. **Stigma and Shame :** Despite growing awareness and advocacy efforts, mental health stigma persists as a significant barrier to seeking help and disclosing struggles within the context of marriage. The fear of being judged, misunderstood, or labelled as "weak" may prevent individuals from opening to their partners about their mental health concerns, perpetuating feelings of shame and isolation.
2. **Communication Barriers and Misunderstandings :** Effective communication about mental health requires vulnerability, empathy, and active listening skills, yet many couples struggle to navigate conversations about sensitive topics such as depression, anxiety, or trauma. Misinterpretation of symptoms, invalidation of emotions, or dismissive responses can exacerbate feelings of distress and alienation, further straining the marital bond.
3. **Power Imbalance and Dependency :** In cases where one partner experiences severe or chronic mental health issues, power dynamics within the relationship may become skewed, with the other partner assuming roles of caregiver, protector, or decision-maker. This imbalance can lead to feelings of resentment, guilt, or co-dependency, undermining the autonomy and agency of both individuals within the partnership.
4. **Access to Resources and Support :** Disparities in access to mental health resources, including therapy, medication, and support groups, pose significant challenges for couples seeking help and support for mental health concerns. Financial constraints, limited availability of culturally competent services, and systemic barriers to care exacerbate existing disparities in mental health outcomes and treatment engagement.

Strategies for Promoting Mental Health and Resilience in Marriage.

1. **Open and Honest Communication :** Foster a safe and nonjudgmental space for discussing mental health concerns, encouraging active listening, empathy, and validation of each other's experiences. Practice effective communication skills such as "I" statements, reflective listening, and assertive expression of needs and boundaries.
2. **Seeking Professional Support :** Encourage both individual and couples therapy to address underlying issues, learn coping strategies, and strengthen relationship skills. Collaborate with mental health professionals who specialize in evidence-

based treatments for common mental health conditions, such as cognitive-behavioural therapy (CBT), mindfulness-based interventions, or interpersonal therapy.

3. **Prioritizing Self-Care :** Emphasize the importance of self-care practices, including regular exercise, adequate sleep, nutrition, and stress management techniques, to support mental well-being individually and as a couple. Set aside time for relaxation, leisure activities, and hobbies that bring joy and fulfilment to both partners.
4. **Cultivating Empathy and Understanding :** Practice empathy and compassion towards your partner's experiences, validating their emotions, and offering support without judgment or criticism. Educate yourself about mental health conditions, treatments, and community resources to better understand your partner's perspective and needs.
5. **Establishing Healthy Boundaries :** Define and communicate clear boundaries to protect each other's mental and emotional well-being, recognizing when to seek space or support from external sources. Balance the needs of the individual with the needs of the relationship, negotiating compromises and adjustments as necessary to maintain harmony and mutual respect.
6. **Nurturing Friendship and Intimacy :** Prioritize quality time together, engaging in activities that foster emotional connection, shared interests, and intimacy. Explore ways to enhance physical affection, sexual satisfaction, and romantic gestures that strengthen the bond between partners and deepen the sense of mutual affection and partnership.
7. **Building a Support Network :** Cultivate relationships with trusted friends, family members, or support groups who can provide additional emotional support, practical assistance, and perspective. Seek out community resources, online forums, or peer-led organizations that offer peer support, advocacy, and education related to mental health and relationship issues.

Nurturing mental health in marriage is a journey of growth, resilience, and shared strength. By prioritizing self-care, effective communication and mutual support, couples can cultivate a relationship that thrives amidst life's challenges and triumphs. Remember, the strength of your marriage lies not only in your shared love and commitment but also in your capacity to understand, support, and uplift each other through the highs and lows of life's journey. Together, you can build a marriage that not only endures but also flourishes, grounded in the transformative power of mental health awareness, compassion, and connection.

जन कवि नागार्जुन

डॉ. नवीन कुमार
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

नागार्जुन का साहित्य संसार बहुत ही विविध और व्यापक है, जिसमें कविता, उपन्यास, कहानी, निबंध, बाल-साहित्य और अनुवाद शामिल हैं। नागार्जुन की कविताओं में समाज के प्रति गहरी संवेदनशीलता, राजनीतिक चेतना और जनता के जीवन की सच्चाई का प्रतिबिम्ब मिलता है।

नागार्जुन, जिनका असली नाम वैद्यनाथ मिश्र था, हिन्दी और मैथिली भाषा के एक प्रमुख कवि और साहित्यकार थे। नागार्जुन का जन्म 30 जून 1911 को दरभंगा के तरौनी गाँव में हुआ था। इन्हें इनकी जनवादी और विद्रोही रचनाओं के लिए जाना जाता है। नागार्जुन को स्वतंत्र भारत के सच्चे जनकवि का दर्जा प्राप्त है।

नागार्जुन का साहित्य संसार बहुत ही विविध और व्यापक है, जिसमें कविता, उपन्यास, कहानी, निबंध, बाल-साहित्य और अनुवाद शामिल हैं। नागार्जुन की कविताओं में समाज के प्रति गहरी संवेदनशीलता,राजनीतिक चेतना और जनता के जीवन की सच्चाई का प्रतिबिम्ब मिलता है। उनकी कविताओं में अमीर-गरीब, मालिक-मजदूर, जमींदार-कृषक, उच्चवर्ग-निम्नवर्ग के द्वन्द्व दिखाई देते हैं। गरीबी, भूखमरी, बीमारी, अकाल, बाढ़ जैसे सामाजिक यथार्थ का चित्रण कवि ने किया है।

वे 'जन कवि' के रूप में प्रसिद्ध हुए क्योंकि उनकी कविताओं में आम जनता की आवाज और उनकी समस्याएँ प्रमुखता से उभर कर आती हैं। उनकी कविताओं में किसानों, मजदूरों, गरीबों और समाज के वंचित वर्गों की पीड़ा और संघर्ष को प्रमुखता दी गई है। जो कवि जनता के जितने अधिक निकट होता है, उसके सुख-दुःख का जितना अधिक भागीदार होता है, उसके संकट काल में उसका जितना सहायक होता है, उसे जितना अधिक मानसिक संबल और अवलंब प्रदान करता हुआ प्रतीत होता है, वही जन कवि कहलाने का सच्चा हकदार होता है। जन कविता सामाजिक परिवर्तन के लिए एक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली आधार हो सकती है।

जन कवि के काव्य का मुख्य लक्ष्य आम जनता की भावनाओं को व्यक्त करना और सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक या सांस्कृतिक मुद्दों पर ध्यान आकर्षित करना होता है। ये कवि अक्सर लोकप्रिय बोलचाल का प्रयोग अपनी कविता में करते हैं ताकि अपनी बात सार्वजनिक रूप से सुनाई जा सके। जन कवि की कविताएं सामान्यतः स्पष्ट, साधारण और संवेदनशील होती हैं जो आम लोगों के दिलों तक पहुँचती हैं। जन कविता अक्सर समाज को जागरूक करने, उसके अंदर की समस्याओं को उजागर करने और सकारात्मक परिवर्तन को प्रोत्साहित करने का काम करती है।

नागार्जुन का हृदय शोषित जनता से गहरा जुड़ा है। अपने को जनकवि घोषित करते हुए उन्होंने कहा-

"जनता मुझसे पूछ रही है क्या बतलाऊँ?
जनकवि मैं साफ कहूँगा क्यों हकलाऊँ?"

कवि की हैसियत से उन्होंने माना कि वे बिना हिचक के सामाजिक सत्य को जनता के सामने प्रस्तुत करूं।

अनुग्रह ज्योति

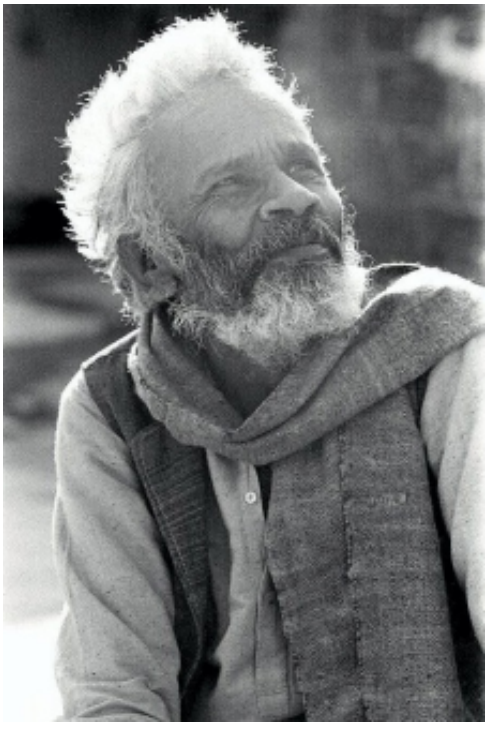

नागार्जुन का लेखन समाजवादी और जनवादी दृष्टिकोण से प्रेरित था। उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से शोषित और पीड़ित वर्गों की आवाज को साहित्य में स्थान दिया। उनकी रचनाओं में समाज के हर पहलू पर गहरी दृष्टि मिलती है, चाहे वह सामाजिक हो, आर्थिक हो या राजनीतिक। वे समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को भलीभांति समझते थे और अपनी लेखनी के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन की बात करते थे। नागार्जुन की रचनाओं में समाजवादी विचारधारा स्पष्ट रूप से झलकती है। वे मानते थे कि समाज में व्याप्त आर्थिक और सामाजिक असमानता को समाप्त करना आवश्यक है। उनकी रचनाएँ शोषण और अन्याय के खिलाफ विद्रोह की भावना से भरा हुआ है। वे मानते हैं कि समतामूलक समाज की स्थापना ही सामाजिक न्याय और शांति का मार्ग है।

नागार्जुन की कविताओं में जनवादी दृष्टिकोण प्रमुखता से उभरता है। उनकी कविता 'अकाल और उसके बाद' में उन्होंने अकाल के कारण किसानों की दुर्दशा का मार्मिक चित्रण किया है। इस कविता में भूख की स्थिति को चित्रित करते हैं। नागार्जुन का विश्वास है कि मनुष्य की सारी चेतना, सारे विचार और विधारधाराएँ तभी जन्म लेती हैं जब उनका पेट भरा होता है। भूखे पेट न ईश्वर का भजन होता है, न ही विचारधारा उत्पन्न होती हैं। कविता देखिए-

"कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास,
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पास,
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त,
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त"

एक और मार्मिक पंक्ति है-

"दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद,
धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद,
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद"

कविता में जो भूख दिखती है, वह सिर्फ मनुष्य की भूख नहीं है बल्कि उसके साथ वातावरण, परिवेश में शामिल अन्य प्राणियों की भी है।

नागार्जुन की कविता में शोषित, पीड़ित, जन समुदाय की व्यथा, बेबसी, भूख, गरीबी और तंगहाली का चित्रण है। 'घर से बाहर निकलेगी कैसे लाजवन्ती' कविता में इस दृश्य को देखा जा सकता है -

"फटे वस्त्र हैं घर से बाहर निकलेगी

कैसे लाजवन्ती,

शर्म न आती, मना रहे वे महँगाई की रज़त

जयन्ती''

नागार्जुन का साहित्यिक जीवन हमेशा विद्रोही और सत्ता के खिलाफ आलोचनात्मक रहा है। उन्होंने अपने समय की सरकारों और नीतियों की आलोचना की। सामाजिक अन्याय एवं विषमता के खिलाफ अपने लेखन को एक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया। अपने अनूठे अंदाज में समाज की सच्चाइयों को प्रस्तुत किया। नागार्जुन की कविता उस दौर की है, जब आजादी बिल्कुल करीब थी अथवा आजादी के बाद भी देश शासन व्यवस्था का रंग बदला-बदला सा बना हुआ था। नागार्जुन गहरी राजनीतिक दृष्टि रखते हैं। उनके लिए राजनीति का अर्थ है- संपूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिए लड़ाई, सत्ता का आनन्द लेना नहीं। जब-जब नागार्जुन को लगा कि राजनीति आमजन के हितों के विरूद्ध जा रही है या राजनीतिक दल जनता को धोखा दे रहे हैं।' तब-तब नागार्जुन की प्रखर संवेदनशीलता जनता के दिमाग को खोलने का काम करती है। नागार्जुन अपने समय की समाजिक व्यवस्था को बदलकर शोषण और दमन चक्र से मुक्त एक नये समाज की रचना करना चाहते हैं, जहाँ वर्ग संघर्ष ना हो-

''सब स्वतंत्र हो, सभी सुखी हो, सबका हो कल्याण

व्यक्ति-व्यक्ति विकसे, समाज का होवे नव निर्माण।''

नागार्जुन समाज को नेताओं की उन झूठी, चिकनी-चुपड़ी बातों, मीठे-मीठे आश्वासनों पर व्यंग्य करते हैं, वे लिखते हैं-

''चाहे दक्षिण, चाहे वाम,

जनता का रोटी से काम।''

नागार्जुन सच्चे जन कवि हैं और सच्चा जन कवि अपने आस-पास वाली घटनाओं से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। नागार्जुन के पास वह ठेठ निगाह है जो ताड़ने में अचूक है कि कौन नस कैसे फड़क रही है। नागार्जुन अपने साहित्य के माध्यम से समाज के गरीब लोगों की भावनाओं, आकांक्षाओं और संघर्षों को सामने रखा। वे सही मायनों में 'जन कवि' थें क्योंकि उनकी रचनाओं में जनता की पीड़ा, संघर्ष और उनके सपनों का सजीव चित्रण होता है। नागार्जुन जनता की सोच को अभिव्यक्ति देने वाले रचनाकार हैं। इनके साहित्य ने हिन्दी और मैथली साहित्य को एक नई दिशा दी, इन्हें हमेशा एक जनप्रिय कवि के रूप में याद किया जाता रहेगा।

संदर्भ सूचीः-

1. नागार्जुन का रचना संसार- विजय बहादुर सिंह
2. नागार्जुन जीवन और साहित्य- प्रकाशचन्द्र
3. हिन्दी साहित्य की जनवादी परंपरा- प्रो0 प्रकाशचन्द्र
4. बाबा नागार्जुन- नरेन्द्र कोहली
5. नागार्जुन रचनावली, भाग-2, शोभाकांत
6. आलोचना-43, अक्टूबर-दिसम्बर-2011

विकास की अवधारणा और आदिवासियों की अद्यतन स्थिति : एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. शत्रुध्न कुमार
सहायक प्राध्यापक
श्रम एवं समाज कल्याण विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

भारत ही नहीं पूरी दुनिया में जनजाति आबादी चौतरफा दबाव में है। कई जगहों पर तो वे लुप्त होने के कगार पर पहुंच चुकी है। ऐतिहासिक साक्ष्य बताते हैं कि खसरे जैसी बीमारी से 1967-1975 के बीच ब्राजील के रोराइमा में बसने वाले यानोमामी समुदाय विलुप्त होने के कगार पर पहुंच गया है। उनके आसपास के बाकी समुदायों की आबादी में भी 70 फीसदी की गिरावट आ गई। अंडमान-निकोबार द्वीप के आंग समुदाय का उदाहरण हमारे सामने हैं। जिनकी आबादी में भारी गिरावट देखी जा रही है।

आज की वर्त्तमान 21वीं सदी जहाँ दुनियाँ का नित्य नया स्वरूप, गलाकाट प्रतिस्पर्द्धा, तकनिकी ही विकास का मानदंड, मशीनीकरण के कारण कम मानव संसाधनों का उपयोग वैश्वीकरण उदारीकरण, निजीकरण के इस युग में यह बात साबित हो रही है कि यह विकास दुनिया के दीगर लोगों का है या विशेष वर्ग, क्षेत्र या राज्य विशेष का विकास है। इस नव उदारवाद, पूँजीवाद के नाम पर छद्म विकास के दौड़ में समाज के कमजोर तबके यथा दलित और दलितों में भी आदिम जनजाति (आदिवासी) के विकास की पड़ताल करना आवश्यक प्रतीत होता है कि समाज के कमजोर वर्गों में सबसे कमजोर इस वर्ग का विकास आजादी के इन 63 वर्षों के पश्चात भी कहाँ तक हुआ है। पहली पंचवर्षीय योजना से लेकर 11वीं पंचवर्षीय योजना तक के लम्बे सफर में उनके लिए किये गए तमाम आर्थिक प्रावधान के बावजूद भी उनका विकास समाज के अन्य तबकों के अपेक्षा कहाँ तक हुआ है, उनका एक तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक प्रतीत होता है।

दुनिया के 60 देशों से अधिक देशों में लगभग 150 मिलियन जनजातियाँ निवास करती है। जिनमे से संभवतः सबसे बड़ी संख्या (8 करोड़ 60 लाख) भारत में निवास करती है। परन्तु वे मानवीय सम्मान को प्राप्त नहीं कर पा रहे है। औपनिवेशिक काल से लेकर अब तक कई बार उन्हें भिन्न-भिन्न नामों से चिहिन्त या इंगित किया गया। यही नहीं उनके आध्यात्मिक और आर्थिक जीवन के संबंध में भी एक राय नहीं रहती। इन्हीं कारणों से संविधान निर्माता, भारतरत्न, बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संविधान में स्वयं के साथ हुए भेद-भाव, अपमान, शोषण एवं संघर्ष के कारण आरक्षण का समर्थन किया है। अपने साथ हुए पीड़ाजनित व्यवहार का उल्लेख करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा है कि "जब मेरे जैसा उच्च शिक्षा प्राप्त, योग्य व्यक्ति को भी इस सामाजिक व्यवस्था में अछूत माना जा सकता है तो उन लाखों, करोड़ों अछूतों की दशा तो और भी गई बीती होगी जो अशिक्षित एवं असभ्य है। दलित समाज की स्थिति को ध्यान में रखकर उन्होंने ब्रिटिश सरकार के आयोग के समक्ष कहा था कि दलितों को अल्पसंख्यकों की अपेक्षा ज्यादा राजनीतिक संरक्षण की आवश्यकता है। ...हमारी जनसंख्या के अनुपात में हमारे लोगों को आरक्षण प्रदान किया जाए। आयोग के प्रश्न के उत्तर में पुनः डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि मैं पूरे जोर से

कहना चाहता हूँ कि मेरे जैसे पढ़े-लिखे लोग भी महत्वपूर्ण नौकरियों में हों, और यह तभी सम्भव है जब हमें पर्याप्त आरक्षण प्रदान किया जाए।'' उनके विचार में दलित शोषित समाज के लोगों में सदियों से बैठी हीन भावना का समूल नाश करने के लिए ऐसा माहौल विकसित करने की आवश्यकता है जिससे 'सबका विकास, सबके साथ', सम्भव हो सके। डॉ॰ अम्बेडकर का भी विचार यही था कि केवल आराण से समस्याओं का समाधान सम्भव नहीं है। समाज को आर्थिक रूप से समृद्ध करने और समान अवसर प्रदान करने की आवश्यकता है, तभी वह समरूप और सशक्त हो सकेगा।

अमेरिका के उत्तरी डकोटा राज्य में सियु जनजाति का आंदोलन इन दिनों चरम पर है। उनका गुस्सा सरकार द्वारा प्रस्तावित तेल पाइप लाइन को लेकर है, इन कारणों से उन्हें अपनी जमीन का प्रदूषित होने और अपने धार्मिक स्थल को हाथ से निकल जाने का भय व्याप्त है। उनके आंदोलन से हमलोगों को भी सीख लेने की जरूरत है कि अगर कोई आदिवासी मानवीय अधिकारों की रक्षा को लेकर उग्र हो जाए तो उन्हें नक्सली, माओवादी या असभ्य नहीं कहना चाहिए बल्कि उनके जायज माँगों को मानवीय मूल्यों के आधार पर विश्लेषण कर उनके निदान का समुचित प्रयास किया जाना चाहिए। गत वर्ष 2016 दिल्ली में आयोजित नेशनल ट्राइबल कार्निवाल में एनडीए सरकार इस बात की वकालत करने में व्यस्त थी कि वह प्रकृति के कितने करीब है। सम्मेलन में माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने कहा कि ''आदिवासियों के जमीन छिनने का अधिकार इस देश में किसी को नहीं मिलना चाहिए।'' इसी सम्मेलन में आदिवासी बहुल छतीसगढ़ के माननीय मुख्यमंत्री श्री रमण सिंह ने भी अपने राज्य में आदिवासियों के कल्याणार्थ योजनाओं का वर्णन बढ़-चढ़ कर किया। मगर सच्चाई यह है कि छतीसगढ़ सरकार पर आदिवासियों को निशाना बनाने का कई बार संगीन आरोप लगे हैं। इस संबंध में माननीय सवोच्च न्यायालय तक सरकार की निंदा कर चुका है। अन्य आदिवासी बहुल राज्य झारखण्ड, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश और तेलेगाना जैसे राज्यों की कहानी भी इसी तरह है जहाँ विकास के नाम पर आदिवासियों के जायज माँगों यथा

मानवीय मूल्यों जैसे आपत्तियों को भी दरकिनार किया जा रहा है।

मई, 2014 में जनजातियों की सामाजिक-आर्थिक, स्वास्थ्य और शैक्षणिक स्थिति पर एक रिपोर्ट जनजातीय मामलों के मंत्राल को सौंपी गई थी। रिपोर्ट में स्वास्थ्य, शिक्षा, विकास और सशक्तिकरण जैसे पहलुओं पर अच्छी सिफारिशें थीं। मगर दुर्भाग्यपूर्ण है कि इसे अनदेखा कर दिया गया। ऐसा शायद इसलिए क्योंकि रिपोर्ट में 2013 के भूमि अधिग्रहण कानून की कई खामियों की ओर भी इशारा किया गया था। इसी कानून के प्रावधन 'सामुदायिक सहमति' को बेअसर करने की विफल कोशिश एनडीए सरकार ने एक के बाद दूसरे अध्यादेशों के जरिये की थी। रिपोर्ट यह भी कहती है कि सरकारी एजेंसियों की मंशा 'सार्वजनिक उद्देश्य' के नाम पर जमीनों का अधिग्रहण करके उसे निजी कपनियों के हवाले करने की होती है। सार्वजनिक-निजी भागीदारी के तहत अधिग्रहण एक तरह से पिछला दरवाजा ही है। क्या मोदी सरकार ने ठीक इसी नीति पर चलने की कोशिश नहीं की है या इससे अलग? इस सवाल का उत्तर हमलोगों को ही ढूँढ़ना होगा।

आज हमारी आबादी में 10 फीसदी भी आदिवासी नहीं हैं, भले ही संख्या के मामले में वे 10 करोड़ से ज्यादा हैं। आजादी के बाद विकास-परियोजनाओं के नाम पर विस्थापन का दर्द झेलने वालों में इनकी हिस्सेदारी 40 फीसदी है। खनन का दंश झेल रहे एक भले आदिवासी के शब्द मुझे आज भी याद हैं- 'हमें अपने देश के लिए कुर्बानी देनी पड़ेगी, यही लोकतंत्र है।' वाकई, आदिवासी सच जानते हैं जो उनके लिए कष्टदायक है।

आदिवासी समाज के अब तक के विकास का तुलनात्मक अध्ययन निम्न प्रकार है-

स्वास्थ्य-भारत सरकार के विभिन्न अध्ययनों द्वारा यह पाया गया है कि राष्ट्रीय औसत की तुलना में जनजातीय समुदायों में उच्च शिशु मृत्यु दर, पोषण का निम्न स्तर, निम्न जीवन प्रत्याशा जैसे सूचकांक बेहतर नहीं हैं। आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण जनजातीय समुदाय की स्त्रियों में उच्च प्रजनन दर इससे पैदा होने वाली स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ ज्यादा होती है। जनजातीय समुदाय में गरीबी और कुपोषण का स्तर परिवार के लड़के एवं लड़कियों पर समान रूप से पड़ा है। दोनों मामलों में शिशु मृत्यु दर तुलनात्मक रूप से अधिक है। 2001-2005

में राष्ट्रीय शिशु मृत्यु दर 55 प्रति हजार था। 2011में जनसंख्या के आँकड़े में शिशु मृत्यु दर () पर बहुत हद तक काबू पा लिया गया है। अनुसूची जाति में जन्म के एक साल के भीतर पैदा होने वाले बच्चों की प्रति हजार मृत्यु तो ज्यादा नहीं है परन्तु एक से चार साल के बीच होने वाली बाल मृत्यु दर ज्यादा है। इस मृत्यु दर में संतोषजनक सुधार न होने के कारण बच्चों में जरूरी टीकाकरण का आभाव है। अनुसूचित जनजाति के भीतर केवल 31 फीसदी बच्चों का जरूरी टीकाकरण हो पाता है। जबकि देश के अन्य वर्गों में बच्चों का टीकाकरण का दर 39.7 फीसदी है।

तालिका-1

अनुसूचित जनजाति में शिशु और बाल मृत्यु दर			
शिशु मृत्यु दर	बाल मृत्यु दर	5 साल के भीतर	मृत्यु दर
अनुसूचित जनजाति	62.1	35.8	95.7
अनुसूचित जाति	66.4	23.2	88.1
अति पिछड़ा वर्ग	56.6	17.3	72.8
अन्य	48.9	10.8	59.2

स्रोत-एनएचएफएस-3

शिक्षा का आभाव-स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही की सबसे बड़ी वजह अशिक्षा है। गाँधी जी कहते हैं कि अगर एक पुरुष को शिक्षा मिलती है तो वह एक व्यक्ति साक्षर होता है जबकि एक महिला को शिक्षा मिलती है तो सभ्यता साक्षर होती है। महिलाओं में अशिक्षा या स्कूल से वंचित रहने की सबसे बड़ी वजह गरीबी है। राष्ट्रीय परिवार एवं स्वास्थ्य सर्वे के आँकड़े बताते हैं कि बेहतर आया वाले परिवारों की महिलाओं और सबसे कम आय वाले परिवार की महिलाओं के स्कूल से वंचित रहने का फासला बड़ा है। तुलानात्मक रूप से जनजाति महिलाओं की शिक्षा के बारे में प्रदर्शन बहुत खराब है। 62 फीसदी जनजाति महिलाओं ने स्कूल तक नहीं पहुँच पानेवाली अनुसूचित जाति की महिलाओं का हिस्सा 51 फीसदी है।

तालिका-2

जनजाति समाज में साक्षरता		
वर्ष	अनुसूचित जनजाति	अन्य वर्ग
कुल	63.1 प्रतिशत	72.8 प्रतिशत
महिला	54.4 प्रतिशत	64.0 प्रतिशत
पुरुष	71.7 प्रतिशत	81.1 प्रतिशत

जनजति समाज में शिखा कमी से नई जानकारियों को आत्मसात नहीं कर पाता। जिन माध्यमों के जरिए जनजाति आबादी तक संदेश जाना चाहिए वहाँ तक समाज के हासिए वाले समुदाय की सीमित पहुँच है। 37.8 फीसदी जनजाति आबादी सूचना के माध्यम तक स्थाई पहुँच नहीं है। महिला और पुरुष के बीच जनसंचार माध्यमों तक पहुँच के बीच भी काफी फर्क है। 57 फीसदी जनजाति महिलाएँ हैं जो किसी भी किस्म का जनसंचार

माध्यम के संपर्क में नहीं आती हैं। जबकि 38 फीसदी पुरुष भी सूचना तंत्र से दूर हैं। इसका सीधा असर सरकार या निजी क्षेत्र के जरिए चलाए जाने वाले स्वास्थ्य कार्यक्रमों के प्रभाव पर पड़ता है।जानकारी के अभाव में जनजाति समुदाय बीमारियों से लड़ने और बचाव के आधुनिक तौर तरीकों से वंचित हो जाता है।

जो सांस्कृतिक प्रतिमान विशेष रुप से स्त्रियों के सवास्थ्य पर प्रभाव डालते हैं वे हैं-शादी, शादी के तरीके (एक-विवाह या बहु-विवाह), शादी की उम्र, प्रजनन और बच्चे के लिंग से संबंधित सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य, समाज में उस स्त्री की परिस्थिति, निर्णय लेने की क्षमता और सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं के आधार पर स्त्री से आदर्श भूमिका निभाने और कार्य करने की अपेक्षा करना (क्षत्रिय, 1992)।

किसी सरकार के लिए सबसे जरूरी होता है उसके पास समुचित आँकड़े हों। जिससे अनुसूचित जनजाति के स्वास्थ्य के मौजूदा हालात और योजनाओं की सही तरीके से लागू किया जा सके। इसमें सबसे आधारभूत जरूरत है जन्म का पंजीकरण और प्रमाण पत्र देना। पंजीकरण और जन्म प्रमाण पत्र के राष्ट्रीय औसत पर नजर डालें तो देश के पाँच साल से कम आयु के 41 फीसदी बच्चों के जन्म का पंजीकरण हुआ हैं। जिसमें 27 फीसदी बच्चों के पास जन्म प्रमाण पत्र है। कमजोर आय वाले परिवारों में केवल एक चौथाई बच्चों का पंजीकरण हुआ है जबकि हर दस में से केवल एक बच्चे के पास जन्म प्रमाण पत्र है। जनजातीय परिवारों के 39 फीसदी बच्चे पंजीकृत है जबकि 21.6 के पास जन्म प्रमाण पत्र है। इसमें सबसे खास योगदान मिजोरम कुल पंजीकरण 93.3 जैसे राज्यों में पंजीकरण का बेहतर रिकार्ड होना है। सिक्किम 85.4 और त्रिपुरा 74.4 जैसे राज्यों का प्रदर्शन तो दिल्ली 62.4 और हरियाणा 71.7 से बेहतर हैं।

खराब स्वास्थ्य के लिए गरीबी और आधारभूत सुविधाएँ जिम्मेदार-आर्थिक और सामाजिक जनसाख्यकीय हैसियत को देखें तो आदिवासी समूहों के भीतर बड़े पैमाने पर निर्धनता है। योजना आयोग के मुताबिक करीब जनजाति समूहों की आधी आबादी गरीबी रेखा से नीचे गुजर-बसर करती है। केवल 7-10 फीसदी जनजाति आबादी ऐसी है जिसकी महीने की आमदनी दस हजार रुपए है। तुलनात्मक रूप से अनुसूचित जनजाति समुदाय को आधारभूत सुविधाओं जैसे आवास, भोजन, ईंधन के लिए रोजाना जदोजहद करनी पड़ती है। आँकड़े बताते हैं कि केवल 40.6 फीसदी अनुसूचित जनजाति के पास सिर पर छप्पर यानी निवास है। जबकि बाकी समुदाय के 53. 1 फीसदी लोगों के पास यह सुविधा है। यही नहीं 77 फीसदी अनुसूचित जनजाति के रिहायसों के पास शौचालय नहीं है। इसी तरह 87 फीसदी अनुसूचित जनजाति के लोग खाना बनाने के लिए धुआँ पैदा करने वाले ईंधन इस्तेमाल करते हैं।

पर्यावास में बदलाव और विकास का असर-जनजाति समाज का बड़ा आर्थिक आधार जंगल से जुड़ा है। तेज आर्थिक विकास की दौड़ में वनों पर दबाव बढ़ा है। 1952 में सरकार ने पहली बार औद्योगिक विकास को ध्यान में रखते हुए वन नीति जारी किया। जिसमें वन के एक हिस्से को व्यवसायिक तौर पर कच्चे माल के रुप में इस्तेमाल की बात मानी गई। यहीं से जनजाति समाज का आधुनिक समाज के आर्थिक हितों के बीच संघर्ष शुरू हुआ। दोबारा 1988 में भारत सरकार नई वन नीति लेकर आई। जिसमें आदिवासियों को समस्या की जगह समाधान के रूप में देखा गया। बावजूद इसके वनों जंगल पर आधारित आदिवासियों की जीवन से जुड़ा पर्यावास और रोजी-रोटी नजरअंदाज होने लगी। सरकार की विकास परियोजनाएं, सरकारी और निजी औद्योगिक इकाइयों की

स्थापना, खनन, हाइड्रोइलेक्ट्रिक तथा सड़क और परिवहन की परियोजनाओं के चलते उन्हें अपने जंगल और जमीन से अलग होना पड़ा। यहीं से जनजाति समाज का शहरों की ओर पलायन शुरू हुआ। पारम्परिक दवाओं के अभाव और आधुनिक इलाज के तरीकों को आत्मसात न कर पाने से जनजाति समाज के स्वास्थ्य की हालत पर खराब असर पड़ा है।

जनजाति के लिए सरकारी प्रयास और योजनाएं-अनुसूचित जनजाति के स्वास्थ्य का सीधा संबंध उनके आर्थिक सशक्तीकरण पर टिका है। सरकार ने इस बारे में आजादी के बाद से चरणबद्ध तरीके से कई कार्यक्रम चलाया। तकरीबन सभी योजनाओं में अनुसूचित जनजाति के विकास को एक प्रमुख उद्देश्य के यप में चिन्हित किया गया। हालांकि अनुसूचित जनजाति में आर्थिक सशक्तीकरण सांस्कृतिक रूकावटों और परम्पराओं से लड़ते हुए हासिल करना था इसलिए इसमें देरी स्वाभाविक थी। धीमी प्रगति और नये रहन-सहन के हालात में बदलाव से जनजाति समूहों के लिए मानसिक और शारीरिक बीमारियाँ तेजी से फैलने लगी। जिसके बाद सरकार ने 1983 में घोषित राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के भीतर तत्काल प्रभाव से अनुसूचित जनजातियों के लिए खासतौर पर नीतिगत घोषणाएं की। जिसमें महामारियों से निपटने के लिए खास रणनीति और इंतजाम की बात कही गई। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने 1981 में अलग से जनजाति विकास योजन सेल बनाया। जिसमें इस समाज के लिए घोषित योजनाओं की देखरेख और सही तरीके से लागू कराने की गारंटी दी जा सके। जनजाति समूह सुदूर पहाड़ों, जंगलों और गाँवों में बसते हैं इसलिए मंत्रालय ने उप-स्वास्थ्य केंद्र खोलने वाले नियमों मे खासतौर पर ढ़ील दी। पहाड़ी क्षेत्रों में उपकेंद्र स्थापित करने के लिए कम से कम 3 हजार की आबादी की शर्त कर दी गई। यह शर्त मैदानी इलाकों के लिए 5 हजार थी। ठीक इसी तर्ज पर प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (पीएचसी) के लिए आबादी की शर्त 20 हजार की गई जबकि मैदानी इलाकों में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के लिए कम से कम 30 हजार की आबादी जरूरी

थी। पहाड़ी और जनजाति इलाकों के लिए सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र खोलने की सीमा को 60 हजार किया गया। इस मामले में भी मैदानी इलाकों के लिए शर्त एक लाख बीस हजार आबादी की थी। इसी तरह जनजाति बहुल इलाकों में बहुउद्देशीय कायकर्ता रखने की शर्त भी तीन हजार थी। न्यूनतम जरूरी कार्यक्रम के तहत जनजाति इलाकों में 1999 तक 20,769 उपकेंद्र 3286 प्राथमिक स्वास्यि केंद्र और 541 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र खोले गए।

इसके अलावा केंद्रीय योजना समिति ने स्वास्थ्य सुविधाओं को पहुंचाने के लिए सुदूर जनजातीय इलाकों की पहचान की जिसमें 13 राज्यों के 52 जिले शामिल थे। राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम के साथ जापानी बुखार, कालाजर, फाइलेरिया जैसी बीमारियों को रोकने के लिए विशेष प्रयास किए गए। इसमें केंद्र की ओर से राज्यों को कुल खर्च का 50 फीसदी भुगतान करने का फैसला किया गया। मलेरिया नियंत्रण के लिए विश्व बैंक की सहायता से 100 जनजाति जिलों की पहचान की गई जिसमें मध्य प्रदेश, बिहार, गुजरात, महाराष्ट्र और ओड़िसा जैसे जिले शामिल थे।

केंद्र सरकार ने जनजातीय इलाकों कें कुद निवारण के लिए कार्यक्रम की शुरुआत की। इस योजना के दायरे में देश का पूरा जनजातीय क्षेत्र शामिल था। जनजाति समूहों को सबसे ज्यादा उम्मीद 2005 में शुरू की गई राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य योजना से है। जिसका खास उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराना है। इसके तहत गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाली महिलाओं के लिए जननी स्वास्थ्य योजना काफी कारगर साबित हुई। 19 साल से ज्यादा की महिला अगर किसी अस्पताल में बच्चे को जन्म देती है तो उसे 700 रुपये देने का प्रावधान ळें घर पर बच्चा पैदा होने की हालत कें 400 रुपये दिया जाता है। हालांकि एनआएचएम के सामने जनजाति समाज के स्वास्थ्य को लेकर ठोस आंकड़ों का अभाव ळे। बावजूद इसके एनआरएचएम ने माना है कि स्वास्थ्य सेवाओं की जरूरत जनजाति समाज की महिलाओं को सबसे ज्यादा है।

सरकार ने स्वास्थ्य सुविधाओं के साथ कई आर्थिक योजनाएं भी शुरू की। 1951 से अनुसूचित जनजाति के लिए विशेष प्रयास शुरू हुए। इसके बाद 1956 में पंचशील सिद्धांत को अपनाया गयां जिसमें जनजाति समाज के विकास के लिए पांच दिशानिर्देशों को चिन्हित किया गया। जनजाति विकास को तेज करने के लिए 1961 में सरकार ने बहुउद्देशीय जनजाति विकास ब्लॉक खोल दिया। पांचवी पंचवर्षीय योजना में अलग से ट्राइबल सब प्लान की शुरुआत की। इसका उद्देश्य विकास की सीधे जनजाति समाज तक पहुंचाना था। केंद्र और राज्य जनसंख्या के आधार पर कोष मुहैया कराना शुरू किए। जिससे कलयाणकारी और विकास योजनाओं को कारगर तरीके से लागू किया जा सके। छठी योजना (1980-85) में जनजाति विकास के मद में पैसा बढ़ाया गया ताकि 50 फीसदी आबादी गरीबी रेखा से ऊपर उठ सके। जबकि सातवीं योजना में विकास के लिए आधारभूत संरचना पर

जोर डाला गया। इस योजना में शिक्षा पर जोर डाला गया और अनुसूचित जनजाति के आर्थिक विकास के लिए दो महत्वपूर्ण संस्थानों की नींव डाली गई। 1987 में ट्राइबल कोऑपरेटिव मार्केटिंग डेवलपमेंट फेडरेशन और 1989 में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति वित्त और विकास निगम खोला गया। टीआरआईएफईडी जहां राजय जनजाति विकास कोरपोरेशन की उच्च बॉडी बना वहीं एनएसएफडीसी का शुरुआती मकसद जंगल और कृषि उत्पाद का बेहतर मूल्य दीलाना ाि जो बाद में रोजगारपरक कर्ज देने का काम भी करने लगा। आठवीं योजना (1992-1997) में जनजाति समाज और बाकी वर्गों के बीच की खाई को भरने का संकल्प लिया गया। अनुसूचित जनजातियों के शोषण को रोकने के अलावा अधिकारी की गारंटी दिलाने पर भी जोर दिया गया। इसमें जमीन से बेदखली रोकने, न्यूनतम मजदूरी, जरूरतमंद अल्प जंगली उत्पादों को इक्ट्ठा करने जैसे अधिकार शामिल थे। नौंवी योजना (1997-2002) खासतौर पर जनजाति मामलों के मंत्रलय ने कई नई योजनाएं शुरू की गई।

निष्कर्ष- भारत ही नहीं पूरी दुनिया में जनजाति आबादी चौतरफा दबाव में है। कई जगहों पर तो वे लुप्त होने के कगार पर पहुंच चुकी है। ऐतिहासिक साक्ष्य बताते हैं कि खसरे जैसी बीमारी से 1967-1975 के बीच ब्राजील के रोराइमा में बसने वाले यानोमामी समुदाय विलुप्त होने के कगार पर पहुंच गया है। उनके आसपास के बाकी समुदायों की आबादी में भी 70 फीसदी की गिरावट आ गई। अंडमान-निकोबार द्वीप के आंग समुदाय का उदाहरण हमारे सामने हैं। जिनकी आबादी में भारी गिरावट देखी जा रही है। 1900 में आंग की आबादी 670 थी जो 1961 में 169 पर आ गई। 1991 के उपलब्ध आंकड़ों के मुताबिक अब केवल 70 लोग ओंग समुदाय के बचे है। ओंग अंग्रेज शासन के समय से कई बीमारियों से लड़ते रहे। वे खासकर खसरा और इनफ्लुएंजा के शिकार बनते गए। आजादी के बाद भी ओंग समुदाय में 170 बच्चे पैदा हुए और उनमें से कोई भी दो साल उम्र पूरी नहीं कर सका। ऐसे में भारत सरकार ने उन्हें स्ट्रेट आईलैंड पर बसाने की योजना बनाई। जहां उन्हें सरका घर खाना और कपड़ा मुहैया करा रही है। बावजूद इसके वे बड़े स्तर पर तपेदिक के शिकार बन रहे हैं।

इसलिए यह साफ है कि अनुसूचित जनजाति के स्वास्थ्य के बेहतर बनाने की पहली शर्त यही है कि आर्थिक विकास से जोड़ने के लिए बेहद संवेदनशील रवैया अपनाना होगा। यह समझना होगा कि एक आबादी जहां रहने के लिए अभ्यस्त थीं तो वह केवल उनके लिए एक घर नहीं था। वे रोजी-रोटी उनके लिए किसी आयातित उत्पाद पर निर्भर नहीं होते हैं। बीमारियों का इलाज पारंपरिक और फूल-पौधों के जरिये करते है। जो अपनी जहां से बेदखल कर दिए जाते हैं। उन्हें मानसिक और शारीरिक झटके के साथ-साथ सांस्कृतिक बिखराव का समापना करना पड़ता है। इसलिए विकास के मॉडल में जनजाति समुदाय से जुड़े पहलुओं को शामिल करना बेहद जरूरी है। यह सभ्यता की दरकार है कि वे विकास में पीछे छूट चुकी अपनी आबादी को बचाए।

हीट वेव

मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

बिहार राज्य में जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में एक समग्र अध्ययन।

डॉ. कविता राज
सहायक प्राध्यापक
स्नात्तकोतर, लोक प्रशासन विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

विश्व मौसम विज्ञान संगठन (WMO) ने अपने बयान में संकेत दिया है कि 2011-12 के बाद से विश्वस्तर पर तापमान लगातार बढ़ रहा है। ऐसा अनुमान है कि गर्म लहरें 21वीं शताब्दी में पूरे भूस्थल पर पूरी तीव्रता डालेगी और तहस-नहस कर डालेगी। इतना ही नहीं गर्मी की तीव्रता के कारण कई आपदाओं का सामना करना पड़ेगा जैसे बाढ़, चक्रवाती, तुफान, सूखा, अव्यवस्थित मौसम और बारिश जो पूरी मनुष्य जाति, पशुओं तथा पौधों को भी नुकसान पहुँचाएंगी अंततः कृषि व्यवस्था तथा उसके कारण अर्थव्यवस्था स्वतः प्रभावित होती चली जाएगी।

हीट वेव यानी गर्म हवाओं को "मौन आपदा" भी कहा जाता है। क्योंकि यह धीरे-धीरे विकसित होता है और देशभर में मनुष्यों को मौत के मुँह तक पहुँचाता है। जलवायु में हो रहे लगातार परिवर्त्तन के कारण वैश्विक स्तर पर गर्म लहरें बढ़ रही है। भारत में भी और विशेषकर बिहार में हर वर्ष पिछले वर्षों की तुलना में इस कहर की अधिकता को महसूस किया जा रहा है। उच्च आर्द्रता और परिणामी वायुमंडलीय स्थितियों के साथ संयुक्त चरम तापमान, गर्म मौसम में रहने वाले लोगों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं जिससे शारीरिक तनाव होते हैं, कभी-कभी मौत भी होती है। चरम और असुविधाजनक गर्म मौसम मानव और पशु स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकता है और साथ ही सामुदायिक आधारभूत संरचनाओं जैसे कि बिजली आपूर्ति, सार्वजनिक परिवहन और अन्य आवश्यक सेवाओं और आग की बढ़ती घटनाओं में बड़ी झुग्गी और ग्रामीण क्षेत्रों में बड़ी बाधा उत्पन्न होती है। बिहार राज्य में जलवायु परिवर्तन के के कारण मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव का अध्ययन प्रासंगिक है।

मानवीय क्रियाओं से प्रेरित विपदाएँ पर्यावरण के साथ मनुष्य के पारस्परिक क्रियाओं का परिणाम हैं। इनके अंतर्गत प्रौद्योगिकीय विपदाएँ आती हैं, जो कि ख़तरनाक पदार्थों जैसे कि रेडान, पारा, ऐसबसटस फाइबर (Asbestos Fibers) और कोयले की धूल के संपर्क में आने से घटित होती हैं। तेज़ाब की बारिश, वातावरण या पृथ्वी के जल का हानिकारक पदार्थों द्वारा दूषितकरण और सम्पूर्ण भूमण्डलीय तापमान में वृद्धि या ग्लोबल वार्मिंग (Global Warming), ये सब मानवीय क्रियाओं से प्रेरित विपदाओं का परिणाम है।

गर्म लहरें या हवा यानी हीट वेव स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, पारिस्थितिकी तंत्र और अर्थव्यवस्था सहित विभिन्न क्षेत्रों पर भी प्रभाव डालता है। आमतौर पर स्वास्थ्य पर गर्म लहरों के कारण होने वाले प्रभाव हैं- निर्जलीकरण, गर्मी, ऐंठन, गर्मी से होने वाली थकावट और हीट स्ट्रॉक इत्यादि। गरीब किसान, दैनिक मजदूर, निर्माण तथा परिवहन क्षेत्रों में काम करने वाले कामगार, ये सभी मौसम के इस स्वरूप से अधिक प्रभावित होते हैं क्योंकि इनके काम करने का महौल सूरज के सीधे संपर्क में होता है। अन्य प्रभावों में गर्म हवाओं से आर्थिक नुकसान भी होता है तथा कृषि की असफलता और बिजली की अत्याधिक खपत भी इसके कुप्रभाव ही है। "शहरी गर्म द्वीप" प्रभाव के कारण शहरों और शहरी क्षेत्रों के आस-पास के इलाकों की तुलना में अधिक गर्मी अनुभव की जाती है। यही वजह है कि ग्रामीण इलाकों की अपेक्षा शहरों का तापमान 3.5-120c अधिक पाए जाते हैं। मानव गतिविधियों ओर ठोस भवनों के कारण गर्म हवाओं का आवागमन बाधित होता है जिससे ग्रामीण इलाकों की अपेक्षा शहरी क्षेत्र जल्दी ठंडे नहीं हो पाते हैं। बिहार राज्य भी इसका कोई अपवाद नहीं है। वर्ष 2005 से ही राज्य में गर्म हवाओं की स्थितियाँ असामान्य रही है। बिहार में भी बढ़ती गर्मी की तीव्रता को महसूस किया गया है और मनुष्य तथा पशुओं सभी पर इसके दुष्प्रभाव देखने को मिले हैं। बुखार के कारण मौतों की संख्या बढ़ी है। पशुओं पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को दुर्भाग्यवश दस्तावेजित नहीं किया गया जो हैं वो अपर्याप्त है।

विश्व मौसम विज्ञान संगठन (WMO) ने अपने बयान में संकेत दिया है कि 2011-12 के बाद से विश्वस्तर पर तापमान लगातार बढ़ रहा है। ऐसा अनुमान है कि गर्म लहरें 21वीं शताब्दी में पूरे भूस्थल पर पूरी वीव्रता डालेगी और तहस-नहस कर डालेगी। इतना ही नहीं गर्मी की तीव्रता के कारण कई आपदाओं का सामना करना पड़ेगा जैसे बाढ़, चक्रवाती-तुफान, सूखा, अव्यवस्थित मौसम और बारिश जो पूरी मनुष्य जाति, पशुओं तथा पौधों को भी नुकसान पहुँचाएंगी अंततः कृषि व्यवस्था तथा उसके कारण अर्थव्यवस्था स्वतः प्रभावित होती चली जाएगी।

मनुष्य का प्राकृतिक पर्यावरण के साथ-साथ गहन साहचर्य रहा है। यद्यपि मनुष्य विभिन्न प्राकृतिक घटनाओं से संकट में पड़ता रहता है, फिर भी पृथ्वी के कई भौतिक एवं जैविक तंत्रों में वह नियंत्रणकारी शक्ति की भूमिका

निभाता रहा है। हजारों वर्षों से भौतिक पर्यावरण एक यथेष्ट सीमा तक मनुष्य के प्रगति की दिशा और सीमा तय करता रहा है। मनुष्य अपनी सुविधा के अनुसार अपने भौतिक पर्यावरण से छेड़छाड़ करने में समर्थ हो चुका है, जिसके कारण मानव जाति के साथ-साथ अन्य जीव-जंतुओं पर इसके विनाशकारी प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते रहे हैं। आज विश्व में इसका दुष्परिणाम जलवायु परिवर्तन के रूप में सामने आया है। पर्यावरण पर हो रहे लगातार प्रहार के कारण जलवायु परिवर्तन की समस्या सामने आ रही है।

पृथ्वी का औसत तापमान 18वीं शताब्दी के बाद से अब तक 0.6 डिग्री सेंटीग्रेड तक बढ़ गया है, जो सन् 2100 तक 9.58 डिग्री सेंटीग्रेड तक बढ़ जाने की संभावना है। पिछले 20 वर्षों में तापमान केवल मानव गतिविधियों के कारण ही बढ़ा है। अतः सहज ही समझा जा सकता है कि पृथ्वी पर सन्निकट पर्यावरणीय संकट एवं जलवायु परिवर्तन के लिए अगर कोई दोषी है तो वह केवल मानव ही है। पूर्व संयुक्त राष्ट्र महासचिव बान की मून ने कहा भी था कि जलवायु परिवर्तन से दुनिया को युद्ध जितना ही खतरा है। जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर अपने पहले भाषण में बान की मून ने कहा था कि पर्यावरण में बदलाव भविष्य में युद्ध और संघर्ष की बड़ी वजहें बन सकते हैं। विश्व में सबसे अधिक ग्रीन हाउस गैस छोड़ने वाले अमेरिका से अपील की कि वह ग्लोबल वार्मिंग के खिलाफ अभियान का नेतृत्व करे।'' मानव युद्ध से अधिक खतरा ग्लोबल वार्मिंग से है, इसलिए पर्यावरण रक्षा के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर समस्त राष्ट्रों के बीच बेहतर समन्वय की जरूरत है।

इस संकट का सबसे बड़ा कारण सभ्यता, विकास और औद्योगिकरण के लिए कोयले और पेट्रोलियम पदार्थों जैसे फासिल फ्यूएल्स का अंधाधुंध उपयोग, जनसंख्या वृद्धि, जल का बेहिसाब उपयोग, वनों की अंधाधुंध कटाई, वायुमंडल का सुरक्षा कवच ओजोन परत, जो सूर्य के खतरनाक रेडिएशन को रोकता है, उसका खतरे में पड़ना, जीव-जंतु का लगातार कम होना, ये सब ऐसे कारण हैं, जिससे विश्व का मानव समुदाय भयाक्रांत है। इस समस्या के समाधान के लिए पूर्व में बर्सिलोना तथा क्योटो शहर में तमाम देशों की बैठकें हो चुकी हैं। भारत ने भी ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में स्वेच्छा से कटौती का फैसला ले लिया है।

गर्म हवा/लू की परिभाषा

आई0 एम0 डी0 के अनुसार गर्म हवाएं वह स्थितियाँ है जब तापमान सामान्य से 4.5-6.4 डिग्री सेंटीग्रेड अधिक होता है। मैदानी क्षेत्रों में अधिकतम तापमाम 40 डिग्री सेंटीग्रड से अधिक तापमान समतुल्य है 102 डिग्री फॉरेनहाइट बुखार जिससे मनुष्य अधिक संवेदनशील होता है। यह शरीर की क्षमता को तोड़ देता है।

गर्म हवा या हीट वेव की स्थिति मैदानी भागों में 40^{0} डिग्री सेन्टीग्रड या उससे अधिक तथा बर्फीले जगहों पर 30^{0} डिग्री सेन्टीग्रड या उससे अधिक होता है। गर्म हवाएं वायुमंडलीय तापमान की वह स्थिति है जिससे शारिरिक तनाव बढ़ता है और मानव-जीवन को समाप्त करने को होता है। गर्म हवाओं की स्थिति को उस प्रकार परिभाषित किया गया है कि लगातार 2 दिनों तक जब सामान्य तापमान से 3 डिग्री सेन्टीग्रेड या उससे अधिक तापमान में वृद्धि हो तब हीट वेव कही जाएगी।

गर्म हवाओं/लू की स्थितियाँ (आई.एम.डी. के अनुसार)

आई0 एम0 डी0 के अनुसार मैदान क्षेत्रों में जब तापमान 40 डिग्री सेल्सियस तथा पहाड़ी क्षेत्रों में 30 डिग्री

पृथ्वी का औसत तापमान 18वीं शताब्दी के बाद से अब तक 0.6 डिग्री सेंटीग्रेड तक बढ़ गया है, जो सन् 2100 तक 9.58 डिग्री सेंटीग्रेड तक बढ़ जाने की संभावना है। पिछले 20 वर्षों में तापमान केवल मानव गतिविधियों के कारण ही बढ़ा है। अतः सहज ही समझा जा सकता है कि पृथ्वी पर सन्निकट पर्यावरणीय संकट एवं जलवायु परिवर्तन के लिए अगर कोई दोषी है तो वह केवल मानव ही है।

सेल्सियस पहुँच जाए तब गर्म लहर (हीट वेव) की स्थिति होती है।

(क) जब किसी स्टेशन का सामान्य अधिकतम तापमान 40 डिग्री सेल्सियस से कम या बराबर होता है

(1) हीट वेव - यह स्थिति सामान्य तापमान से 5 डिग्री सेल्सियस से 6 डिग्री सेल्सियस तक होता है।

(2) तीव्र हीट वेव- यह स्थिति सामान्य तापमान से 7 डिग्री या उससे अधिक होता है-

(ख) जब किसी स्टेशन का सामान्य अधिकतम तापमान 40 डिग्री सेल्सियस से अधिक होता है-

(1) हीट वेव - यह स्थिति सामान्य अधिकतम तापमान से 4 डिग्री सेल्सियस अधिक होता है।

(2) तीव्र हीट वेब - यह स्थिति सामान्य तापमान से 6 डिग्री सेल्सियस या उससे अधिक होता है।

(ग) जब वास्तविक अधिकतम तापमान 45 डिग्री सेल्सियस या उससे अधिक हो तब बिना सामान्य अधिकतम तापमान को देखे हुए गर्म लहर/लू की स्थितियों को घोषित किया जाना चाहिए।

यदि वायुमंडल का तापमान 37 डिग्री सेल्सियस पर होता है तो यह मानव शरीर के लिए हानिकारक नहीं है। लेकिन जैसे ही तापमान 37 डिग्री सेल्सियस से अधिक होता है तब मानव का शरीर वायुमंडल की गर्मी प्राप्त करने लगता है। यदि आर्द्रता अधिक हो तो 37 डिग्री सेल्सियस या 38 डिग्री सेल्सियस पर ही मनुष्य गर्मी के तनाव से जुझने लगता है या विकार उत्पन्न होने लगता है।हीट वेव यानी गर्म हवाओं को "मौन आपदा" भी कहा जाता है। क्योंकि यह धीरे-धीरे विकसित होता है और देश भर में मनुष्यों को मौत के मुँह तक पहुँचाता है। जलवायु में हो रहे लगातार परिवर्त्तन के कारण वैष्विक स्तर पर गर्म लहरें बढ़ रही है। भारत में भी और विशेषकर बिहार में हर वर्ष पिछले वर्षो की तुलना में इस कहर की अधिकता को महसूस किया जा रहा है। उच्च आर्द्रता और परिणामी वायुमंडलीय स्थितियों के साथ संयुक्त चरम तापमान, गर्म मौसम में रहने वाले लोगों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं जिससे शारीरिक तनाव होते हैं, कभी-कभी मौत भी होती है। चरम और असुविधाजनक गर्म मौसम मानव और पशु स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकता है और साथ ही सामुदायिक आधारभूत संरचनाओं जैसे कि बिजली आपूर्ति, सार्वजनिक परिवहन और अन्य आवश्यक सेवाओं और आग की बढ़ती घटनाओं में बड़ी झुग्गी और ग्रामीण क्षेत्रों में बड़ी बाधा उत्पन्न होती है। बिहार राज्य में जलवायु परिवर्तन के के कारण मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव का अध्ययन प्रासंगिक है।

बिहार में गर्म-हवा की स्थितियाँ

भारत देश का बिहार राज्य पारम्परिक रूप से ही जल-मौसम संबंधी आपदाओं के लिए संवेदनषील रहा है। जहाँ एक ओर उत्तर बिहार बाढ़ प्रवल क्षेत्र है तो दक्षिण बिहार अत्यधिक सूखा-प्रवण क्षेत्र है। बिहार का उत्तरी और दक्षिणी क्षेत्र के विश्लेषण से पता चलता है कि यह क्षेत्र उच्च संवेदनशीलता तथा लोगों के अनुकूल क्षमता में कमी के कारण भारत-गंगा के मैदानों में जलवायु परिवर्त्तन के लिए अत्यधिक संवेदनशील/कमजोर है। (सहगल एटलस 2013)

मौसम संबधी परिवर्त्तन स्थितियाँ यथा अधिक गर्मी और अधिक ठंड, बाढ़, सूखा, चक्रवाती तूफान की घटनाएं बिहार राज्य में होने वाली लगातार ऐसी घटनाएं हैं जिससे राज्य का 45 प्रतिशत से अधिक भौगोलिक क्षेत्र (आर्थिक सर्वेक्षण 2014) प्रभावित होता है।

प्राचीन काल से ही बिहार में गर्म के मौसम में लू की स्थिति से दुष्परिणाम होते रहे हैं जो प्रत्येक वर्ष बढ़ ही रहे है। बिहार की राजधानी पटना के साथ-साथ सभी जगहों पर तापमान में वृद्धि हो रहे हैं जो कुछ दिनों में पारा के बढ़ने के साथ कम हो जाते हैं। वर्ष 2017 में बिहार के सभी जिलों में गरमी के मौसम में 40^{0}C से अधिक तापमान में

वृद्धि हुई थी। पश्चिमी मौसम की वजह से हालांकि अप्रैल के मध्य और मई की शुरूआत में औसत तापमान सामान्य से 4^{0}c कम हो गया था। भारतीय मौसम विभाग ने यह पाया है कि वर्ष 1901 सबसे गर्म वर्ष दर्ज किया गया था। 2017 से 2024 तक लगातार हीट वेव की अधिकता रिकार्ड की जाती रही है। 2024 में तापमान की स्थिति 420अ तक पहुंच गई। तापमान की वृद्धि से लोगों के स्वास्थ पर प्रतिकुल प्रभाव भी पड़ा बिहार राज्य के दक्षिणी भागों में और उत्तर मध्य भागों में अधिक गर्मी की संभावना रहती है।

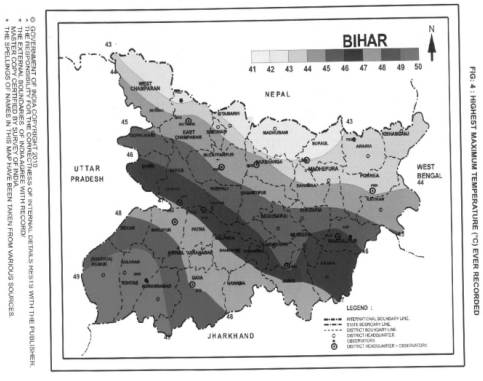

(चित्र-1 उच्चतम अधिकतम तापमान (0c) रिकॉडेड

भारत मौसम विज्ञान विभाग (आई0 एम0 डी0) गंभीर मौसम की घटनाओं के बारे में चेतावनी प्रदान करता है जिसमें वास्तविक समय के आंकड़ों के साथ गर्म तरंगों और अधिकतम तापमान का मौसम पूर्वानुमान, गर्मी-लहर चेतावनी, संवेदनशील शहरों तीव्रता और ग्रामीण क्षेत्र के लिए गर्मी-अलर्ट /शामिल हैं।

रंग कोड	हीट वेव स्थिति	तापमान
रंग कोड गंभीर स्थिति	चरम हीट चेतावनी का दिन	सामान्य अधिकतम तापमान 6 डिग्री सेल्सियस तक
ऑरेंज कलर्ट (मध्यम कंडीशन)	हीट अलर्ट है	सामान्य अधिकतम तापमान 4 से 5 डिग्री सेल्सियस तक
पीला अलर्ट (गर्मी-लहर चेतावनी)	गर्म दिन	निकटतम सामान्य अधिकतम
सफेद सामान्य	दिन सामान्य	सामान्य अधिकतम से नीचे

निष्कर्ष

सभी समाजों में चाहे वो लोकतान्त्रिक हो या सतावादी, मानव द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का मूर्खतापूर्ण व प्रलोभनपूर्ण प्रयोग किये जाने के कारण पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास होता रहा है। पर्यावरण की गिरावट की बात कर उसके संरक्षण की जिम्मेदारी से बचना अभी तक बेशक बहुत आसन रहा हो, लेकिन अब वैसा नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अब ऊँगली उठाकर पर्यावरण प्रदुषण के लिए दोषी लोगों को इंगित किया जा रहा है। पिछडे

और कम विकसित देश, विकसित औद्योगिक देशों को कह रहे हैं कि पर्यावरण प्रदुषण के लिए वो जिम्मेदार हैं, इसलिए ठीक करने का आर्थिक भार भी उन्हें ही उठाना चाहिए। वहीं विकसित देशों का यह आरोप है कि जनसँख्या वृद्धि, अविकसित रहन सहन, गरीबी आदि मूल समस्याओं के कारण पिछडे देश पर्यावरण प्रदूषण के जिम्मेदार हैं। इस विचार से यह स्पष्ट अवश्य होता है कि पर्यावरण सम्बन्धी पर्याप्त शिक्षा, सामाजिक चेतना और लोगों की सहभागिता के अभाव के कारण ही पर्यावरण प्रदूषण एक गंभीर समस्या बनी है। वस्तुतः पर्यावरण के विषय में सामाजिक चेतना या जागरूकता लाने की अब और भी ज्यादा जरुरत है।

बिहार के संदर्भ में, अत्यधिक गर्मी के प्रभाव को कम करने के लिए न केवल एक बड़ी और जरूरी आवश्यकता है, बल्कि तापमान के बदलते मानदंडों तथा हमारी सभी योजनाओं और निगरानी प्रणालियों के अनुकूल भी हो सकता है। सीखने और अपनाने के लिए कई राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय उदाहरण हैं। इस तरह की योजनाओं ने आमतौर पर नियोजन, सहयोग तथा विभिन्न स्तरों पर सहयोग दिया है और वास्तविक कार्यान्वयन, वास्तविक समय की निगरानी और पूर्व चेतावनी प्रणाली (ई0 डब्ल्यू0 एस0) और जन शिक्षा निवारक और अनुकूली व्यवहार पर जोर दिया है। इन्हें आगे और पूर्व में विभाजित किया जा सकता है, प्रत्येक अवधि के साथ छोटे और मध्यम अवधि वाले रणनीतियों के प्रभाव को कम करने और लंबी अवधि की रणनीतियों को बदलने और अनुकूलित करने के लिए। बिहार में गर्मी के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने के लिए तैयारी, शमन और प्रतिक्रिया गतिविधियों के क्रियान्वयन, समन्वय और मूल्यांकन के लिए व्यापक ढांचा प्रदान किया जाना चाहिए। हीट वेव स्थिति को जानने के लिए, गर्मी से जुड़े रोग और मृत्यु के प्रभाव का आकलन करना उनकी प्रवृत्तियों की जांच करना, जो गर्मी संबंधित मृत्यु दर और रोगों के कारण होता है।

सन्दर्भ सूची

- ए मार्शल, 2002, प्रकृति की एकता, मार्शल के पर्यावरण नैतिकता इम्पीरियल कॉलेज प्रेस लंदन).
- Sahu, Anmol,24th April 2016 posted on social network
- पर्यावरण की अंतरराष्ट्रीय चिन्ताएं, वीरेन्द्र पैन्यूली , नवभारत टाइमए , 7th March 1990
- प्रकाश, इंदु, 1994, 'डिजास्टर मैनेजमेंट (Disaster Management), राष्ट्र प्रहरी प्रकाशन, गाजियाबाद (यू०पी०)
- सिंह, सविन्द्र, 2016, आपदा प्रबंधन, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।
- पर्यावरण प्रबंध, IGNOU, FST-1 Unit 4
- मानव पर्यावरण , IGNOU
- मानव एवं आर्थिक भूगोल NCERT ,1978
- योजना , 1995 वंदना शिवा प्राध्यापक बलिया
- अवस्थी, डॉ0, विकास प्रशासन
- अवस्थी एवं अवस्थी, डॉ0, भारत में लोक प्रशासन
- Bajpai,P.K.,Peoples Participation in Development : Acritical analysis,Published in IIPA,New Delhi,Oct/Dec. 1998,P.815, vol. XLIV,no. 4
- Planning Commision report
- Verma,R.K.,Environmental Administration in India(A Study with Special Reference to Pollution Control Borads),Vol. XV.No.2,July-Dec.2018,P.148-159.
- Dubhashi,P.R;Administrator and the Citizen
- सिंह, सविन्द्र, भारत में विकास प्रशासन New Academic Publishing co.,1996
- भारतीय मौसम विभाग, पटना, बिहा
- विश्व मौसम विज्ञान संगठन (WMO)
- बिहार राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण बिहार ,पटना
- आई0 एम0 डी0 भारतीय मौसम विभाग (IMD)
- आर्थिक सर्वेक्षण 2014
- सहगल एटलस 2013
- International Journal of Environmental Research, Article Heat Wave Vulnerability Mapping for India ,Gulrez Azhar 1,2,*, Shubhayu Saha 3, Partha Ganguly 4,5, Dileep Mavalankar 4,5 and Jaime Madrigano 1
- Parry, M.L. Climate Change 2007-Impacts, Adaptation and Vulnerability: Working Group II Contribution to the Fourth Assessment Report of the Ipcc; Cambridge University Press: Cambridge, UK, 2007; Volume 4.

GAMIFICATION

An effective tool for learning

Gamification is used in the educational portal Duolingo. On this website, people can learn languages by practicing and having fun. In order to keep motivated during the learning process, students can level up, collect points, and compete with others.

Dr. Sweta
Assistant Professor
Dept. of Labour &
Social Welfare
A.N. College, Patna

Abstract : To obtain better result from any Learning & Development program, especially for the working professionals, is 'engagement'. The more they are engaged, faster the growth can be seen. Despite participating in the above said programs, desired result cannot be seen from the employees, may be because somewhere they are not properly engaged. The reason behind such disengagement could be lack of interest or monotony in such kind of programs.

Therefore, such training methodology should be preferred which tend to increase the appeal of learning processes, innovation, fun, productivity and the most important, the ability to retain knowledge as well as acquire new skills. 'Gamification' is the tool being used in the business industry and is capable enough to engage employees into achieving organizational goals, as well as incentivize customers to use their products. This technique comprises of using thought and game techniques in non-entertainment settings, such as education or work. It is basically based on people's behavioural patterns that can directly impact people's decisions. Gamification offers the opportunity for learners to engage with content in an effective, informal learning environment and if learners get excited about learning, they will be engaged and such scenario is likely to retain information for a longer period of time. This article focuses on the benefits and effective implementation of this tool in the learning & teaching process.

Keyword : Gamification, Learning, Development, Google Classroom.

Introduction:

Technology inherently drives learning and the development of curriculum in our modern environment. Today's teachers are using more and more cutting-edge digital tools and ideas in their lessons to get better results from their students. One of these

tools, gamification for learning, is becoming more and more popular among educators worldwide. Nick Pelling, computer programmer and investigative writer, coined the term "gamification" in 2002.The use of gamified components has the potential to enhance student engagement and collaboration, leading to more effective learning outcomes. It is the process of using game techniques to enhance and personalize learning for each learner. Because games foster the development of lifelong skills like problem-solving, critical thinking, social awareness, cooperation, and collaboration, therefore it can be used as the most influential tool for learning.

The psychology of gamification examines how users behave in gamified environments and its main focus is on using the gaming techniques to comprehend and affect people's behaviour. Research has demonstrated that the brain responds favourably to gamification and that it causes dopamine to be released, which increases gamers' motivation and enjoyment. Let us understand the connection between the two:

1. Gamification Fosters Emotional Bonds Between Individuals :

Emotions are an effective learning tool. They can aid in the more efficient encoding and retrieval of information, which will greatly improve learning efficiency. Additionally, it can help students and the topic develop an emotional bond. The people's attention is extensively influenced by this process, which increases their openness to learning.

2. The Hippocampus Regulates Recall :

The area of the brain that regulates much of the information that can be remember or recall is called the hippocampus. Therefore, it should come as no surprise that gamification improves students' retention of what they have learnt in class. This process activates the hippocampus, facilitating the retention of novel information in long-term memory.

3. The Brain Processes Stories Easier Than Facts :

Stories are processed by the brain more efficiently than a list of facts. Also, storytelling is a great method to introduce new material to kids/students and this approach frequently incorporate narrative components including backdrop, characters, plot twists, and more gaming techniques for learning.

Analysis & Discussion :

Gamification is the process of using game elements in a non-game context. It has many advantages over traditional learning approaches, including :

- Increasing learner motivation levels
- Improving knowledge retention
- Better learner engagement through social mechanisms like badges, points, or leaderboards

Gamification is a technique used in education to make learning interesting and fun. Many organizations and educational institutes are implementing this technique to boost the learning environment among learners. The importance of gamification in eLearning is that it offers uniqueness to learning and creates engagement with learners who like to study more. A recent study by Markets and Markets states that the market of gamification size in 2020 has a global value of 9.1 billion and is predicted to grow by reaching $30.7 billion, reaching $30.7 billion by 2025. Gamification creates an informal setting where a learner can explore the topic that will build up in opening their mind. gamification market growth.

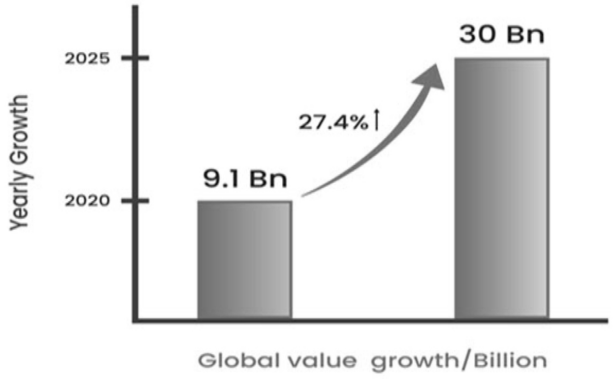

Fig1: Incresing trend of gamification

Source: Challenges of Gamification in Education, Troy Huseman

As an educator, one of our ongoing challenges is drawing and maintaining the students' attention, motivation, and interest in the learning process. Traditional teaching techniques might not be enough in today's fast-paced digital environment to keep our students updated and motivated. Therefore we teachers have been continuously investigating creative ways to make learning more engaging, dynamic, and pleasurable and gamification is one such strategy that has become extremely popular in recent years. We can make the classroom more dynamic and interesting by adding components like points, badges, levels, and leaderboards to the learning process. This will encourage students to actively participate, work together, and continuously strive for better.

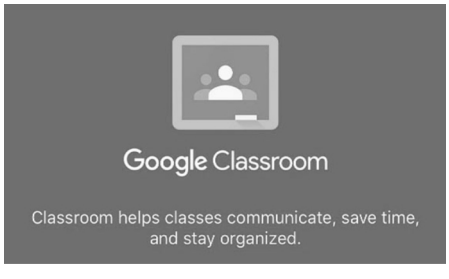

One of the most useful tools in the Google Workspace for Education is Google Classroom, which is a great way to incorporate gamification into our online and hybrid learning settings.

Gamifying Google Classroom could

encourage student engagement and reignite their passion for learning. The Google Classroom may be made more engaging for students by using the following apps, which will also help them learn a lot:

Classcraft : Classroom is integrated with Classcraft, an engagement management system. It converts student progress into a game with levels and rewards that teachers can choose or personalize. Additionally, teachers can customize pre-existing lessons into student-driven, self-paced experiences, Character customization, gamified classroom management, and parent-only features are all included in the free basic plan.

Book Widget : More than 40 free templates are available from BookWidgets to help educators build engaging lessons for their students. There are templates for productivity, games, assessments, and more.The BookWidgets plug-in for Chrome makes it simple to integrate with Classroom.

Quizziz : Teachers can use pre-made quizzes on Quizziz or make their own. Students can use homework mode on their own from any device, while live mode can be used in class. Additionally, students can engage in solitary gaming with others all across the world. Quizziz monitors student progress, allowing teachers to utilize the data to identify areas in need of intervention and remediation.

Kahoot : Kahoot is an additional free game-based learning resource for Google Classroom. With Kahoot, educators can design multiple-choice questions that students may play as an engaging, interactive game. Any device can be used by students to respond to the questions. Kahoot can be played in class as a group, or teachers can assign a Kahoot as a homework assignment. There is a Kahoot extension for Chrome, and Kahoot challenges can be shared through Google Classroom.

Typing Scout. Typing Scout is a free platform for students where they can learn keyboarding skills through games. Content can be pushed to Google Classroom through the Share to Classroom Extension.

Prodigy Math. Prodigy Math is a free math game for students in grades K-8 which can can be adapted to fit specific needs. It includes a diagnostic test, embedded assessments, and differentiated instruction. Prodigy Math is integrated with Google Classroom, and there is also an app for Chrome.

Despite some of the challenges of gamification in education, the above discussed tools can be very helpful both for the students and the teachers. The challenges that needs to be focussed upon by the educators are mentioned below:

1. **Insufficient Knowledge of the Gamification Idea:** The first issue that comes up is lack of comprehension regarding the notion of gamification. Before determining whether it is a good or not, it is crucial to comprehend the notion.
2. **Excessive Focus on Penalties and Rewards:** To draw the attention of the candidates towards gamification there should not be the provision of penalty or rewards as it may divert the learner's attention from the primary goal. If rewards and punishments are overemphasized, the learner may get disengaged from the primary goal of learning.
3. **The curriculum does not incorporate gamification :** There isn't a single template or design that works for all eLearning ideas. It is necessary to modify the design to meet the demands and suitability of each learner. The difficulty lies in the curriculum's

inability to incorporate gamification.

4. Resistivity of accepting new ideas : Since children's game playing is at its height right now, it can be challenging to convince parents and teachers about the advantages of game-based e-learning. It is challenging to eradicate the stigma attached to play and games, particularly in educational settings where accountability and results are required.

Using technology in an advanced and upgraded manner helps increase student engagement and motivation, which will surely support effective learning. Some examples where these techniques have been implemented are mentioned below:

Khan Academy : A non-profit organization focused on Next-Generation education, that offers its students entirely free online education. It frequently makes use of gamification techniques to help with progress and achievement measurement and to give students a competitive edge through leaderboards, badges, and other features.

Quizlet : Recently, Quizlet has gained popularity as a platform for creating short, efficient gamified quizzes on study content. When utilizing Quizlet, students typically learn faster and with greater interest than when using conventional flash-card-based methods.

Duolingo : Gamification is used in the educational portal Duolingo. On this website, people can learn languages by practicing and having fun. In order to keep motivated during the learning process, students can level up, collect points, and compete with others.

Teachers, parents, and even students generally believe that it is being talked about games when the term gamification is used. But they need to understand that, to make learning more interactive and engaging it's crucial to introduce kids to gamification.

Conclusion : We are at a time where both children and adults spend hours at a time on games. There is evidence that this may have led to changes in the brain functions. Adopting gamification in education to a certain extent may be a healthy initiative to modernize education to go hand in hand with the new digital era. This process has massive unfolding potential, if used in a proper manner. Use of Gamification may include giving rewards (points, badges), showcasing achievement of individuals (levels, progress bars). As of now, it is not just limited to the corporates but has become a powerful instructional method in K-12 education, as well as top colleges and universities.

This is why it can be considered as one of the most successful techniques in online education as well and also a fast-growing trend in eLearning.

References:

- Kasper Welbers, Elly A Konijn, Britta C Brugman, (2019) 'Gamification as a tool for engaging student learning: A field experiment with a gamified app' SAGE Journals https://doi.org/10.1177/2042753018818342
- Barata G, Gama S, Jorge J, et al. (2015) Gamification for smarter learning: tales from the trenches. Smart Learning Environments 2(10): 1–23.
- Michael Sailer a, Jan Ulrich Hense b, Sarah Katharina Mayr a, Heinz Mandl (2017), How gamification motivates: An experimental study of the effects of specific game design elements on psychological need satisfaction.
- Hense, M. Klevers, M. Sailer, T. Horenburg, H. Mandl, W. Günthner (2014), Using gamification to enhance staff motivation in logistics
- Mario Buljan, (2001) Article on Gamification for Learning, (Blog post)) [Accessed on 21.05.2024]
- Troy Huseman (2023), Challenges of Gamification in Education (Blog post) [Accessed on 21.05.2024]

Coalition Politics and its Implications for Women's Empowerment in India and Bihar

Dr. Richa Gautam
Assistant Professor
Dept. of Political Science
A.N. College, Patna

Women empowerment includes the process through which women identify and expand their capabilities in circumstances where they were previously marginalised. In politics, which historically excluded women, their involvement has seen a notable increase in recent decades.

Abstract : The paper delves into India's evolving political landscape, marked by the dominance of coalition politics, driven by the proliferation of political parties and fragmented election outcomes. This transformation has opened avenues for marginalised groups, particularly women, to engage in politics, catalysing their empowerment. Analysing the impact of coalition politics on women's empowerment, the study focuses on Bihar, examining women's political participation both nationally and at the state level. It is divided into four sections: (1) tracing the evolution of coalition politics in India, (2) analysing the rise of backward caste assertion and its influence on coalition politics, (3) exploring women's empowerment within the political realm amidst the coalition era, and (4) drawing conclusions and identifying future research directions. The findings highlight the significant role of coalition politics in enhancing women's participation but highlight persisting challenges in ensuring meaningful empowerment and representation.

Key words : Bihar, Coalition politics, Coalition government, Women Empowerment.

Introduction

The formation of coalition governments has become inevitable in India's political landscape, driven by the unchecked proliferation of political parties and fragmented election outcomes. This proliferation has opened avenues for various societal sections, previously uninvolved or lacking political aspirations, to engage in politics, thereby empowering marginalised groups, especially women. The coalition era not only has enabled women's political participation but also integrated them into decision-making bodies. This assertion is supported by the growing number of women participating as voters and being elected to legislative bodies. This paper seeks to analyse how coalition governments have empowered marginalised sections, including women, both nationally and particularly in Bihar. Here, women's empowerment is assessed through their involvement in politics, examining the general Indian context and Bihar specifically.

The paper is divided into four sections. The first section discusses the evolution of coalition politics in India, while the second section focuses on the rise of backward caste assertion and its impact on coalition politics in Bihar. The third section explores the concept of women's empowerment and their role in politics and governance within the framework of coalition politics in India. Finally, the fourth section presents conclusions drawn from the analysis and identifies potential areas for future research.

Evolution of Coalition Politics in India

India has transitioned into an era of coalition politics, both at the state and central levels. The diverse composition of Indian society, encompassing various castes, cultures, religions, regions, and languages, has fueled the emergence of different facets of coalition politics. Contrary to popular belief, coalition governments are often a consequence, rather than a cause, of political unrest. When dissatisfaction with single-party rule arises and the ruling party fails to meet evolving societal needs, voters seek alternatives. Some parties splinter, forming new political entities that offer a different approach to governance, thus making coalitions inevitable.

The emergence of coalition politics can also be attributed to fundamental societal changes. Socio-cultural and economic divisions lead to varied needs and interests among the populace, making it challenging for a single party to address them all. This results in the proliferation of smaller parties and fragmented electoral outcomes, necessitating coalition formations.

Coalitions in India generally fall into four categories:

1. Dominant party coalitions, where a single party holds significant sway and can withstand the exit of smaller coalition partners without jeopardising the government's stability.
2. Equal partner coalitions, observed in states like Kerala, where socio-economic forces are evenly split between major parties.
3. United front coalitions, formed by like-minded parties to counter a common adversary, such as the non-Congress governments in various states post the 1967 elections.
4. National governments formed to address national crises, as exemplified by Churchill's government in Britain during World War II, or Atal Bihari Vajpayee's proposal for a national government including the Congress to overcome post-1989 election deadlock in India.

Scholarly literature categorises the evolution of Indian politics into three phases:

1. The initial phase (1947-1967), characterised by a single-party dominated system, primarily led by the Congress.
2. The second phase (1967-1989), marked by the emergence of anti-Congress alliances at the state level and the decline of Congress dominance.
3. The third phase (1989 onwards), witnessing the rise of coalition politics, fueled by the expansion of representation for marginalised groups such as OBCs, Dalits, and women, as well as regional identity groups.

The rise of coalition politics is intertwined with the empowerment of socially marginalized groups and the decline of Congress hegemony. Leaders from agrarian backgrounds, like Yadavs, Kurmis, and Jats, capitalized on regional issues and

campaigned for agrarian reform, gradually elevating themselves to national-level prominence through different regional parties. Initiatives like the Mandal Commission's recommendations for OBC reservations further reshaped the political landscape, providing space for the proliferation of political parties representing these empowered identity groups. Additionally, the decline of Congress strengthened regional parties, enhancing their bargaining power and making them significant coalition partners.

Assertion of Backward Caste and Coalition Politics in Bihar

The abolition of the zamindari system and land reforms played a pivotal role in reshaping Bihar's political landscape, and provided political opportunities for other backward castes. The Mandal Commission further supported the political aspirations of disadvantaged sections, leading to a proliferation of political parties and empowering marginalised groups. But, recent elections have witnessed a surge in women's participation, with women emerging as key swing voters. However, assessing the meaningfulness of women's political participation requires consideration of caste, class, and demographic differences. Socio-economic disparities play a crucial role in determining the extent to which women can assert themselves politically. While women's increased participation in Bihar is evident in several aspects, including voting patterns and decision-making processes, their agency remains constrained. Women's voting patterns reflect diverse socio-economic backgrounds, with differences observed between urban affluent and rural poor women. While some women may act as token candidates, their agency is often limited, with political decisions influenced by familial and societal pressures. The gender gap in political decision-making persists, with women often marginalised within political parties, hindering their ability to effect significant change, particularly in combating violence against women. Despite an increase in women legislators in Bihar, their ability to influence decision-making within political parties remains constrained by systemic barriers. While political parties may nominally support women candidates, genuine reform in favor of women's participation is hindered by entrenched structures and practices.

Coalition Politics and Women Empowerment

Women empowerment includes the process through which women identify and expand their capabilities in circumstances where they were previously marginalised. In politics, which historically excluded women, their involvement has seen a notable increase in recent decades. Empowerment entails active participation in decision-making, equal opportunities, economic autonomy, and the right to voice opinions. Participation in the decision-making process, both as voters and as elected representatives, is crucial for women's empowerment. However, the representation of women in political positions remains disproportionately low. In India, women constitute only 14.94% of the total Members of Lok Sabha and 14.05% of the total members of the Rajya Sabha. Despite Bihar having a high percentage of women voters, their representation in legislative bodies is minimal, with only three women Members of Parliament (Lok Sabha) out of 40 members of Lok Sabha (from Bihar) and 29 women legislators out of 243 in the Bihar Legislative Assembly. However, there is a rise in the share of women in legislative bodies, which can be attributed to an increase in the

number of women contesting elections and a rise in the number of constituencies from which they contest. Notably, states with poor development indicators, such as Rajasthan, Chhattisgarh, and Jharkhand, have higher representation of women in legislative bodies compared to Bihar. Nonetheless, Bihar's situation is not dire.

Government efforts have led to an increase in women's presence in Panchayats in the state. However, despite the growing number of women in politics, there's a perception that they often serve as proxies for male relatives, particularly in Panchayats. Furthermore, their representation remains insufficient to ensure their voices are adequately heard in the legislature. Nevertheless, improved law and order in Bihar, along with other government policies, have contributed to women's economic empowerment in the state.

Government initiatives such as 50% reservation for women in Panchayats, scholarships, dedicated women police battalions, and total prohibition on liquor and dowry have empowered women across caste and class lines (Pandey, 2023). Nonetheless, challenges persist, including deteriorating safety for women and low human development indicators. Addressing these issues is essential to ensure meaningful participation and empowerment of women in politics.

CONCLUSION

The coalition era has undoubtedly contributed to the increased presence of women in politics both in India and Bihar. This can be directly attributed to the proliferation of political parties advocating for the rights of disadvantaged sections of society, particularly women. The rise in the number of political parties has created opportunities for women to engage in politics, enhancing their participation as voters and candidates. In Bihar, improvements in law and order and government policies focused on women have encouraged women to step out of their confined domestic spheres and actively participate in public life. Consequently, there has been a notable increase in women's involvement in politics as voters and members of the legislature. However, the issue of denying agency to women in politics remains unresolved. Despite the increased political participation of women, there is still a need for further empowerment efforts.

BIBLIOGRAPHY

- Frankel, F., Rao M.S.A. (1989). Dominance and State Power in Modern India: Decline of a Social Order, Volume 2, Oxford university press.
- Kothari, Rajini (1970). Politics in India, Orient Blackswan.
- Moon, V., Omvedt G., Zelliot E.(2000).Growing Up Untouchable: A Dalit Autobiography, rowman and littlefield.
- Narain, I. (1976). State Politics in India, Meenakshi Prakashan, 1967.
- Omvedt, Gail(1994). Dalit and the Democratic Revolution: Dr. Ambedkar and the Dalit Movement in colonial India, Sage Publication.
- Pandey Aviral (2023). Explaining the U-curve Trend of Female Labour Force Participation in Bihar, Economy & Political weekly, vol 58(30). Pp. 39-48.
- Shah, G.,, Mander, h.,, Thorat, S., Deshpande, S., Baviskar, A. (2006). Untouchability in Rural India', Sage publications.
- Yadav, Y. (2009, September). Rethinking social justice. In India Seminar Issue 601 The Republic of Ideas: A Symposium of Some Concerns and Concepts Engaging our Society (pp. 77-97).
- Yadav, Y., & Palshikar, S. (2008, November). Ten theses on state politics in India. In Seminar (Vol. 591, No. 10, pp. 14-22).

Harmonizing the Hustle : Creative Solutions for Work-Life Balance Among Married Working Women

Dr. Vijyeta Kumari
Guest Faculty (Ad-Hoc)
Dept. of Sociology
A.N. College, Patna

India is a developing country where the role and position of women are passing through a transitional phase at a rapid pace as compared to the recent past. Half of the population of our country plays a significant role in the development of a family, group and society. Indian society is based on patriarchy where men are viewed as the chief providers and the role of women are primarily caretakers, from the beginning in the society women have been treated as secondary positions.

Introduction : Women constitute half of the world's population; they are an inseparable part of every society and their work at home and workplace fulfils the needs of the society and their family. Married Working Women (Here after MWW) perform their duties very proficiently at both the fronts i.e., work as well as their personal life, but sometimes their dual responsibilities are not adequately supported by the patriarchal mind set of the society (Ajeet Pathak, 2016). India is a developing country where the role and position of women are passing through a transitional phase at a rapid pace as compared to the recent past. Half of the population of our country plays a significant role in the development of a family, group and society. Indian society is based on patriarchy where men are viewed as the chief providers and the role of women are primarily caretakers, from the beginning in the society women have been treated as secondary positions. During early centuries women were engaged mostly in safeguarding their children, home and other properties while men were engaged in earning money for their spouses and children (ibid).

In the present era Work-Life Balance (Here after WLB) among MWW is an important issue and very relevant to be interrogated. Hence it became imperative to bring out the balance between work and life. Rout, Lewis, and Kagan (1999) noted that women in India face significant pressure in the morning to take care of everything for the family before leaving for work and after work. Mead (1950) argued that "without significant changes in men's family roles, married women and mothers will not be able to achieve complete equality in occupational realm".

In the recent past, WLB has become one of the main challenges faced by the social, political, economic, academic and for other disciplines. The term "work- life balance" comprises both work and personal life. In the perspective of WLB, work and family life are two sides of the same coin. As both are interrelated and dependent on each other, MWW have lots of duties in their personal as well as their-professional life.

Work and family life have been an integral part of a woman's life. Both of these factors are highly interconnected and therefore attract a lot of attention. As more and more women enter the formal labour market, it is imperative to study WLB concepts because of the interconnections. The real fact is that going out of home to work in the public domain poses all kinds of pulls and pushes upon home life which they try to enhance their WLB to be maintained at the workplace and the family(Allen et al., 2000).

In any society, working people (males and females) face multiple responsibilities and commitments, therefore, WLB has become a dominant issue for both men and women (Ajeeth Pathak, 2016). But for MWW the scenario of balancing act is different than male members as they grow up in the family and the society with multiple prejudices i.e., care responsibilities, responsibilities of household chores etc. Indian families are undergoing rapid changes due to the increased pace of urbanization and modernization.

Importance of WLB and relation between work and life and their balancing patterns:

Family life and work are inextricably linked. Work life and family life are both interdependent and need to be understood how they influence one another: Work life can either enhance or detract from family life and vice- versa also. The challenges of a MWW's family life can have a significant impact on her productivity, efficiency, and outcomes at work. Extensive and inflexible working hours; over-involvement in work and working conditions can all affect one's quality of life, causing family distress and withdrawal from parental responsibilities. In the same way, extended care-giving responsibilities and intensive involvement in family activities can negatively affect an individual's career choices, aspirations, and employment involvement, as well as their job satisfaction and intention to continue working. In the present era work-life balance(WLB) among married working women(MWW) is an important issue and very relevant to be interrogated. Hence it became imperative to bring out the balance between work and life.

Work-Life Balance:

WLB is a state of equilibrium in which the demands of both a person's job and personal life domain are equal. Over the last decade, the issue of WLB has gained visibility in international and national policy agendas. The term "work–life balance" is used in policy debates concerned with the distribution of time and effort between work and other aspects of life (C. Fagan et al, ILO). Industrialization and Globalization have played a vital role in changing status and exploring career options for women in India. The right balance is a very personal thing and can change for each person at different times of his or her lives. For some people the issue is being able to get into work or find more work rather than having too much work there is no one size fits all.

A balanced life is one where people share their energy and effort proficiently at their workplace and personal life between their multiple responsibilities. The negligence of one or more roles may create conflict. Balancing work and life by married women is a very big task and challenging. Following equation which has defined WLB in very proficient way:

"Career women +Systematic bias +Family +Social pressure"

Source: - MY LIFE IN FULL WORK, FAMILY, AND OUR FUTURE, Indra Nooyi

Indra Nooyi, the former CEO of PepsiCo, has beautifully stated this equation in her

book *MY LIFE IN FULL*. Which explained about how a woman faces work- life imbalance in her life. She has discussed about multiple factors responsible for WLB: Systematic bias (means Institutional bias), Family (demand of multiple role responsibilities at this sphere), Social pressure (emerged as multiple expectations from societal sphere) how all these are responsible for unbalanced life of the working women. A working woman integrates or cope up with work and family life and she has concluded that any community or organization could overcome the work-family conundrum by focusing on following three interrelated areas:

Paid leave,

Flexibility and predictability, and

Care (Nooyi, Indira.2022).

These three areas as 'paid leave' explain about the need during maternity and other emergencies, working place should be 'flexible and predictable' for their women employees so that they can balance their all spheres of life. 'Care work' is the need of 21st century, when people prefer to live in nuclear family and dependents of family like children, old age people, and sick people require care facilities. It has been seen in many developed countries where care work has been institutionalised.

Married women and work-life balance:

In the present era WLB among MWW is an important issue and very relevant to be interrogated. Hence it became imperative to bring out the balance between work and life. Traditionally, women were given the unpaid labour of domestic and caring duties (Crompton,1999). Therefore, a balance between work and life was achieved by the domestication of women, which was in some cases combined with their official and informal activity or traditional nature of work. Changing from traditional to the modern times where the wife/ single mother/widowed earns and runs the house, today's women are striving continuously for WLB. Most of them carry work and responsibilities at home but balancing between these two complex situations in present day life requires time management, support system, technology friendly, skill and caution etc. For married women it is difficult to do all household chores and then to enter work.

The dual responsibilities of working women are revealed by a popular saying in day-to-day life is "Kaam se lautkar Striyan kam par lautthi hai ". These lines tell a real story about the dual responsibility of Indian MWW.

Apart from age, caste, and all other elements, marital status has an enormous impact on women's employment decisions. The labour market participation of unmarried women is less restricted compared with married women (Panda, 2003). A primary survey of women in urban Delhi found that perceptions and compulsions restricted for married women's entry into the labour force (Sudarshan and Bhattacharya, 2009). Domestic workload and childcare responsibilities emerged as the main barriers preventing married women from entering the workforce. In India, unmarried women aged between 18 and 60 had a participation rate of 43per cent, as compared to just 19per cent among married women. (Afridi, et al 2018). Ganesh, (1999) explain how patrilineal norms and their practices influence normative restrictions on women's lives, including their employment. S. Kapadia, (1999) also has addressed the issue of household responsibilities being a women's job as being so

deeply ingrained in the Indian patriarchal system that it cannot be negotiated.

The best example of married women is Indira Nooyi, former CEO of PepsiCo in an Interview with Aspen Ideas Festival, David Bradley, she talked about WLB and Coping with Parental Guilt. Nooyi has shared her personal stories in that interview and revealed about missing her daughters' school events for work, tried to balance her role as mother, wife, and daughter, all while running a Fortune 500 company. This was her answer for dealing with 'mother guilt'. One of the world's most powerful women has some advice for dealing with "mommy guilt": "You just have to cope with your situation". If such a powerful married working woman could talk about this type of guilt, then it could be imagined about the normal married working women in India where a girl is being socialised from childhood to take all the household chores and care work responsibilities. In Sociological terms it is called as "Role- Conflict". When a person plays multiple roles and sometimes struggles in between all those roles at the same time they feel role conflict while prioritizing the role.

Her explanation about WLB in that interview was really heart touching because it has never been seen that male CEO of any company or other powerful male person has talked about their familial responsibility (any type of guilt) and WLB. Traditional roles of women have largely failed to evolve with the growth of the economy. Despite their integration into the labour market, women have continued to experience gender inequality–(Costagliola, 2021). Women have been prevented from re-entering the labour force in the industrial or service sectors despite their significant participation in the agricultural sector so that they could be able to work regularly as free labourers for their husband or family's prosperity. This is due to familial expectations for all the responsibilities that limit women's autonomy and mobility outside of the home, as well as gendered occupational norms also –(Costagliola, 2021). patriarchal ideas and conventional norms are challenged. This can be achieved by implementing measures such as maternity leave, domestic labour, quotas for females across industries, flexible working arrangements for women, enforcing laws protecting women from violence, and allowing men to work flexible hours as well. Once this has been achieved, women can enjoy a degree of independence and mobility that benefits the expanding economy, as well as reproductive rates, child mortality rates, and education levels (ibid). It is essential to reduce the gender gap for Indian women to re-enter in the workforce, Society needs to change its view of women's role in society to reflect the changing economic landscape. In India's economy, closing the gender gap will also result in lower fertility rates, lower child mortality and greater human capital (Sumanjeet, 2016).

Work-family balance is one of the biggest challenges for working women worldwide:

Work and family life management is a significant challenge for married working women. The challenge of balancing work and family is one of the biggest for women who work in paid jobs. Research conducted jointly by Gallup and the ILO found that respondents reported having difficulty maintaining "balance between work and family" due to inflexible working hours and unaffordable childcare. Remedies of these challenges would result in an increase in the number of people maintaining work and family requirements. Almost all countries and territories identified work-family balance as their top challenge for working women, with rare exceptions. The following indicators

were considered: as the top challenge for working women, with few exceptions:

Indicators:

Balance between work and family or home/ no time to spend with family.
Lack of Affordable Care for children or relatives.
Unfair treatment at work/abuse/harassment/discrimination.
Lack of flexible work hours/ appropriate suitable work hours.
Lack of good- paying jobs.
Unequal pay for doing similar work as men (or work of equal value).
Family members do not approve of women working.

There were eleven regions have been studied by the Gallup and ILO and seven regional parts among them were encounter with the topmost challenges as WLB indicator. Those regional parts are: Africa {Northern Africa (29 per cent), Sab Saharan Africa (18 per cent)}, Americas {Latin America and the Caribbean (20 per cent),), Northern America(16 per cent)}, Arab States (16 per cent), Asia and the Pacific (South Eastern Asia and Pacific (20 per cent), Eastern Asia(15 per cent), Southern Asia (28 per cent)}, Europe and Western Asia{ Northern, Southern and Western Europe (31 per cent), Eastern Europe(25 per cent), Central and Western Asia(15 per cent)}.

This report explains about work-family balance and how it is a major challenge for working women of worldwide? The findings of this study thus conclude that, women bear a double burden, whether it doesn't matter they are affluent and can afford domestic help or not. They balance their jobs with looking after the children and other housework.

Importance of WLB in Contemporary era:

The importance of WLB is very much relevant in contemporary era as progressively more women are getting education but after marriage they juggle between multiple roles in their family as well as work life, so that women could mitigate with dual responsibilities of roles. This highlights the current concern about WLB within society and organizations about the impact of multiple roles to balance professional women and its implications regarding work and family performance, and women's role in society. A balance in the work is necessary for long term benefits of the institutions, family, employees as well as society (Mukhtar, 2012). The following variables influencing the experience of WLB were identified while reviewing multiple the international and national literature.

a. The multiple roles performed by women (Campbell, D. J.,).
b. In Indian context, extraordinary work done by women in male dominating work i.e., unpaid, unrecognised: care work. Women are the base of economy as most care work is not captured in GDP (Jayati Ghosh, ILO, 2016).
c. Role strain experienced because of multiple roles, i.e., role conflict and role overload (Hirschmann,. J. N. 2008)
d. Organization culture and work dynamics: Organizational values supporting WLB have positive work and personal well-being consequences (Grzywacz, J. G. and et. al 2006).
e. Career orientation and career stage in which women careers need to be viewed in the context of their life course and social background (Shenoy-Packer, S. 2014).

f. Adapting to the circumstances and developing coping strategies: Women use both emotional and problem-focused coping strategies to deal with role conflict (Abraham, 2013)

Conclusion:

WLB plays an essential role in helping women live in harmony with their families, since it seeks to harmonize every aspect of life. Indian society's ability to maintain traditional practices while also maintaining the continuity of profession for married women based on their work and family structure often leads to disharmony, forcing people to seek a work-life balance. In today's work environment, workers have more professional and personal demands, so they typically have too much to do and not enough time to accomplish it all. In the context of finite work time and rising workloads, long-term solutions to work-life balance issues must also focus on helping employees work more productively.

References:

- Allen.T. D., Herst, D. E., Bruck, C. S., & Sutton, M.(2000). Consequences associated with work-to-family conflict: A review and agenda for future research. *Journal of Occupational Health Psychology, 5*(2),278.
- Buddhapriya, S. (2005).Balancing work and life: Implications for business. *Indian Journal of Industrial Relations, 41*(2), 233–247.
- Barman, B. K.(1997). Book Review: AM Shah, BS Baviskar and EA Ramaswamy (eds), Social Struc ture and Change, Vol. 2: Women in Indian Society, Sage Publica tions, New Delhi, 1996. 214 pages. Rs 265 (hb), Rs 150 (pb). *Gender, Technology and Development, 1*(3), 442–445.
- Campbell, C. S. (2000). Work/family border theory: A new theory of work/family balance. *Human Relations, 53*(6), 747–770.
- Clark, S. C. (2000). Work/family border theory: A new theory of work/family balance. *Human Relations, 53*(6), 747–770.
- Fagan, C., Lyonette, C., Smith, M., & Saldaña-Tejeda, A. (2012). *The influence of working time arrangements on work-life integration or 'balance': A review of the international evidence.*
- Hobson, B. (2013). *Worklife balance: The agency and capabilities gap.* OUP Oxford.
- Hughes, D. L., & Galinsky, E. (1994). Gender, job and family conditions, and psychological symptoms. *Psychology of Women Quarterly, 18*(2), 251–270.
- Lewis, S., Gambles, R., & Rapoport, R. (2007). The constraints of a 'work–life balance'approach: An international perspective. *The International Journal of Human Resource Management, 18*(3), 360–373.
- Powell, G. N., Greenhaus, J. H., Allen, T. D., & Johnson, R. E. (2019). Introduction to special topic forum: Advancing and expanding work-life theory from multiple perspectives. *Academy of Management Review, 44*(1), 54–71.
- Shenoy-Packer, S.(2014). *India's working women and career discourses: Society, socialization, and agency.* Lexington Books.
- Srivastava, V. (1978). *Employment of educated married women in India: Its causes and consequences.* Asia Book Corporation of Amer.
- Sumanjeet, S. (2016). The state of gender inequality in India. *Gender Studies, 15*(1), 139–157.
- Walby, S. (2003). *Gender transformations.* Routledge.
- Wayne, J. H., Butts, M. M., Casper, W. J., & Allen, T. D. (2017). In search of balance: A conceptual and empirical integration of multiple meanings of work–family balance. *Personnel Psychology, 70*(1), 167–210
- https://www.ilo.org/wcmsp5/groups/public/ed_norm/relconf/documents/meetingdocument/wcms_163642.pdf
- https://economictimes-indiatimes-com/ news/ company/ corporate&trends/61&indian&women&confident&of&earning&same&salary&as&men/articleshow/49330421-cms
- https://www.forbes.com/sites/moiraforbes/2014/07/03/power-woman-indra-nooyi-on-why-women-cant-have-it-all/?sh=1095076c36bc.

हरिशंकर परसाई
का स्तम्भ लेखन अर्थात लोक शिक्षण

डॉ. अनामिका शिल्पी
हिन्दी विभाग
ए.एन. कॉलेज, पटना

परसाई जी 'देशबंधु' के माध्म से अपने लेखकीय कर्तव्य का निर्वहन करते थे। चूँकि परसाई जी कुछ दिनों तक शिक्षक भी रहे तथा वे अपने व्यंग्य-लेखन को शिक्षक का कार्य भी मानते थे। यही कारण है कि उनके इस स्तम्भ के अध्ययन से ये ज्ञात होता है कि परसाई जी को अनेक विषयों का गूढ़ ज्ञान था।

व्यंग्य-स्तम्भ लेखन समाचार पत्रों की देन है। इस लेखन का उदेश्य पत्र को जीवंतता प्रदान करना है। इसके द्वारा संपादक समसामयिक राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक स्थिति की विसंगतियों की शाब्दिक शल्यक्रिया प्रस्तुत करना चाहते हैं। इस कार्य के लिए व्यंग्य सबसे उपर्युक्त माध्यम है। अतः विशेष शीर्षक से सामयिक विसंगतियों की शत्यक्रिया करने वाले ऐसे स्तम्भ नियमित रूप से पत्रों में प्रकाशित किए जाते हैं। अपनी पैनी दृष्टि, धारदार शैली व तत्कालीन समय की वास्तविकता को प्रस्तुत करने के कारण ये व्यंग्य-स्तम्भ लेखन शीघ्र ही लोकप्रिय भी हो जाते हैं।

स्मसामयिक संदर्भो से जुड़े रचनाकार हरिशंकर परसाई जी के साहित्य का सबसे बड़ा भाग व्यंग्य स्तंभों में समाहित है। कारण यह कि परसाई जी वर्तमानता के लेखक हैं और शाश्वत लेखन में विश्वास नहीं रखते एवं समकालीन विसंगतियों को चित्रित करने का सबसे सशक्त माध्यम स्तम्भ-लेखन ही है। साथ ही यह कम समय में पाठकों तक पहुँच जाता है तथा इसका प्रभाव तत्काल समाज पर पड़ता है। परसाई जी के स्तम्भ लेखन का प्रारंभ 1947 मे जबलपुर से प्रकाशित होने वाले 'प्रहरी' नामक साप्ताहिक पत्र से हुआ। इन्होंने समसामयिक राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, आर्थिक गतिविधियेां एवं विवादास्पद मुद्दों को अपने स्तम लेखन का आधार बनाया। अतः यह कह सकते हैं कि उनकी लेखनी से कोई भी विषय अछूता नहीं था। एक विशिष्ट स्तभ लेखनकार होने साथ ही परसाई जी उपन्यासकार, कहानीकार एवं निबंधकार भी थे।

स्तम्भ लेखन के माध्यम से परसाई जी ने अपने मन की बातों को जितना अधिक लिखा अन्य किसी ने इतने तीक्ष्ण रूप में नहीं। कोई समाज, राज्य, देश में व्याप्त विसंगति इनके नजरों से बच ना सका। स्तम्भ लेखन इनकी अपनी विधा भी। इनका पहला स्तम्भ 'नर्मदा के तट से' जिसे इन्होंने 'अधोर भैरव' नाम से लिखा था। यह स्तम्भ 1960 तक जारी रहा। 'प्रहरी' की यह सामग्री 'परसाई रचनावली' खंड 6 में प्रकाशित की गई। इसके अतिरिक्त परसाई जी ने 'परिवर्तन' में 'अरस्तु की चिटठी' 'सारिका में 'कबिड़ा खड़ा बाजार में', 'नई दुनिया' में 'सुनो भाई साधो', 'जनयुग' में 'ये माजराक्या है', 'कल्पना' में 'और अंत में', 'सारिका' में पुनः 'तुलसीदास चंदन घिसै' 'करंट' में 'माटीकहे कुम्हार से', 'देशबंधु' में 'पूछिए परसाई से', के अतिरिक्त 'उमर उजाला' में 'बरेली' से 'धर्मयुग' में 'बंबई का साप्ताहिक' से साप्ताहिक हिंदुस्तान' में दिल्ली से भी लिखते थे। प्रसिद्ध आलोचक वीरभारत तलवार लिखते हैं-''परसाई के सभी स्तंभो में कल्पना पत्रिक वाला' 'और अन्त में' स्तम्भ सबसे प्रभावशाली रहा है। साहित्य जगत की हलचलों, प्रवृत्तियों और वातावरण पर ऐसे चुटीलें व्यंग्य हिन्दी में ओर किसने लिखे हैं?''

परसाई जी अपने स्तम्भों के लिए इतने विषय क्षेत्र चुने थे, इन्हें पढ़कर आश्चर्य होता है। कितनी भी सूक्ष्म विसंगति क्यों न हो, परसाई जी की दृष्टि से ओझल नहीं हो सकती। सभी प्रकार की चालाकी परसाई जी के आगे बेबस नजर आती है। परसाई जी सर्वहारा वर्ग की वेदना से पूर्णतः जुड़े हुए थे और उनके प्रति संघर्षरत थे। इन्होंने

बुद्धिजीवियों के चरित्र को पहली बार इतनी ईमानदारी और सत्यप्रमाणों के साथ प्रस्तुत किया। यही कारण है कि इनका स्तम्भ लेखन लोक-शिक्षण का कार्यकरता है एवं समाज को उन गंभीर विसंगतियों, राजनीतिक पेंचीदगियों, सामाजिक कलुषताओं, धार्मिक बर्बरतओं और अंध राष्ट्रभक्तों की वास्तविकताओं से अवगत कराता है। अतः जितना जागरूक एवं लोकशिक्षण परसाई जी के व्यंग्य स्तम्भों ने जनता को किया शायद ही किसी अन्य ने। परसाई जी ने लेखन के उदेश्य के विषय डॉ. वीरभारत तलवार लिखते हैं-''जनता को समाज, संस्कृति और राजनीति के प्रति जागरूक और शिक्षित करने लिए परसाई जी ने साहित्यिक लेखन को अपना माध्यम बनाया।

अपने स्तंभो के माध्यम से परसाई जी भारतीय जनमानस के लिए एक योग्य अध्यापक के रूप में सामने आए। इसका सबसे सशक्त उदाहरण 'देशबंधु' में प्रकाशित 'पूछिए परसाई से' है। हिन्दी के मूर्धन्य आलोचक नामवर सिंह परसाई जी की इन्हीं विशिष्टाओं को रेखांकित करते हुए लिखते हैं-''परसाई जी ने जो काम किया है, शायद कोई अकेला एक लेखक अपने दौर के लेखकों में नही कर सका है। उन्होंने बहुत बड़े पैमाने पर पढे-लिखे समुदाय को अपने आस-पास की सच्चाई के बारे में सजग किया है, शिक्षित किया है, एक नई चेतना पैदा की है। परसाई जी सामाजिक चेतना सम्पन्न लेखक थे और बीमार व्यवस्था को अमूलचूल बदलने की बेचैनी उनमें थी। उनका सम्पूर्ण लेखन साामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक मूल्यहीनता के विरूद्ध एक रचनात्मक आंदोलन है। इस समानता और सामाजिक न्याय के संघर्ष में उन्होंने कलम को हथियार की तरह उपयोग किया। श्यामसंदर मिश्र से विस्तृत चर्चा में परसाई से पूछे गये सवाल-वर्तमान स्थिति में लेखक का दायित्व क्या है? इसका जवाब था-''लेखक का सबसे बड़ा कर्तव्य इस समय लोक-शिक्षण ही है। ये सिर्फ कहने की बात नहीं है, अपितु उनका सम्पूर्ण साहित्यक कर्म लोक-शिक्षण के लिए सदैव तत्पर रहा।

परसाई जी अपने स्तम्भ लेखन का प्रारंभ 'प्रहरी' से करते हैं। इसके उपरान्त उन्होंने अनेक प्रमुख पत्रिकाओं में स्तम्भ लेखन किया-''यों तो परसाई 'कल्पना' जैसी साहित्यिक पत्रिकाओं में भी नियमित रूप से प्रकाशित होने लगे थे, किनतु एक कॉलमिस्ट के नाते उनका नाम 'सुनो भाई साधो' के प्रकाशक के साथ ही उभरा, परन्तु इससे पूर्व 'परिवर्तन' नामक साप्ताहिक पत्र में परसाई जी को 'अरस्तु की चिट्ठी' स्तम्भ से पर्याप्त प्रसिद्धी मिल चुकी थी और स्तंभकार की कलम नई होते हुए भी तीक्ष्ण थी, जो समाज में फेले मिथ्याचारों पर जमकर प्रहार करती थी। प्रसिद्ध व्यंग्यकार रवीन्द्रनाथ त्यागी जी लिखते हैं-'' आजादी के पहले का हिंदुस्तान जानने के लिए जैसे सिर्फ प्रेमचंद पढ़ना ही काफी है, उसी तरह आजादी के बाद के भारत का पूरा दस्तावेज परसाई की रचनाओं में सुरक्षित है, जिनसे समाज में नई जागृति एवं नवीन चेतना का उदय हुआ।

'अरस्तु की चिट्ठी' नामक स्तम्भ 1957 में जबलपुर से प्रकाशित होने वाले 'परिवर्तन साप्ताहिक' में परसाई जी का यह नियमित स्तम्भ प्रकाशित हुआ। इस स्तम्भ में उन्होंने अपने युग की कटु समीक्षा करते हुए विषमताओं को उद्घाटित किया है और निर्भीकतापूर्वक उस पर अपनी राय व्यक्त की है। 'अरस्तु की चिट्ठी' अपने प्रारंभ में ही उन विद्रूपताओं की समझ रखती है, जिसमें राजनीति की सारी व्याख्या अदाकारी पर टिकी हुई दिखती है। इसके प्रत्येक स्तम्भ की शुरूआत परसाई जी अपने व्यंग्यात्मक लहजे 'आयुष्मान' से करते थे। इस स्तम्भ को पढ़ते समय पाठक को ऐसा प्रतीत होता है, जैसे अरस्तु के माध्यम से परसाई जी स्वयं ही उससे संवाद कर रहे हों और इस सहज संवाद की आत्मीयता पाठक और लेखक के मध्य विद्यमान दूरी को घटाते हुए उसे विशिष्ट रूप प्रदान करती है।

इस स्तम्भ में परसाई जी के लोक-शिक्षण का एक उदाहरण द्रष्टव्य है-अरस्तु कहते हैं-''तुम्हारे देश के चपरासी या बाबू दफ्तर का कोई छोटा-मोटा सामान काम में ले आता है, तो उसे दण्ड मिलता है। गरीब चपरासी की शादी करने के लिए बड़ी कठिनाई से तीन दिन की छुट्टी मिलती है, मगर अफसर के परिवारी की शादी में सारा मुहकमा छुट्टी पर और शादी की डयूटी पर इस प्रकार परसाई जी उस उच्च पदाधिकारी के पद के दुरूपयोग को उजागर करते हैं, जो अपने निजी कार्य के लिए अपने मातहत कर्मचारियों का उपयोग किसी वस्तु के सदृश्य करता है। निर्दोष और गरीबों को सताने की यह परंपरा रही है। तब परसाई जी कहते हैं-अब आयुष्मान देखिए-''दुनिया में हमेशा ही निर्दोष की बलि होती है। तुम्हारे यहाँ बकरे की बलि होती रही है, देवताओं की प्रसन्नता के लिए। किसी देवता की हिम्मत सिं की बलि माँगन की नहीं होती। सिंह की बलि देने का प्रयास करने पर बलि-कर्ता भक्त की ही बलि हो जाए, इसलिए मिमियाने वाले बकरे की बलि'' अतः इस स्तम्भ के माध्यम से परसाई जी साहसिक जिम्मेदारी के साथ पूंजीपति एवं शोषक वर्ग की सत्ता को डिगाने का कार्य किया। परिणाम स्वरूप सत्ता गिरने के भय से इस साप्ताहिक पत्र को दबाव डालकर बंद करा दिया गया, परन्तु परसाई जी इससे हताश नहीं हुए, अपितु

उन्होंने प्रबल साहस से दूसरा मार्ग चुन लिया।

परसाई जी की ये प्रखर सामाजिक चेतना हमें 'सुनो भई साधो' में देचाने को मिलती है। यह स्तम्भ 1961 में जबलपुर से प्रकाशित 'नई दुनिया' समाचार पत्र में लाने लगा, 'सुनो भई साधो उनका सबसे अधिक वर्षो तक चलने वाला स्तम्भ है जो जीवन पर्यत जबलपुर की नवीन दुनिया, इंदौर से प्रकाशित 'नई दुनिया' और बरेली के अमर उजाला में प्रकाशित होता रहा। इस स्तम्भ को परसाई जी ने 'कबीर' उपनाम से लिखा तथा इसमें वो साधु जनों को सम्बोधित करने वाले वक्ता 'कबीर' थे, क्योंकि परसाई जी कबीर के बखिया-उधेड़ फक्कड़पन के भक्त थे। उनका मानना था कि आज की विषम व जटिल परिस्थिति की सही व्याख्या एवं समीक्षा के लिए रचनाकार का 'बैलौस व फक्कड़' होना अनिवार्य ही है, क्योंकि उसमें हर संकटपूर्ण स्थिति का साहसपूर्वक सामना करने की शक्ति एवं संकल्प होना चाहिएख परसाई जी कहते हैं- ''कबीर के सीधे, बेलौस बखिया-उधेड़, चरबा-उतार, मस्ती और फक्कड़पन से भरे व्यंग्यों का मैं भक्त रहा हूँ। इतना ताकतवर कोई और हुआ नहीं क्योंकि और किसी ने न 'सीस काटकै मुँई धरा' न 'अपना घर फूँकिया' न 'बाजार में लिए लुकाठी खड़ा हुआ' सब ही भुलाने पेट का धन्धा। अभिप्राय यह है कि 'निज के स्वार्थ से ऊपर उठकर ही निष्पक्ष रूप से समाज की विसंगतियों को रेखाकिंत किया जा सकाता है। यह स्तम्भ इतना लोकप्रिय हुआ कि 'नई दुनिया' के इंदौर और रायपुर संस्करणों में भी छपने लगा। इस स्तम्भ के संबंध में परसाई जी लिखते हैं-''इसकी प्रभावकारी 'अपील' और विकट लोकप्रियता ने मुझे बाध्य किया कि इसे जिम्मेदारी से लिखूँ। मैं इसे लेखन के माध्यम से अपने सामाजिक दायित्व की आंशिक पूर्ति के रूप में ग्रहण करने लगा।' अतः इस स्तम्भ में परसाई जी ने तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक घटनाओं पर तीखी टिप्पणियाँ की थी। वैचारिक प्रखरता के साथ स्तम्भ की भाषा की सरतलता एवं व्यंग्य की तीक्ष्ण धार पाठकों को मुग्ध करती थी, साथ ही वैचारिक रूप से सोचने पर विवश भी करती थी।

लोक-शिक्षण की दृष्टि से एक उद्धरण देखिए-''साधो, हमारे देश का आदमी नियम मान ही नहीं सकता। वह मुक्त आत्मा है। वह सड़क के बीच चलकर प्राण दे देगा, पर बायें नहीं चलेगा। वह जानता है, आत्मा तो अमर है। सड़क दुर्घटना में केवल देह मरती है। साधो, मुझे बायां चलना बहुत गलत लगता है। संविधान में जो मौलिक अधिकार लिखे हैं, उनमें एक यही भी है कि भारतीय नागरिक भारत में कहीं भी जा सकता है। तो फिर वह बीच सड़क में क्यों नहीं चल सकता? हमें आजादी मिली है तो क्या इसलिए कि मनचाहा चल-फिर न सकें। परसाई जी आम जनों को उन नियमों से अवगत करवाते हैं, जो उनके हित में है। ऐसा नहीं है कि वो स्वतंत्रता के विरोधी हैं, परन्तु स्वतंत्रता वही अच्छी होती है, जो अनुशासनात्मक हो। स्वतंत्रता के नाम पर मूर्खता उन्हें स्वीकार्य नहीं।

इसी प्रकार 'जनयुग' में प्रकाशित स्तम्भ 'ये माजरा क्या है' को परसाई जी 'आदम' नाम से लिखा करते थे। इस स्तम्भ के विषयों का फैलाव स्थानीय से अंतरराष्ट्रीय राजनैतिक घटनाचक्र तक था। शीर्षक से ही स्पष्ट है कि परसाई जी जीवन के हर क्षेत्र की विडंबनाओं के एक प्रति गहरी दृष्टि से लिखित रहे। ये विडंबनाएँ अनेक प्रकार के अंतर्विरोधों, विद्रुपताओं, विषमताओं एवं अमानुशिकताओं के रूप में अभिव्यक्त होती हैं और ये कहीं भी हो सकते हैं। राष्टीय, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक-जीवन में भी और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी। इस प्रकार जहाँ जो भी शोषित व उत्पीड़ित है, चाहे व्यक्ति, समुदाय हो या राष्ट्र हो इन सभी के प्रति परसाई जी करूणा भाव रखते हैं। यही कारण है कि ये सब परसाई जी को इनका प्रवक्ता एवं पक्षधर ध्वजवाहक बना देती है। इस स्तम्भ के विषय में विष्णुचन्द्र शर्मा लिखते हैं- ये 'आदम' ''कभी सामयिक नेताओं, मंत्रियों और अंधराष्ट्रवादी संस्थाओं जैसे- राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, जनसंघ, हिन्दू महासभा या कालेधन के व्यापारियों, भष्ट नौकरशाहों यानी पूरी महाजनी सभ्यता पर 'आदम' एक सीधी-सी बात शुरू कर देता है और किस्सा-दर-किस्सा वह बात, कहानी, डायरी, वार्ता दंतकथा या समाचार पर कार्टून-किसी भी रूप में जनयुग के पाठकों को याद रह जाती है।

परसाई जी के स्तम्भ 'और अन्त में' 'कल्पना' पत्रिका में प्रकाशित होती थी, जो अपने साहित्यिक मूल्यों की वजह से हिन्दी पत्रकारिता में गौरवशाली स्थान रखती थी। इस स्तम्भ में मूलतः परसाई जी ने साहित्यिक व शैक्षणिक स्थितियों पर व्यंग्य किया है। कारण यह है कि साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र मे भी विद्रूपताएँ कम नहीं हैं। अतः 'और अन्त में' साहित्य व शिक्षा जग में व्याप्त विसंगतियों का आईना है। परसाई जी की पैनी नजर अपने समय की सभी महत्वपूर्ण हिन्दी साहित्यिक गतिविधियों पर थी। इनकी इस व्यंग्य दृष्टि का अनेक समकालीन साहित्यकार भी निशाना बने, इनमें विशेषरूप से फनीश्वरनाथ रेणु, जैनेन्द्र कुमार, श्रीकांत वर्मा आदि रहे। इसी प्रकार क्षणवादियों पर व्यंग्य करते हुए परसाई जी 'क्षणवाद का चक्कर' नामक स्तम्भ में लिखते हैं कि 'क्षणवादियों

को यदि किसी देवता की आवश्यकता हुई तो मैं पतंगे को कुलदेवता बनाने का सुझाव दूँगा। पतंगा हर क्षण को अलग-अलग जीता है। इस क्षण दीपक से झुलसता है और अगले क्षण भूल जाता है कि यह लौ है, जिससे अभी जला है। वह फिर से लौ से टकरता है। वह पूर्ण क्षणवादी है। हर क्षण उसी क्षण की गहराई में डूबा रहता है।

'पूछिए परसाई से' 'देशबंधु' स्तम्भ के माध्यम से परसाई जी जिज्ञासु पाठकों की सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जिज्ञासाओं का सटीक एवं प्रभावपूर्ण उत्तर देते थे। इस प्रकार परसाई जी समाधान के साथ पाठकों की सामाजिक, राजनीतिक चेतना का परिष्कार भी करते थे। यही नहीं वे सांप्रदायिक व संकीर्ण राष्ट्रवादी जनचेतना को वैज्ञानिक आधार पर खोजने का प्रयास भी करते थे। इसी क्रम में जब उनसे एक पाठक ने प्रश्न किया कि-"क्या आपको भारतीय भगवानों, संतों व नेताओं का मखौल उड़ाने में आनंद की अनुभूति होती है?" इस प्रश्न का उत्तर देते हुए परसाई जी कहते हैं-"मैं जो इन पर लिखता हूँ सो इस कारण कि जनमानस को इस संबंध में जगाऊँ। लोगों को शिक्षित करूँ और इन पाखंडियों का वास्तविक रूप उघाड़कर बताऊँ जिससे लोग इन ठगों से अपनी रक्षा कर सकें। इस प्रकार परसाई जी लोक-शिक्षण के साथ ही ऐसे लोगों की प्रवृतियों से जनमानस को परिचित भी करवाते थे।

अतः परसाई जी 'देशबंधु' के माध्म से अपने लेखकीय कर्तव्य का निर्वहन करते थे। चूँकि परसाई जी कुछ दिनों तक शिक्षक भी रहे तथा वे अपने व्यंग्य-लेखन को शिक्षक का कार्य भी मानते थे । यही कारण है कि उनके इस स्तम्भ के अध्ययन से ये ज्ञात होता है कि परसाई जी को अनेक विषयों का गूढ़ ज्ञान था। साथ ही वे व्यक्तियों, उनकी समस्याओं, देश-विदेश की सामाजिक व राजनीतिक समस्याओं पर कितनी गंभीरता से सोचते थे और कितनी स्पष्टता उसे समझा भी सकते थे। वस्तुतः उनके उत्तर गंभीर विचारों को अभिव्यक्ति प्रदान करते थे। परसाई रचनावली के संपादक मण्डल का ये मानना है कि "जितना लोक-शिक्षण इन स्तंभों ने किया है उतना शायद किसी संगठन या पार्टी ने नहीं किया। जीवन यथार्थ की सटीक, तीखी आलोचना है, जिसमें पाठक के भीतर परिवर्तन की प्रेरणा जाग्रत होती है।

निष्कर्षतः परसाई जी के स्तम्भ-लेखन का प्रथम उदेश्य ही लोक-शिक्षण था। इन्होंने जिस प्रकार के तत्कालीन समय के समाज की विसंगतियों को उजागार किया, अन्य किसी लेखक ने नहीं। इन्होंने पाठकों को न सिर्फ जागरूक किया, अपितु चेतना सम्पन्न करने के साथ ही उनकी मानवीय संवेदनाओं को भी जागृत किया, जिससे वे अपने समय के यथार्थ को स्पष्ट रूप से देख व परख कर सही निर्णय ले सकें।

1. वीरभारत तलवारः सामनाः रामविलास शर्मा की विवेचन-प्रद्धति और मार्क्सवाद तथा अन्य निंबध पृ0 194
2. पूर्ववत, पृ 190
3. साम्यः हरिशंकर परसाई पर केंद्रित विशेषांक, सं. प्र. प्रगतिशील लेखक संघ, अम्बिकापुर, संपादकः' विजय गुप्त, जुलाई 1990, एक अविस्मरणीय चरित-नायकः नामवर, पृ. 297
4. परसाई रचनावली, खण्ड छः, पृ. 428
5. आँखन देखी, पृ. 75
6. 'साम्य', हरिशंकर परसाई पर केंद्रित, एक ऑफिस नोटः रवीन्द्रनाथ त्यागी, पृ0 295
7. परसाई रचनावली, खण्ड छः, पृ. 36
8. परसाई रचनावली, खण्ड छः पृ. 41
9. संपादक कमला प्रसादः 'वसुधा' हरिशंकर परसाई विशेषांक अंक 41, जून 1998, पृ. 334
10. परसाई रचनावली, खण्ड छः पृ. 245
11. परसाई रचनावली, खण्ड छः पृ. 245-246
12. परसाई रचनावली, खण्ड पाँच पृ. 54-55
13. संपादक कमला प्रसादः आँखन देखी, अदम की राजनीतिः विष्णुचन्द्र शर्मा, पृ. 156
14. परसाई रचनावली, खण्ड तीन, पृ. 337
15. 'साम्य' हरिशंकर परसाई पर केंदित, जुलाई 1990, पूछिए परसाई सेः आशुतोष तिवारी, पृ. 298
16. परसाई रचनावली, खण्ड पाँच, भूमिका से

ADVANTAGES OF ONLINE AND OFFLINE EDUCATION SYSTEMS

Maya Jha
Research Assistant

In India, many underprivileged families lack access to computers, laptops, or even smartphones with reliable internet connections. This creates a barrier for their children, preventing them from participating in online learning altogether.

Any educational Institution are not just about academics but also about building communities. The four walls of a classroom offer an irreplaceable experience. This human connection is vital for learning. The energy of live discussions, the back-and-forth of ideas, and the ability to read body language for deeper understanding are irreplaceable. Offline learning offers set of benefits especially for school going children. It provides a dedicated space for learning, free from distractions like social media or video games.

In-person interaction with classmates and teachers is vital for social development and offline learning provides opportunities for teamwork, group discussions, and building interpersonal skills. Students can benefit from a teacher's personalized guidance, tailored to individual learning styles and needs. Offline education system incorporates more of activities, experiments, and projects that involve physical interaction with materials. This practical experience enhances understanding and retention of concepts compared to solely relying on digital resources. Excessive screen time can negatively impact a child's physical and mental health. Offline learning promotes a healthier balance between technology and physical activity. Being part of a physical classroom develops a sense of community and belonging among students which is important for social development and emotional well-being.

Online education system is a recent trend in the education sector among academicians. Development of information and communication technology these days has broadened scope for adopting an online working environment. The students feel comfort as online classes are convenient and flexible, improving the technical skills of both teachers and students. Through online technology students across the world can connect with a teacher in a single point of time.

Online education system has opened the door to a world of opportunities. The most benefitted groups are those who are unable to attend offline classes, who live in

remote locations, who work full-time and can only study at or after work, e.g. a housewife, who could not study and fulfil her dreams due to family responsibilities – online classes removed all geographical barriers, allowing them to learn from the esteemed halls of Harvard or Oxford!. This global platform empowers students everywhere, especially those who might not have had access to such prestigious institutions before. The minimum requirement for students to participate in an online course is access to a computer, the internet, and the motivation to succeed. Online classes are also super flexible, we can learn at our own pace and fit it around our busy schedule. It's a revolution in education, offering knowledge and qualifications that were once out of reach.

However, online education system can provide knowledge, but they struggle to replicate the holistic educational experience that offline education system offers. Coronavirus pandemic changed the face of the educational system all over the world including India. Unlike a regular classroom where teachers can move around and chat with students, online teaching tools can be tricky for some teachers. Many teachers resist adopting online teaching as they cannot exercise control over students. Online classes can be a struggle for teachers who are less tech-friendly. Distractions, low attendance (with sneaky proxies), and tech-savvy pranksters can disrupt the learning environment and make it tough to tell if students are actually learning. Also, technical glitch, lack of immediate support to encounter technical problems and incomplete communication are the major issues that hinder teachers to use offline teaching. Online teaching may save time only when an academician is able to possess strong technical knowledge and design systematic lesson plans. Technology plays a key role in online teaching.

In India, many underprivileged families lack access to computers, laptops, or even smartphones with reliable internet connections. This creates a barrier for their children, preventing them from participating in online learning altogether. Behavioural change can be noticed among growing children as it can limit social interaction due to increase in screen time. Online education might be less suitable for younger children who benefit more from hands-on learning.

In conclusion, offline education provides a materialistic approach and social environment essential for holistic development especially among school going children while online education offers flexibility, wider learning opportunities, and accessibility for remote areas, working class, and those seeking specific courses unavailable locally.

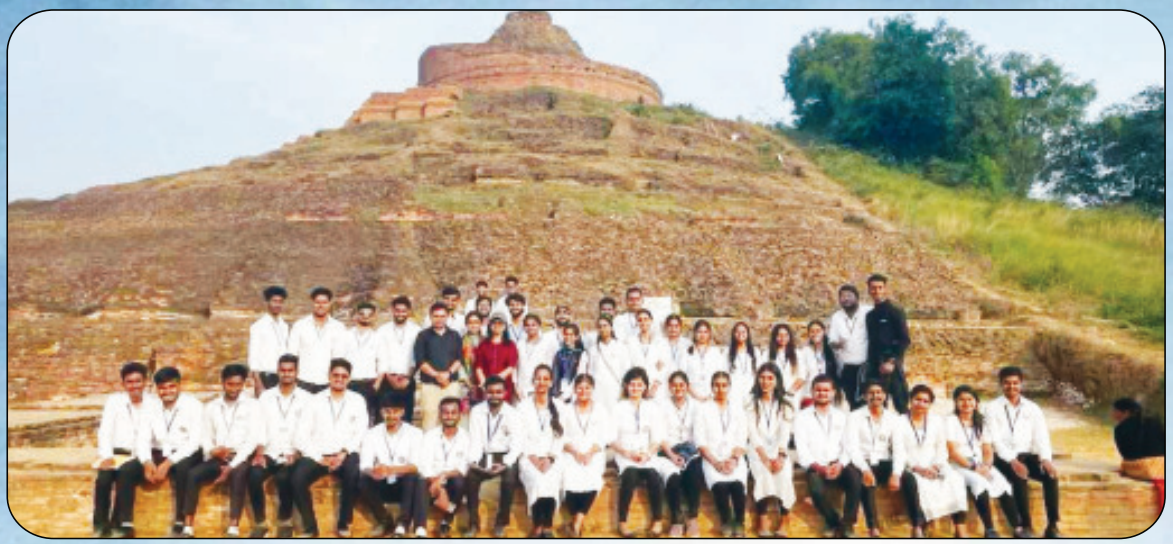

सत्येन्द्र नारायण सिन्हा सभागार

Design & Print @ Gyan Ganga Creations # 09334110685

ए.एन. कॉलेज, पटना

चतुर्थ चक्र, श्रेणी 'ए+' - राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् (नैक) द्वारा पुनर्मूल्यांकित
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) द्वारा 'विशिष्ट' महाविद्यालय के रूप में रेखांकित
पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना